"Reading maketh a full man,
Conference a ready man and
writing an exact man."
- Francis Bacon

DMV Journal

Annual Journal of Durga Mahavidyalaya, Raipur (C.G.)

Ph : 0771-2523753, Fax : 2884300,
Website : www.durgacollege.in
E-mail : info@durgacollege.in, principal@durgacollege.in

ISSN - 0976-3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

Chief Editor
Dr. S.S. Khanuja
Principal, Durga Mahavidyalaya,
Raipur (C.G.)

Author :
Dr. S.S. Khanuja
Dr. Rakesh kumar Tiwari
Dr. Smt. Madhu Kamra
Dr. Smt. Narayani Shrivastava
Dr. Smt. Protibha Mukherjee Sahukar
Dr. Kishor Kumar Patel - Smt. Prem Kumari Patel
Dr. Ajay Chandrakar
Dr. Ajay Kumar Sharma
Dr. Rajesh Shukla
Dr. Smt. Deepali Sharma
Dr. Rajendra Shukla - Prof. Ku. Meena Pinjani
Dr. Archana Gomasta
Dr. Smt. Sanjeevani Thakur
Prof. Smt. Namita Khotale - Prof. Smt. Kusum Rathor
Prof. Ravindra Singh Rajput - Prof. Smt. Vibha Dubey
Dr. Aman Jha
Dr. Ashish Dubey - Dr. V. K. Choubey
Dr. Giraja Shankar Gupta
Dr. Smt. Roshani Mishra
Dr. Smt. Nilima Sharma
Dr. Smt. Shakuntala Dulhani
Dr. Ganesh Shankar Pandey
Prof. Anand Mishra - Prof. Ramakant Mishra
Prof. Smt. Monika Patel
Prof. Smt. Yogita Lonare
Prof. Vallari Chandrakar
Prof. Vikas Vaishnav
Dr. P.C. Agrawal - Dr. Smt. Madhu Agrawal
Dr. Ajawani J. C.
Dr. R. K. Dewangan - Dr. A. Karim
Dr. Harjeet Singh Bhatia - Dr. G.D.S. Bagga
Dr. Harcharan Singh Bhatia - Smt. Anamika Tiwari
Dr. Smt. Mona Chouhan - Prof. Smt. Sweta Tiwari
Dr. Madhulika Agrawal - Prof. Mrs. Divya Shukla
Dr. H. S. Saluja- Dharmendra Singh - Dr. Ravish Soni
Dr. Sanjay Kumar Bhardwaj
Dr. Abha Shukla
Dr. Anita Rajpuria

DMV Journal

Annual Journal of Durga Mahavidyalaya, Raipur (C.G.)

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

Chief Editor
Dr. S.S. Khanuja
Principal

Editorial Board
Dr. Ajay Kumar Sharma
Dr. Rajesh Shukla
Dr. Susmita Sen
Dr. Deepali Sharma
Dr. Rajendra Shukla
Dr. V. K. Chaubey
Dr. Sanjeevani Thakur

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

The views expressed in these articles are those of the individual authours, DMV does not take responsibility for issues related to intellectual property on other matters.

Published by :
Dr. S.S. khanuja
Principal
Durga Mahavidyalaya
Raipur (C.G.)

Ph. : 0771 - 2523753
Fax : 0771 - 2884300

Website : www.durgacollege.in
E-mail : info@durgacollege.in
principal@durgacollege.in

Composing & Printed By :
Akanchha Offset
Brahmanpara, Raipur (C.G.)
Ph. : +91771 - 2545515
Mo : +91 99268 20122

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

अनुक्रम

1.	रोजगार प्रणाली में कृषि का महत्व	डॉ. एस.एस. खनूजा	05
2.	साहित्य में नारी चित्रण छायावादी काव्य के विशेष सन्दर्भ में	डॉ. राकेश कुमार तिवारी	09
3.	Locating "Lowest Stairs" in Vijay Tendulkar's, Kanyadaan : A Discourse on Dalit	Dr. Madhu Kamra	13
4.	Right to work	Dr. Smt. Narayani Shrivastava	16
5.	The Symbol and the Notion of 'Home' in Toni Morrison's Home	Dr. Protibha Mukherjee Sahukar	19
6.	बस्तर दशहरा (एक ऐतिहासिक सांस्कृतिक पर्व)	डॉ. किशोर कुमार पटेल प्रेम कुमारी पटेल	25
7.	एक आदर्श समाज व्यवस्था और जाति प्रथा के दोष डॉ. बी.आर. अम्बेडकर का राजनैतिक दर्शन	डॉ. अजय चन्द्राकर	28
8.	छत्तीसगढ़ राज्यान्तर्गत रायपुर परिक्षेत्र की आर्थिक पृष्ठभूमि – एक अध्ययन	डॉ. अजय कुमार शर्मा	36
9.	Family Mobility and the Position of Women in the Indian Family	Dr. Rajesh Shukla	41
10.	Self - multiplicative Irony in Doctor Faustus	Dr. Deepali Sharma	46
11.	निगमों का सामाजिक उत्तरदायित्व एन.टी.पी.सी. के विशेष संदर्भ में	डॉ. राजेन्द्र शुक्ल कु. मीना पिंजानी	50
12.	अरविन्द चिंतन	डॉ. अर्चना गोमास्ता	55
13.	कला संकाय के शहरी छात्रों के विभिन्न विषयों में शैक्षिक उपलब्धि पर सामाजिक समायोजन का अध्ययन	डॉ. संजीवनी ठाकुर	59
14.	शिक्षा में सम्प्रेषण का महत्व	प्रो. नमिता खोटेले प्रो. कुसुम राठौर	62
15.	Android System	Ravindra Singh Rajput Vibha Dubey	70
16.	Right to reject-is It a new beginning	Dr. Aman Jha	74
17.	भारतीय अर्थव्यवस्था पर आर्थिक सुधारों का प्रभाव	डॉ. आशीष दुबे डॉ. व्ही. के. चौबे	76
18.	भारत में वाणिज्यिक बैंक प्रणाली का विकास एक अध्ययन	डॉ. गिरजा शंकर गुप्ता	80

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

19.	स्त्री-पुरुष संबंधों के बदलते प्रतिमान	डॉ. रोशनी मिश्रा	86
20.	विजयिनी मानवता हो जाय	डॉ. नीलिमा शर्मा	89
21.	A correlational Study of Mental Health and Spiritual Intelligence	Dr. Shakuntala Dulhani	94
22.	कबीर के ज्ञानोपदेश में कवित्व	डॉ. गणेश शंकर पाण्डेय	99
23.	Risk and its Management	Prof. Anand Mishra Prof. Rama Kant Mishra	106
24.	विडियो के लिए You Tube ही क्यों ?	Prof. Monika Patel Prof. Akhilesh Patel	112
25.	Echoes of Naturalism in Yann Martel's Life of Pi	Yogita Lonare	116
26.	Technology Shift Paradigm	Vallari Chandrakar	119
27.	Cloud Computing	Vikas Vaishnav	122
28.	गिरता रुपया, चढ़ता डालर	डॉ. पी. सी. अग्रवाल डॉ. श्रीमती मधु अग्रवाल	125
29.	Stress Resilience During old age as the function of need level and spiritual intelligence	Dr. Ajawani J. C.	130
30.	वैश्वीकृत अर्थव्यवस्था में मानव संसाधन (विश्वव्यापी मंदी के विशेष संदर्भ में)	डॉ. आर. के. देवांगन डॉ. ए. करीम	137
31.	लघु उद्योगों के वित्त प्रबंधन में वाणिज्यिक बैंको का योगदान (राजनांदगांव जिले के विशेष संदर्भ में)	डॉ. हरजीत सिंह भाटिया डॉ. जी. डी. एस. बग्गा	146
32.	राज्य की अर्थव्यवस्था : प्राथमिक क्षेत्र एवं कृषि की भागीदारी (सन् 2004-05 से 2010-2011 तक)	डॉ. एच. एस. भाटिया श्रीमति अनामिका तिवारी	153
33.	बस्तर में कोसा उद्योग के विकास की संभावनाएँ	डॉ. श्रीमती मोना चौहान श्वेता तिवारी	158
34.	छत्तीसगढ़ राज्य वन-विकास निगम लिमिटेड एक अध्ययन	डॉ. मधुलिका अग्रवाल प्रो. दिव्या शुक्ला	165
35.	छ.ग. राज्य सहकारी विपणन संघ मर्या. रायपुर एक अध्ययन (धान उपार्जन के सन्दर्भ में)	डॉ. एच. पी. सिंह सलुजा	170
36.	परीक्षण-चिन्ता पर सम्मोहन चिकित्सा का प्रभाव	डॉ. संजय कुमार भारद्वाज	178
37.	Environmental Pollution and natural calamities (with special reference to Phaillin Cyclone)	Dr. Abha Shukla	182
38.	Status of Women and Children in Indian Society	Dr. Anita Rajpuria	185

DMV Journal
Annual Journal of Durga Mahavidyalaya, Raipur (C.G.)
ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

रोजगार प्रणाली में कृषि का महत्व

डॉ. एस.एस. खनूजा
प्राचार्य, दुर्गा महाविद्यालय, रायपुर

भारतीय अर्थव्यवस्था सदैव कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था रही है प्राचीन काल में भारत में विस्तृत कृषि प्रणाली थी जो ग्रामवासी को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए स्वावलंबी तथा आत्म निर्भर बनाती थी। वर्तमान में भारत की 60 प्रतिशत आबादी कृषि क्षेत्र से आजीविका प्राप्त करती है किन्तु भारत के सकल घरेलु उत्पाद में कृषि तथा उससे सम्बद्ध क्षेत्रों का योगदान घटा है। आर्थिक विकास के सिद्धान्तों के अनुसार जैसे–जैसे कोई देश आर्थिक विकास करता है तो उसके सकल घरेलु उत्पाद में सेवा क्षेत्र तथा द्वितीयक क्षेत्रों का योगदान सापेक्षिक रूप से बढ़ता है परिणाम स्वरूप कृषि तथा सम्बद्ध क्षेत्रों का योगदान घटता है। इसका कारण कृषि तथा सम्बद्ध क्षेत्र के उत्पादों का मूल्य सेवा क्षेत्र या औद्योगिक क्षेत्र से उत्पादों के कम होना है।

2010–11 के अनुमानों के अनुसार कृषि तथा सम्बद्धता क्षेत्रों का सकल राष्ट्रीय उत्पाद में योगदान 2004–05 की स्थिर कीमतों पर 14.2 प्रतिशत है। 2004–05 से 2007–08 की अवधि में कृषि तथा संबद्ध क्षेत्रों में सकल उत्पादन वर्ष 2004–05 के स्थिर कीमतों पर 565426 करोड़ रूपये से बढ़कर 655080 करोड़ रूपये हो गया। इसके बाद दो वर्षो (2008–09 से 2009–10) के लिये यह स्तर स्थिर हो गया। वर्ष 2009–10 में इस क्षेत्र का सकल राष्ट्रीय उत्पाद में योगदान 14.6 प्रतिशत था जो वर्ष 2008–09 में 15.7 प्रतिशत तथा 2004–05 में 19 प्रतिशत की तुलना में घटा था। कृषि तथा सम्बद्ध क्षेत्रों के लिए वर्ष 2009–10 में सकल राष्ट्रीय उत्पाद के 14.6 प्रतिशत भाग में कृषि क्षेत्र की भागीदारी 12.3 प्रतिशत और वानिकी क्षेत्र की भागीदारी 0.8 प्रतिशत रही।

उपरोक्त विश्लेषण भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि क्षेत्र की महत्ता को स्पष्ट करता है किन्तु कृषि क्षेत्र में रोजगार की स्थिति अत्यन्त दयनीय है। भारतीय कृषि क्षेत्र में अधिकांश कृषि रोजगार अस्थायी प्रकृति के है। वर्ष 2004–05 में कृषि मजदूरों की संख्या लगभग 8.7 करोड़ अनुमानित की गयी है, जो कुल कामगारों की 25.9 करोड़ संख्या की 34 प्रतिशत थी। कृषि कामगारों में किसान और कृषि मजदूर शामिल किये जाते है। कृषि मजदूर पूर्णतः अकुशल एवं कमजोर मानवीय पूँजी है तथा अत्यन्त गरीब है।

कृषि मजदूरों की औसत मजदूरी 2004–05 में 43 रूपये प्रतिदिन थी, जो

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

गैर–कृषि मजदूरी कृषि मजदूरी का लगभग 1.5 गुना थी। कृषि मजदूरी क्षेत्र में लिंग असमानता भी बहुत अधिक है तथा स्त्रियों की मजदूरी 1993–94 से 2004–05 तक की पुरूषों की मजदूरी की 0.70 ही रही तथा इस अनुपात में परिवर्तन के कोई संकेत नहीं मिल रहे हैं । पुरूषों की मजदूरी स्त्रियों की मजदूरी का 1.4 गुना थी। आकस्मिक कृषि मजदूरी वृद्धि दर 1990 के दशक में 1980 की दशक की तुलना में घटी है।

आकस्मिक कृषक श्रमिकों की मजदूरी

मजदूरी दर	प्रतिदिन (रूपये में)	वृद्धि दर (प्रतिशत प्रतिवर्ष)
1993–94	33.70	–
1999–00	40.0	2.9
2004–05	42.6	1.5

कृषि मजदूरी में असमानता

वर्ष	पुरूष मजदूरी पद एवं स्त्री मजदूरी दर का अनुपात	कृषि मजदूरी और गैर कृषि मजदूरी का अनुपात
1993–94	0.70	0.66
1999–00	0.71	0.62
2004–05	0.69	0.65

स्त्रोतः– राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण 2004–05

न्यूनतम मजदूरी अधिनियम 1948 के अनुसार पहली राष्ट्रीय न्यूनतम मजदूरी 66 रूपये निश्चित की गयी थी तथा इसमें ग्रामीण और शहरी आधार पर कोई अन्तर नहीं किया गया था। दूसरी न्यूनतम मजदूरी ग्राम क्षेत्रों के लिए कृषि श्रम एवं राष्ट्रीय आयोग के प्रस्ताव के आधार पर 49 रूपये निश्चित की गयी परन्तु विद्यमान मजदूरी दरें इन दोनों की तुलना में कम थी। वर्ष 2004–05 कृषि मजदूरों के लगभग 91 प्रतिशत भाग को राष्ट्रीय न्यूनतम मजदूरी से कम मजदूरी मिलती थी और ग्रामीण कृषि पर राष्ट्रीय आयोग के मापदण्ड के आधार पर 64 प्रतिशत को ग्राम क्षेत्रों में 49 रूपये से कम मजदूरी प्राप्त होती थी। असंगठित क्षेत्र के उद्यमों पर राष्ट्रीय आयोग ने रोजगार के गतिरोध के कारणों का विश्लेषण किया है जिसमें स्पष्ट किया है कि इनमें सबसे महत्वपूर्ण कारण सिंचाई पर कम निवेश, सुखे से रक्षा न कर पाना और कृषि अनुसंधान पर कम खर्च रहे जिनके कारण कृषि का विकास तथा विस्तार नहीं किया

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

जा सका जिसके कारण मजदूरी के दिन एक वर्ष में 224 से कम होकर 209 रह गए जिसने कृषि मजदूरों की वार्षिक आय और कम कर दिया।

कृषि मजदूरी के लिए एक वर्ष में मजदूरी रोजगार के लिए उपलब्ध दिनों की संख्या

वर्ष	1993–94	1999–00	2004–05
पुरूष	244	235	227
स्त्रियों	196	199	189

स्त्रोतः– राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण 2004–05

कृषि मजदूर कृषि जनसंख्या का सबसे कमजोर वर्ग है। कृषि मजदूरों को वर्ष में लगभग 200 दिनों का ही औसत रोजगार उपलब्ध हो पाता है तथा उनकी आय राष्ट्रीय औसत से कम रहती है। कृषि मजदूरों की आय इतनी कम रहती है कि वे अपने परिवार को बुनियादी आवश्यकताएँ उपलब्ध कराने में भी सफल नहीं हो पाते। कृषि रोजगार या कृषि मजदूरी क्षेत्र में राष्ट्रीय न्यूनतम मजदूरी के प्रावधानों का सामान्यतः पालन नही किया जाता। उन्हें मजदूरी के राष्ट्रीय औसत से प्रतिदिन कम मजदूरी ही प्राप्त होती है साथ ही कृषि मजदूर क्षेत्र मे किसी भी प्रकार के सामाजिक सुरक्षा प्रणाली का अभाव है जिसके कारण कृषि मजदूरों की दशा अत्यन्त दयनीय है। देश के 16.6 करोड़ किसानो में लगभग 14.3 करोड़ किसान अर्थात् 86 प्रतिशत सीमान्त एवं छोटे किसान है जिनके पास 2 हेक्टेयर से कम भूमि है जिनकी उपज इतनी कम होती है कि वे केवल अपना जीवन निर्वाह ही कर पाते है। सीमित आय तथा कमजोर आर्थिक स्थिति के कारण उन्हें अपनी उपजों को कम मूल्य पर ही बेचना पड़ता है जिसके कारण जीवन भर इन कृषकों की आर्थिक स्थित कमजोर ही रहती है। आर्थिक उदारीकरण की नीति का भी अत्यंत विपरीत प्रभाव भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था पर पड़ा है। तीव्र औद्योगिकरण एवं शहरीकरण के कारण कृषि भूमि का घटना, अनुदान में कमी, सिंचाई में पर्याप्त निवेश का अभाव, अनुसंधान में कमी, विस्तार सहायता में घटती सरकारी सहायता के कारण भारतीय कृषि व्यवस्था तथा रोजगार पर विपरीत प्रभाव पड़ा है ।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

उपरोक्त विवेचना स्पष्ट करता है कि भारतीय कृषि व्यवस्था का रोजगार क्षेत्र अत्यंत कमजोर है। भारतीय अर्थव्यवस्था का आधार कृषि व्यवस्था है, जिसमें देश की लगभग 60 प्रतिशत जनसंख्या निर्भर है। यदि कृषि क्षेत्र के समस्त अवसरों का उपयोग किया जाय तो कृषि उत्पादकता में वृद्धि तो होगी साथ ही कृषि क्षेत्र के रोजगार में भी सृदृढ़ता प्राप्त होगी अतः इस दिशा में उचित नियोजन की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ

1. राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण 2004–05
2. Stastical out line of india 2004-05
3. अरूण चतुर्वेदी, संजय लोढा – भारत में मानव अधिकार
4. भारतीय अर्थव्यवस्था – धनकर प्रकाशन
5. भारतीय अर्थशास्त्र – रूद्रदत्त एवं सुन्दरम्

■■■

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

'' साहित्य में नारी चित्रण ; छायावादी काव्य के विशेष सन्दर्भ में''

डॉ. राकेश कुमार तिवारी
अध्यक्ष हिन्दी विभाग
दुर्गामहाविद्यालय, रायपुर

नारीवाद और स्त्री अस्मिता का सवाल आज साहित्य के केन्द्र में है। विगत दो दशकों से भारतीय साहित्य 'एक नयी स्त्री चेतना' से स्फुरित है। लेकिन प्राचीन एवं मध्यकालीन साहित्य में स्त्री हाशिये पर थी। वैदिक साहित्य में नारी को जरूर सम्मान मिला पर बाद में परवर्ती रचनाओं में स्त्री को बहुत हलके रूप में चित्रित किया गया।

'मनुस्मृति' में मनु कहते हैं– 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।'' ऋग्वेद में नारी की चर्चा बहुत सम्मान के साथ हुई है। अथर्ववेद में 'समन' नामक उत्सव का वर्णन है। इसमें सुंदर युवतियों की तुलना यज्ञों की पवित्र घृत धाराओं से की गई है। वैदिक ग्रंथों के रचयिताओं ने स्त्रियों को काफी गरिमा प्रदान की।

बाद में, ब्राम्हण–ग्रंथों, उपनिषदों तथा पुराणों में स्त्रियों की स्थिति गिरती चली जाती है। पद्म पुराण में नारी को दासी के रूप में चित्रित किया गया है।[1] वैदिक युग के पश्चात् सूत्रग्रन्थों तथा महाकाव्यों में नारी पुरूष की सम्पत्ति मानी जाने लगी।[2] रामायणकाल में स्त्री की स्थिति कुछ अच्छी दीख पड़ती है। सीता के रूप में चित्रित कर कवियों ने नारी की गरिमा बढ़ायी। फिर भी, पति देवता की तरह पूज्य थे।[3] महाभारत कालीन स्त्री की दशा बहुत दयनीय दिखाई पड़ती है। महाभारत में यह भी उल्लेख आता है कि स्त्री किसी प्रकार की स्वतंत्रता की योग्य नहीं है।[4]

बौद्ध साहित्य में भी नारी को कुछ विशेष महत्व नहीं मिला। जैन धर्म ग्रंथों में औरतों के प्रति विरक्ति की भावना सामने आती है। मध्यकाल में भी स्त्री की दशा बहुत खराब रूप में चित्रित हुई है। यह वही समय था जब हिन्दी साहित्य का उद्भव हुआ। हिन्दी साहित्य के आदिकाल की रचनाओं में नारी भोग्या और साधन मार्ग की बाधा के रूप में वर्णित हुई है। भक्तिकाल में स्त्री को प्रमदा, कामिनी या माया रूपा कहकर तिरस्कार योग्य बताया गया है। तुलसीदास कहते हैं :–

''महावृष्टि चली फूटि क्यारी।
जिमि सुतन्त्र भई बिगरहिं नारी।''5

रीतिकाल के कवि तो नारी देह की बनावट व उसके नखशिख वर्णन पर ही मुग्ध रहते थे। उनकी भावना देव की इन पंक्तियों में परखी जा सकती है –

''कौन गते पुर वन नगर नारी एकै रीति।
देखत हरे विवेक कौ चित्त हरे करि प्रीति।।''

भारतेन्दु और द्विवेदीयुगीन कवियों ने नारी को सकारात्मक रूप में चित्रित किया फिर भी 'पत्नी का कार्य एकमात्र पति सेवा है'' की धारणा उनमें मौजूद रही।

फिर आता है छायावादी युग जब पहली बार स्त्री को रचनाकारों ने विशेष महत्व दिया। छायावादी कवियों की दृष्टि में नारी देवी, मां, सहचरी, प्राण इत्यादि

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

अनेक रूपों में प्रकट होकर पुरूष की प्रेरणादायिनी की भूमिका अदा करती है। डॉ. नामवर सिंह के अनुसार – ''नारी की लज्जा का चित्रण मध्ययुगीन कवियों ने भी किया था, किन्तु 'कनक–किरन के अंतराल में लुक–छिपकर चलने वाले लाज–भरे सौन्दर्य' को तो प्रसाद ने ही देखा। इसके अतिरिक्त 'कामायनी' में नारी की लज्जा का जो भव्य चित्रण हुआ है, वह सम्पूर्ण भारतीय साहित्य में अद्वितीय है। प्रसाद जी का नारी–सौन्दर्य चित्रण पंत जी की तरह भाव–प्रधान होते हुए भी कहीं अधिक मांसल है, लेकिन प्रसाद जी से भी इस विषय में आगे निराला हैं। (आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियां पृ. 20)

महाकवि जयशंकर प्रसाद कहते हैं :–

''शशिमुख पर घूंघट डाले
अंचल में दीप छिपाये
जीवन की गोधूलि में
कौतूहल से तुम आये।'' (आंसू)[6]

प्रसाद जी ने स्त्री को महाचिति कहा और उसे लीलामयी, आनंददायिनी, जगत की निर्मात्री तथा इच्छा ज्ञान और क्रियारूपिणी बताया है। वे नारी का मूल स्वरूप श्रद्धामय बताते हैं जो जीवन के सुन्दर समतल में पीयूष की धारा बनकर प्रवाहित होती है –

नारी! तुम केवल श्रद्धा हो
विश्वास रजत पग तल में।
पीयूष स्त्रोत–सी बहा करो।
जीवन के सुन्दर समतल में।।[7] (कामायनी)

प्रसाद जी की दृष्टि में जीवन की पूर्णता व संतोष के लिए स्त्री का सहयोग अति आवश्यक है। पुरूष नारी के बिना अधूरा है। ''कामायनी'' में मनु पत्नी श्रद्धा के बिना नितान्त निष्क्रिय हो जाते हैं।

'तुम अजस्त्र वर्षा सुहाग की
और स्नेह की मधु रजनी
चिर अतृप्ति जीवन यदि था तो
तुम उसमें संतोष बनी।[8] (कामायनी)

नारी के सौंदर्य का चित्रण करते समय भी छायावादी कवि की दृष्टि में उदात्त भावना उपस्थित रहती है।

नई कोंपल पर किरण माला सी,
खेलती है वह देव बाला सी।[9] (झरना)

महाकवि सुमित्रानंदन पंत का विश्वास है कि नारी को महिमा मंडित करके ही युग प्रभात को प्रकाशमान किया जा सकता है –

' प्रेम स्वर्ग हो धारा मधुर
नारी महिमा से मंडित
नारी मुख की नव–किरणों से

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

युवा प्रभात हो ज्योति।[10] (युगवाणी)

पंत जी ने स्त्री को सहचरी के रूप में चित्रित किया और विराट प्रकृति में उसके कोमल व स्निग्ध रूप की आभा देखी। उनके 'पल्लव' और 'ग्राम्या' में स्त्री के उज्जवल पक्ष उभर कर सामने आते हैं।

सूर्यकान्त त्रिपाठी ने नारी को मां, देवी के रूप में प्रतिष्ठित किया। सहधर्मिणी को सम्मान दिया। 'अनामिका' के एक गीत में उन्होंने स्त्री के प्रति प्रेम की अत्यन्त दिव्य झांकी प्रस्तुत की है :–

''आलिंगित तुम से हुई सभ्यता यह नूतन''।[11]

'तोड़ती पत्थर' रचना में कवि निराला की दलित नारी के प्रति अगाध सहानुभूति सामने आती है। 'परिमल' संग्रह की 'विधवा' शीर्षक कविता स्त्री के प्रति उनके बहुत अधिक सम्मान भाव को ही बताता है। ''सरोजस्मृति'' में पुत्री प्रेम उभरकर सामने आता है।

महादेवी वर्मा ने भी स्त्री को चारित्रिक ऊंचाई दी। उसका संबंध सीधा परमात्मा से जोड़ा। ईष्ट के प्रति समर्पित एक नारी की भावना उनकी इसएक पंक्ति से समझी जा सकती है–

''बीन भी हूं मैं तुम्हारी रागिनी भी।''

छायावादी कवि में प्रेयसी के प्रति उज्जवल भाव हैं, उसमें वासना नहीं दिखती। नेपाली की 'आशंका' कविता का यह अंश उल्लेखनीय है –

''कहीं हृदय से रूला न डाले, ये मेरे अरमान तुम्हें।
दें न कहीं अपमान जगत में, ये मेरे सम्मान तुम्हें।
कर दें कहीं न वंचित सुख से, यह छोटा–सा दान तुम्हें।

कवि बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' स्त्री को जीवन की स्वच्छ प्रेरणादायिनी बताते हैं–

'' तुम हो मंजुल–प्रतिमा, कवि उपमा की प्रियतमा।।[12] (क्वासि)

कवि बच्चन ने नारी को सृजन की अधिष्ठात्री कहा है जो विध्वंस एवं विनाश के कुविचार को पास तक नहीं आने देती। (दो चट्टानें–बच्चन)

डॉ. रामकुमार वर्मा ने स्त्री को पुरूष के हृदय की एक अनिर्वचनीय सौंदर्य से पूर्ण करने वाली देवी के रूप में चित्रित किया –

''जब प्रभा की रेख दिनकर ने
गगन के बीच खींची।
तब तुम्हीं ने भर मधुर
मुस्कान कलियां सरस सींची।
मैं करूं स्वागत तुम्हारा
भूलकर जग की प्रणाली।

छायावादी कवि का प्रेम अशरीरी है। कवि अंचल 'मेरी तुम' कविता में अपनी प्रिया को कभी ''पूजा के गीतों का पुण्य प्रताप'' कभी बरसाती शैल–शिखर का निर्झर, कभी मेघाच्छादित क्षितिज में डूबी छाया वाली संध्या, कभी आवारा आंखों का मधुर विराग, कभी सुख का वरदान, कभी अपने कवि का स्वप्न तथा कभी अपने जीवन की पावनता' इत्यादि अनेक प्रकार से संबोधित कर अपने उद्गार व्यक्त करता है।[13]

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

(वर्षान्त के बादल–अंचल)

कवि नरेन्द्र शर्मा ने प्रेयसी को इष्ट के समान महत्व प्रदान किया–

आंसुओं का अर्द्ध दे देकर, तुम्हारा नाम जपकर
मूर्तिमन में बसाकर, सुकुमारी तुमको पूजता हूं। (प्रवासी के गीत)[14]

छायावादी युग नारी स्वातन्त्रय का युग था। इसलिए युगों युगों से दलित नारी के दैन्य जीवन पर लेखनी चलाना इस युग के कवियों का प्रमुख विषय रहा है। इन्होंने स्त्री को सीमित परिधि से निकालकर एक विस्तृत धरातल पर प्रतिष्ठित किया।

संदर्भ ग्रंथ सूची,

1. पद्म पुराण – सृष्टि खण्ड ऊ. 47 श्लोक 25.
2. वास – 16 / 18
3. बाल्मीकि रामायण– बालकाण्ड पृ. 18
4. महाभारत – अनुशासिक पर्व : 45.
5. रामचरित मानस– तुलसीदास.
6. खण्ड काव्य– 'आंसू'' जयशंकर प्रसाद
7. 'कामायनी' महाकाव्य–जयशंकर प्रसाद
8. 'कामायनी' महाकाव्य–जयशंकर प्रसाद पृ. 126
9. ''झरना'' जयशंकर प्रसाद पृ. 79
10. ''युगवाणी'' –सुमित्रानंदनपंत
11. अनामिका– सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'
12. 'क्वासि' कवि बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'
13. 'वर्षान्त के बादल' कवि अंचल, पृ. 66.
14. 'प्रवासी के गीत' कवि नरेन्द्र शर्मा, पृ. 16.

DMV Journal
Annual Journal of Durga Mahavidyalaya, Raipur (C.G.)
ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

Locating "Lowest Stairs" in Vijay Tendulkar's, Kanyadaan : A Discourse on Dalit

Dr. Madhu Kamra

Dalit literature, nearly a decade old is a manifestation of cultural conflict of the socially, economically and culturally deprived groups of society. It is not "… a literature of caste but of a specific consciousness that deprives innocent individual from their basic rights of self-survival, self preservation and self expression". (Sharat Chandra Muktibodh in "What is Dalit Literature"), Prof. S.Z.H Abidi in his Keynote Address at the National conference on Dalit Literature highlighted its features as :

> Dalit Literature written by both Dalit and non- Dalit is based on the poetics of anger and suffering and aesthetics of protest. Since it is based on the doctrine of Art for Life's sake, it is more oriented more towards theme than art of technique like feminist literature (Eklavya's with Thumbs Ambiversions on Dalit Literature and Aesthetics" 2009)

Dalit Literature as a nomenclature came into existence after first Dalit Literary conference in 1958. It accepted Dalit's as marginalized community. In sixties Narayan Surve tried to represent the cause of working class through his poetry. In 1972, a group of young Marathi writers activists such as Namdeo Dhasal, Arjun Dangle etc, founded a political organization called 'Dalit Panthers' in association with the" Black Panthers" who organized the struggle for the civil rights of Afro- Americans in United States with common intent. Dalit Writing is therapeutically cathartic and is essentially related with the other markers of marginality like gender, class, geographical locations and illiteracy.

The stream of Dalit Literature has two broad categories – literature written by Dalit's like Annabhu Sathe, Baby Kamble, Shantabai Kamble, Om Prakash Valmiki and Narendra Jadhav. Non- Dalit writers like M. Swamy Margaret and Mina Gajbhiya belong to the New Dalit school whereas Tagore, Mulkraj Arand, Vijay Tendulkar, Manjula Padmanabham and Arundhati Roy are also eloquent and articulate enough to constitute serious and organized efforts. The Dalit women writers like Katti Padma Rao, Gopal Guru and Gaddar frankly maintain that all women are Dalits. With extensive and rigorous representations all over the country by regional writers, still the term 'Dalit' is looked down upon as something abhorable and contemptuous. But happily, Dalit literature is guided by the vision of humanism and therefore venture with the determination – "If winter comes, can spring be far behind". Therefore Dalit literature can safely be appreciated as a literature of awakening and social orientation. Dalit writers register their protest against their old age inhuman practices and foresee the rise of a new society based an "Vasudev Kutumbakam".

In the Post – Colonial discourse Dalit literature has evolved with a promising and constructive vision. It is now acknowledged as a method to construct the identity of Dalits. By paying heed to Socio – Psychological dynamics of human sensibility most of the Dalit writers now project "Self – affirmation" rather than "self realization" An uncompromising sense of righteousness and justice are the new echoes.

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

Vijay Tendulkar's kanyadaan associates the issue of caste oppression with class consciousness. Here Tendulkar explores the shadows of discontent and anger of a Dalit youth who in spite of his intellectual accomplishments is deprived of human dignity. Arun Athavale, the protagonist is a scavenger by caste with no faith in social justice and personal relationship. But fortunately he is sharp intellect and blessed with keen sensibility. He develops love relationship with Jyoti – an educated and sensitive girl from Brahmin community. Jyoti's father Nath Devalikar is a social idealist and had dreams of the upliftment of the Dalits. Such an ideology impressed nubile Jyoti who is now resolute to marry a Dalit. Though Nath is elated on his daughter's decision to marry Arun yet he also measures this as a fertile opportunity to establish his popularity as a radical reformer. On the other hand Seva – Jyoti's mother does not favour the decision of her daughter because for her the idea of marriage beyond caste was a matter of personal faith and trust. In this first act, caste consciousness breeds confrontation between Seva, Jyoti and Nath.

Act II projects Arun's insecurity in the family of Jyoti. His resentment is evident in his complaint –

> If you see my father's hut, you'll understand. Ten of us, big and small lived in that eight feet by ten feet. The heat of our bodies to warm us in winter. No clothes on our back, no food in our stomach, but we felt very safe. Here these damn houses of the city people they're like the bellies of sharks and crocodiles, each one is alone in them (16).

Arun asserts that his identity is much protected in the alley streets where he can naturally breathe a sense of belongingness. Here the resentment is not aimed at Jyoti but to the entire class and this horrid distaste soon assumes the proportion of absolute annihilation – “I want to set fire to the world, strangle throats, rape and kill. Drink up the blood of beasts, your high caste society” (18).

Such a show of hypersensitivity depicts Arun's helplessness shaping him into a rebellion. His self reflexive violence imparts interestingly a rare sublimity to his character –

> I behave worse than an animal. She will never forgive me I know Jyoti you are not destined for me, this truth, Jyoti. After all scavengers like us are condemned to rot in shit. But Jyoti, I love you from the heart. My love is not false Jyoti, it is true. With these hands, I hurt you … I must break them …” (42).

Compared to Arun, Jyoti is 'double' sufferer-victimized by horrors of caste discrimination and also is an easy prey to the throes of patriarchy. Gayatri Spivak in her thesis on the plight of subalterns emphatically asserts the need of 'someone' to articulate the voice of Dalit in the centre. Jyoti against the bigotry of her parents emerges as an instrument to make Arun's confidence stout and striking.

Arun's release of autobiography embodying the substance of his life leads the play to a vibrant close. Arun expresses his resentment on the idea of exhibiting his autobiography as a part of the agenda of public popularity. He wants the meeting of the press release to be organized by a Dalit and is upset by the market commodification of Dalit in the press conference under the banner of Jyoti's father. Nath divided between his responsibility towards his daughter and towards society rejects the autobiography of Arjun:

> That book is no autobiography; it is pulp fiction based on half truths. No not

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

> all dalits can be like that … they know what suffering is. They have paid a high price to be counted as human beings (60).

Nath finally identifies his blunders and realizes the futility involved in his idealism of the up-liftment of the status of Arun. His paternal self prevails over his social idealism – "I had this maniacal urge to uproot casteism and caste distinction from our society. As a result I pushed my own daughter into a sea of misery" (61).

Jyoti and Nath represent two attitudes towards 'Dalit' – one constructive, sympathetic and reformatory where the other is derogatory, apathetic and anti-social. Jyoti negates her identity as the daughter of a Brahmin and makes an open confession of her identity as the wife of a Dalit – "you know very well to whom I belong. I belong to someone who makes your clear and pure soul, impure by his touch" (66). In order to bring Arun in the mainstream, she announces emphatically her position as the wife of a scavenger. She confesses that without a comprehensive realization of humanity, it is difficult to appreciate the real human self beyond social prejudices – "Tell me, where is that beast I should drag out and destroy, where is that God, I should rouse from his sleep? Tell me … Arun is made of all these things bound together and I have accepted him as he is, because I cannot reject him (68). In Jyoti we have a therapeutical solution – "To accept the position with them [Dalit] who are marginalized is a more convincing solution to provide relief to those who are victims of the discontent of civilization.

Work Cited

Tendulkar, Vijay . Kanyadaan Trans. by Gowri Ramnarayan. New Delhi: Oxford University press, 2001.

■■■

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

RIGHT TO WORK

Dr. Smt. Narayani Shrivastava
Head of the Department Economics
Durga College, Raipur (Chhattisgarh)

- In the 1950s and 60s many social analyst predicted a coming age will be age of Leisure
- This prediction was premised on new, rapidly developing technology, its application to numerous areas of paid work activity, and a resultant reduction in hneed for abour The work week, at least in North America and other parts of the industrialized world, had declined rapidly since the early 1990s it was argued that the new microelectronic technology would lead to a rapid increase nleisure These trends were seen in early years of the industrial revolution and it bring about a better work leisure balance for working people in general.
- Howaver is snow evidence that the rediciton of the coming leisure age have not oterialised life for many people today seems to be one of stress, role overload and a lack of time for leisure. Data shows an increase in working time stress over the last ecarde Among the age growing 25-54, the great majority report feeling rushed, especially during the workweek moreover, weekends offer relatively little respite since weekend time is used for catching upon housework, shopping child care and other core giving actvities and for many some paid work activities as well.
- Clearly the objective of moving towards a society in which most citizens enjoy a balance life has not been achieved. The earlier discussions of balance focused on work verses leisure, it is now econgnisedthat family and household responsibilities also need to be taken into account. Such activities take up considerable portion of daily time use, and represent a highly significant component of people lives. Thus the struggle for life balance work, leisure, and family in a way that allows reasonable opportunities to participate in all three components of life despite living to what seems to be an increasingly hurried culture.
- The reasons why modern society has become more hurried are complex are not fully understood it maybe trends in work time and paid work activities, as well as trends in unpaid work and family obligations and condition of work place.
- Another significant change in North America and elsewhere has been the increase in women in the paid abourforce. In Canada most of the growth in female employment took place during the 1970s and 80s, and women now make up almost half of the employed workforce . Given the economic and other gains to women
- It is unlikely that the trend will be reversed. At the some time, though, this change in the composition of the workforce has greatly increased the number of hours devoted to paid work within the family unit and has added
- To the growing sense of time pressure and stress.

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

- The time stress within families is also due to time spent on unpaid work activities some what surprisingly , given the rise in household abouraivng evices, and the availability of easy to prepare foods etc. Data show that time devoted to unpaid abourin the home has increased in recent high standard of quality and cleanliness, as well as larger houses with more rooms to /clean and more appliances to maintain it also is thought to relate to the increase in consumerism an the ork and spend cycle

- Nevertheless, the greatest increase in unpaid work for women reflects increased time devoted to care giving activities , especially childcare, rather than to housework. This increase in time spent in childcare and with children studies. In every women intothe abourmarket can not use of paid childcare in many nations.

- One explanation for the increased time devoted to childcare is a change in the ideology or beliefs about parenting roles and responsibilities. That is, parents are increasingly concerned about their children's intellectual , social, and emotional developmet and consequently hey take on more active childcare oles as they seek to ensure the development of appropriate skills and talent. This approach to parenting is fined in typical of middle class families. A erveyhas suggested that family recreational activities should be conceptualized as urposive leisure Since the objective is to promote child development , and to teach skills and values, rather than simply for fun. Indeed, purposive leisure within the family can lead to stress, work, and increased feeling of time crunch for parents, even though the actvities themselves may be enjoyable and highly alused(Shaw & Dawson,2001)

- The Competing demands of paid and unpaid work mean that work family conflict is a common complain among employed population. It is also an issue that is particularly problematic for women, since women, an average, continue to do the major share of unpaid abourin the home, whether or not they are employed given their multiple roles and responsibilities, it is not surprising that women report particularly high levels of times stress and that they have little time for leisure.

- Complicating women opportunities for leisure is their tendency to subscribe to an ethic of care and to place a higher value , compared to men on the importance of family. Thus women may not feel a sense of entitlement to leisure and while women typically taken on the work f organizing and facilitating family activities and family leisure they may do this at the expense of their own personal leisure.

- Life balance, therefore, including the balance of work, family and leisure, is particularly of work, family and leisure, is particularly difficult for women to achieve, and is an issue of concern not only in terms of women quality of life, but also in terms of their health and well-being.

CONCLUSION :-

- Human Development report reflected that the true human goals of development is being neglected. The main purpose of development is not only generate the production and income, but also satisfying the basic needs

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

of the population.

- It includes not only employment but also social -needs, leisure- balance and rights to work.

REFERENCES :

1 UNPD (2000) "Human Development Report". New York.

2. Nayyar Deepak (2003) Work livelihoods and Rights" IJLE Vol-46 No. 1, PP 3-12

3. Gerry Rodgers (2000) "Decent work as a Development objective" memorial lecture at ILA conference, Jabalpur

4. ILO (1999) "Decent Work" Report of the Director general of International conference ILO office Geneva.

5. Sen Amartya (2000) "Work and Rights" International labour Review Vol-139 No. 2, PP-119-128

■■■

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

The Symbol and the Notion of 'Home' in Toni Morrison's Home

Dr. Protibha Mukherjee Sahukar

While presentation Toni Morrison with the Medal of Freedom, America's top civilian honor, in a White House ceremony, President Barack ***Obama said*** **"**Toni Morrison's prose brings us that kind of moral and emotional intensity that few writers ever attempt. From *Song of Solomon* to *Beloved*, Toni reaches us deeply, using a tone that is lyrical, precise, distinct, and inclusive. She believes that language arcs toward the place where meaning might lie". (www.whitehouse.gov/.../remarks-president-presidential-medal-freedom-ceremony)

Morrison's latest novel, *Home* can be called a kind of miniature Rosetta stone to her entire oeuvre. It recapitulates all the themes that have nurtured her fiction, from the early novels *The Bluest Eye*, *Sula* through her magnum opus, *Beloved*, and more recent though comparatively less persuasive novels like *Paradise* and *Love*. No doubt *Home* does not possess the Gothic swell of *Beloved,* or the lush surrealism of her most recent novel *A Mercy* nevertheless this deceptively quiet saga packs in all the thundering themes Morrison has explored before. There's nothing small about the story as Morrison writes unflinchingly about painful human experiences. Morrison's venerable greatness is located in her ability to animate specific stories about the black experience and simultaneously speak to all experience. *Home* is an all black novel and is taut with racial tension but the novel's theme(s) is universal.

Search for home, for a safe place to rest, to raise a family, and be part of a community occupies the heart of Morrison's body of work. The complex array of emotions within which Morrison writes represents a fragile balance between denial and assertion of selfhood and place within the community. Her characters swing within the inconsistencies and uncertainties of desire and repression, power and pandemonium, attraction and repulsion, connection and extraction. Contained by the atmosphere of indecisiveness, there lingers a measure of despair that seems to negate all hope for renewal. At times characters are unable to find and make a fully realized self and place because each has been in some way distorted by communal circumstances.

These characters acknowledge that they must search for identity by returning home to the neighborhood and to the communal experience. They do so

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

in order "to survive whole in a world where they are all … victims of something" (Bakerman60). Thus, the community (or home), for better or worse, has the power to become the site of renewal for its members. Their response to the call of communal experience determines forever their course in life, and allows them a significant measure of hope and comfort and wholeness in an otherwise alienating and lonely world of victims and victimizers.

Morrison's novels are also about the grip that time past wields over time present, the peril of love and its association to leaving and losing, the hope of redemption and transcendence, psychological violence with an engineer's meticulousness and a poet's expansiveness. All the characters carry their histories heavy on their backs, a burden that defines them and influences everything they do. The past is always with us. It can't be ignored or pushed aside because to be truly home in the present, one must confront the past.

America has had a tendency to romanticize the stability of the 50s in very much the same way that they romanticize the upheaval of the 60s. Morrison attempts to rewrite the 50s away from the preferred description. *Home* is a story about one man's desperate search for himself in a world tainted by war. It is about a soldier who is beaten by war abroad, then welcomed back by racism at home. How can a man rebuild himself when the world is carving away at his soul? Frank Money, a 24-year-old African American veteran of the Korean War take in the atrocities of the War, and then returns home after his service only to be greeted with both the institutional and casual realities of daily prejudice. Though the people in this story do not have to go through the impossible ordeals of slavery, as in *Beloved*, yet they have to endure the daily reality of prejudice, injustice and violence that that was so prevalent in the 50s. Many restaurants and restrooms in parts of the country were still segregated, and during his travels home Frank encounters violence and segregation and the lawlessness of police. He journeys home "a year after being discharged from an integrated Army into a segregated homeland" (Point of Return) scarred inside and out. He is forced to question his identity as he is derided and disparaged by the very society he fought for. A pastor who puts Frank up for a night warns him: "Listen here, you from Georgia and you been in a desegregated army and maybe you think up North is way different from down South. Don't believe it and don't count on it. Custom is just as real as law and can be just as dangerous." (*Home* 19)

All the same *Home* is a daringly hopeful story about a man struggling to reclaim his roots and his manhood. Here Morrison wrote from a man's point of

view. In fact she had never done that seriously except perhaps in *Song of Solomon*. Like *Song of Solomon*, this novel too is a journey and a reckoning. In an interview with Christopher Bollen she says,

> "What are they [men] really like? What do they really think?" My father had died shortly before, and I remember saying, "I wonder what he knew." And then I just felt relief, that, at some point, I would know, because I'd asked the right questions of him, and that it would come. And in fact it did. I'll tell you what helped: black male writers write about what's important to them or their lives, and what is important to them is the oppressor, the white man, because he's the one making life complicated. Then I noticed that black women never do that. In the '20s, they did, but I mean contemporary—and I wasn't interested in it. Suddenly if you took the gaze of the white male—or even the white female, but certainly the male—out of the world, it was freedom! You could think anything, go anywhere, imagine anything . . . There was no longer the problem of looking through the master's gaze. With that gaze, you're always reacting, proving something. So not having to do that . . . I think one of the reasons I'm so thrilled with writing is because it is an act of reading for me at the same time, which is why my revisions are so sustained. Because I'm reading it. I'm there. Intimacy is extremely important to me and I want it to be extremely important to the readers, too. (Toni Morrison - Page - *Interview Magazine*)

Morrison places the symbol and the notion of 'home' under great scrutiny. *Home* is a reverse journey, a return to an earlier place, a going back instead of forward at least on the physical level though it can just as easily be argued that Frank advances as much as he retreats. Frank's journey home is like Odysseus' returning from the Trojan War. But the story is about taking responsibility for oneself. The journey home is not simply to a physical place. It is an internal destination that Frank must uncover.

The action begins with Frank literally out of action. He returns home from the war suffering from a mysterious psychiatric ailment that in contemporary times is described as post-traumatic stress disorder, but in the 1950s had no name. He is no chocolate cream soldier of the illustrious *Arms and the Man*. He is a man in restraint in a hospital bed in Seattle, faking sleep in order to avoid yet another numbing shot of morphine. Locked up in a mental hospital by the police for an infringement he

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

cannot remember, he plans and quickly executes his escape barefoot in the dead of winter: first through the fire exit, thence to the A.M.E. Zion (*Home* 9) church. There he's given shelter by Reverend Locke who helps him on his way. His destination is Lotus, Georgia, which he's been keeping away from since it harbors hated childhood memories. What draws him back now is a letter informing him that his younger sister, Cee, (Ycidra Money) is in trouble. The letter "Come fast. She be dead if you tarry" (*Home* 8) propels him out of his paralytic misery. He sets off to find Cee, the closest person to his heart, the first person he ever felt responsible for. She is the only one who made him feel heroic, long time ago in a grassy field when they were children and she is the only one who could get him to go back to Lotus, the unforgiving, isolated, hopeless town he left for the military and planned never to see again.

Frank had enlisted in the army with two hometown friends, all of them determined to escape the provincialism and racism of their childhood. Of the three, only Frank survived to return back home. He is a man haunted by the death of his friends. He struggles to repress flashbacks to war and death that threaten his grip on reality. The memories plague him - red organs gushing out of a thin shell of skin, a severed arm tucked onto a stretcher with his now-dead friend. Only his fear for Cee keeps him heading toward Georgia. Along the way, Frank discerns a 1950s America that's violent, deeply segregated, but occasionally capable of small measures of generosity, hope, and home.

Cee too has an escape story of her own, one that went wrong in its own way. The novel does not detail her involvedness as it is vague but gross, and Morrison accomplishes this by suggesting just enough for one to fill in the disquieting particulars. In a brusque manner Morrison describes a big brother trying to get his kid sister back on her two feet, "Frank raised Cee to her feet, draped her right arm around his neck. Her head on his shoulder, her feet not even mimicking steps, she was feather-light." The story of this brother sister duo, a sort of Hansel and Gretel aspect captivated Morrison. She says:

> …. reason for *Home* is that I got very interested in the idea of when a man's relationship with a woman is pure—unsullied, not fraught. If it's his relationship with his mother or his girlfriend or his wife or his daughter, there's always another layer there. The only relationship I thought that would be minus that would be a brother and a sister. It could be masculine and protective without the baggage of sexuality. ...And his traveling back to save her would be

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

transportation with violence all around him. (Toni Morrison - Page - *Interview Magazine*)

The very notion of home torments Frank. Home never did offer much solace to him. Frank had to leave his home in Bandera County, Texas at the tender age of four, as his family was threatened by men to leave within twenty-four hours or die. As predictable as it may seem, the difference between the terms 'house' and 'home' is crucial. To every human being and a family, the term 'home' is at once universal and unquestionably specific. It is a distinctively physical place as well as a perception that we all identify with. There's something ironical about a person's constant pursuit for a new and better home. Man builds houses out of brick and wood, neighborhoods out of houses, cities out of neighborhoods, and so on. Man also build homes out of friends, family, music, literature, sports teams, political parties and any shared interest. Yet there's something inherently antagonistic, even violent about that home. People and cities are pitted against each other and mercilessly driven way from their home. Thus Frank's family wound up in Lotus "the worst place in the world, worse than any battlefield," (*Home* 83) devoid of aspiration, cramped by suffocating indifference. There his parents worked 16-hour days picking cotton and planting crops. Frank's "parents were so beat by the time they came home from work, any affection they showed was like a razor-sharp, short, and thin."(*Home* 53) They left Frank to protect Cee as best he could while managing to survive on a daily dose of their grandmother's unkindness and neglect. In a straightforward and simple tone the author writes "A mean grandmother is one of the worst things a girl could have." (*Home* 43)There his parents died young, one of lung disease, the other of a stroke. (*Home* 34)

It is here that Frank must return to rescue his ailing sister, "his original caring-for," (*Home* 35) in hopes not only of saving her, but of saving himself: "Down deep inside her lived my secret picture of myself — a strong good me."

All of Morrison's novels are ultimately about the search for a community, a family, or a home where people can feel comfortable and nurtured. But this search for home and community is fraught with peril and filled with violence. People fight to protect their homes and kill to find peace. In *The Bluest Eye* the Breedlove home is burdened by evil. *Sula* is about a woman with the audacity to leave her hometown, and then come back. *Song of Solomon* tells Milkman Dead's epic quest to understand his family and his culture. The characters of *Jazz* build new homes in a new city, and search for peace with each other. The agony of Sethe and her family in *Beloved* is legendary. As in *Beloved*, *Tar Baby* takes place almost exclusively in

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

one house where several families have come together to form a community. *Paradise* is about two homes - one a building where women can be left in peace, and the other a town were African Americans can find a haven from the outside world. In *Love* two childhood friends become enemies in search for their home and roots. *A Mercy* shows a misunderstanding created between two blood ties for searching and keeping home.

One of the lessons of *Home*, (and other Morrison novels), is accepting one's surroundings as one's true home and just being comfortable there. Toward the end of the novel, one character echoes: "Look to yourself. You free. Nothing and nobody is obliged to save you but you. Seed your own land."(*Home* 126) As Frank revisits the memories from childhood and the war that leave him questioning his sense of self, he discovers a profound courage he thought he could never possess again. Frank and Cee spend their lives searching for a home, but end up finding it right back where they started. As conventional an idea as the preservation or restoration of home may seem, Morrison audaciously demonstrates how fundamental the reinvention and rediscovery of home can be.

Works Cited

Morrison, Toni. *Home*. London: Chatto & Windus. 2012. Print. (All references are to this edition.)

Cohen, Leah Hager (May 17, 2012). "Point of Return: '*Home*,' a Novel by Toni Morrison". The New York Times. Retrieved January 3, 2013.

Bakerman, Jane S. "The Seams Can't Show: An Interview with Toni Morrison." *Black American Literature Forum*. 12.2 (1978): 56-60.Print.

Toni Morrison - Page - *Interview Magazine*
www.interviewmagazine.com/culture/toni-morrison

■■■

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

''बस्तर द ाहरा''
(एक ऐतिहासिक, सांस्कृतिक पर्व)

*डॉ. कि ाोर कुमार पटेल
विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग, दुर्गा महाविद्यालय, रायपुर
** प्रेम कुमारी पटेल
शोध छात्रा पं. र.शु.वि.वि., रायपुर

किसी भी अंचल में लोक जीवन के बीच प्रचलित आंतरिक त्यौहार व पर्व उस अंचल की सामाजिक, सांस्कृतिक व धार्मिक स्थितियों के परिचायक होते हैं। इन समस्त प्रतिमानों को सूक्ष्म दृष्टि से समझने हेतु त्यौहार व पर्व निष्पक्ष माध्यम होते हैं। बस्तर अंचल में मनाये जाने वाले विभिन्न पर्व व त्यौहार यथा छेरता, नुआखाई के आधार पर उस क्षेत्र वि ोष के आर्थिक, माटी तिहार–मिट्टी के प्रति आस्था, लक्ष्मी जगार– अपने आराध्य के प्रति समर्पण, साथ ही साथ अन्य पर्व भी सामाजिक व सांस्कृतिक स्थिति का ज्ञान कराते हैं। जबकि बस्तर में मनाया जाने वाला 75 दिवसीय द ाहरा एक ऐसा पर्व दृष्टव्य होता है जो जनजातीय व गैर जनजातीय लोगों में सामाजिक, सांस्कृतिक व धार्मिक समन्वय की भावना का पालन करते हुए सम्पन्न कराया जाता है।

बस्तर का द ाहरा पर्व 75 दिवसीय होता है तथा दे ा के अन्य स्थानों में मनाये जाने वाले विचित्र प्रकार के द ाहरा पर्वों से अधिक दीर्घकालीन है। उदाहरणार्थ मैसूर का ऐतिहासिक द ाहरा पर्व जो दस दिवसीय होता है जिसमें रथ आदि का प्रयोग न कर हाथी का प्रयोग किया जाता है। छत्तीसगढ़ अंचल के बस्तर में मनाये जाने वाले इस ऐतिहासिक व सांस्कृतिक पर्व में मैसूर द ाहरे की कुछ समानतायें व भिन्नताएं हैं।

बस्तर द ाहरे की भाुरूआत पाटजात्रा के साथ प्रारम्भ होती है। इस रस्म के तहत द ाहरे पर चलने वाले वि ाालकाय रथ निर्माण के लिए लाई गई प्रथम लकड़ी (ठुरलू खोटला) की विधि विधान से पूजा राजमहल के सामने की जाती है इस दौरान द ाहरा समिति और राज परिवार से जुड़े सदस्य भी भाामिल होते हैं। हरेली अमावस्या के साथ ही भाुरू होकर 75 दिनों तक चलने वाले द ाहरा पर्व को छत्तीसगढ़ सरकार द्वारा राज्योत्सव का दर्जा प्राप्त है। इस पर्व के तहत काछनगादी, जोगी बिठाई, रथ परिक्रमा, नि ाा जात्रा, मावली परघाव, भीतर रैनी, बाहर रैनी और मुरिया दरबार प्रमुख आकर्षण होते हैं। बस्तर द ाहरा को स्थानीय देवी देवताओं का कुम्भ कहा जाता है। मुरिया दरबार तो स्थानीय जनप्रतिनिधियों की पहली पसन्द है।

बस्तर के आदिवासियों की सामाजिक पृष्ठभूमि एक अलग रूप में दिखाई पड़ती है। इनके जीवन जीने का ढंग बिल्कुल अलग व निराला है। रियासत की उबड़–खाबड़ पथरीली

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

जमीन, उँचे–उँचे पहाड़, बंजर अथवा अनुपजाऊ भूमि, इन सभी पहलुओं में बस्तर आदिवासीयों को देखकर आ चर्य होता है कि वैज्ञानिक प्रगति व आधुनिक संसाधनों से बिल्कुल दूर रहकर अपने जीवन को इतना कष्टप्रद व्यतीत करने के बाद भी वे इतना प्र ान्नचित कैसे रहते हैं ?जबकि बस्तर की समस्त संरचनाएं उनके लिए प्रतिकूल ही सिद्ध हुई हैं।

इसी तारतम्य में बस्तर का द ाहरा पर्व बस्तर के आदिवासियों के सामाजिक जीवन, उनकी धार्मिक आस्थाओं एवं परंपराओं के अनेकानेक प्रतिबिम्बों के निर्माण का माध्यम अर्थात दर्पण सदृ य प्रतीत होता है। 75 दिवसीय द ाहरा पर्व का वह समयांतराल जिसमें विभिन्न विधि विधान संपन्न कराये जाते हैं। जिसमें रियासत के भिन्न–भिन्न क्षेत्रों से आये क्षेत्रवासियों की सामाजिक, सांस्कृतिक व धार्मिक विभिन्नताओं के द ार्न हेते हैं जो किसी क्षेत्र वि ोष में जाकर अध्ययन करने पर भी सरलता से सम्भव नहीं है।

बस्तर की प्राकृतिक सम्पदा इसे सम्पन्न बनाती है साथ ही यहाँ आस्था को भी प्रमुख स्थान प्राप्त हुआ है। पहले दन्ते वरी माईं जी की भक्ति और राज्य (रियासत) के प्रति राजभक्ति के मिले–जुले प्रभाव से बस्तर द ाहरे की कीर्ति स्थापित हुआ करती थी, परन्तु अब बस्तर द ाहरे में केवल देवी दन्ते वरी का ही वर्चस्व स्थापित रह गया है। देवी दन्ते वरी केवल एक वर्ग वि ोष की देवी न होकर सभी वर्गों की आराध्य देवी प्रमाणित हुई हैं। अतः बस्तर द ाहरा के संदर्भ में स्पष्ट करना स्वाभाविक हो जाता है कि यह वर्ग वि ोष का पर्व न होकर सम्पूर्ण वर्ग की सामाजिक व सांस्कृतिक एकता का पर्व है जो भारत के अन्य क्षेत्रों में होने वाले वर्ग संघर्ष के विपरित सामाजिक समभाव व सहभागिता का प्रमाण प्रस्तुत करता है।

पराधीन भारत में सैकड़ों दे ाी रियासतों में से बस्तर भी एक था जो सी.पी. एण्ड बरार के प्र ाासन क्षेत्र के अन्तर्गत आता था, यहाँ काकतीय राजा राज्य किया करते थे। राजवं ा के राजाओं ने प्रजा कल्याण की भावना से प्रेरित होकर कई जनकल्याण के कार्य तथा इन्ही के हितों से प्रेरित होकर अन्य राज्यों से संघर्शरत थे इसलिए इस पर्व के माध्यम से बस्तर की जनता राजपरिवार के प्रति स्वामी भक्ति का प्रर्द ान करते हुए स्वयं के श्रम बल को इस हेतु समर्पित कर देती है।

किसी सामाजिक व्यवस्था में उसकी सांस्कृतिक संयुक्ति का आधार उस व्यवस्था से संबंधित लोगों के वि वास आधारित धार्मिक आस्थाएँ एवं परम्पराएँ होती है। इसलिए यदि किसी सामाजिक व्यवस्था के अंतराल को देखना व पहचानना है तो उस व्यवस्था में प्रचलित आस्थाओं एवं परम्पराओं का अध्ययन करना आव यक होता है। एक समाज में प्रचलित कुछ आस्थाएँ व उनसे सम्बंधित प्रथाएँ एवं उनका स्वरूप इतना सबल होता है कि लोग प्रथा का पालन बिना किसी प्रत्यक्ष अधिनियम के, बिना किसी संगठित सत्ता के दबाव के स्वतः ही करते हैं। और

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

इसे अनिवार्यतः अगली पीढ़ी को सौंप देते हैं। इस प्रकार आस्थाएँ व उनको पोशित करती हुई प्रथाएँ एक स्वभावगत आदत है जो मनुष्य द्वारा समाज से सीखी जाती है और समाज द्वारा हस्तांतरित की जाती है। अतः इसी अवधारणा के परिपालन में बस्तर का द ाहरा पर्व तथा उसके विधि–विधान अति अल्प परिवर्तनों के साथ आज भी अपने मूल स्वरूप में बने हुए हैं।

रियासत के प्रत्येक क्षेत्र से कारीगरों का जगदलपुर आगमन व द ाहरा पर्व हेतु 'रैनी' व 'फूल रथ' के निर्माण में आपसी समन्वय की जो भावना दृश्टव्य होती है वह अत्यंत दुर्लभ है। रथ निर्माण हेतु लकड़ी लाने के विधान से लेकर रथ खींचने के विधान तक आदिवासियों की सामाजिक सहभागिता व आस्था की भावना एवं दिन–प्रतिदिन बलवती होती एकता के कारण को समझना अति महत्वपूर्ण है। क्योंकि इन्हीं कारणों को समझकर इस सभ्य समाज में हो रहे विखण्डन, असहयोग, अस्पृ यता व जातिगत दुर्भावनाओं को रोकने में सहयोग प्राप्त किया जा सकता है। इस मायने में बस्तर की संस्कृति अन्यत्र पायी जाने वाली संस्कृतियों से श्रेष्ठ है, चुंकि बस्तर अद्यपर्यन्त एक पिछड़ा हुआ वनांचल क्षेत्र व यहां की जनजातियाँ विकसित सभ्यता से दूर अपनी वि ाश्ट संस्कृति के लिए

संदर्भग्रन्थ :–

1. रामकुमार बेहार, "बस्तर एक अध्ययन", मध्यप्रदे ा हिन्दीग्रन्थ अकादमी, भोपाल, 1995।
2. प्रवीरचंद, भंजदेव, "ऑई प्रवीर दि आदिवासी गॉड" (हिन्दी रूपान्तरण– जितेन्द्र पाणीग्रही"),– जगदलपुर, 2000।
3. लाला जगदलपुरी ,"बस्तर इतिहास एवं संस्कृति", मध्यप्रदे ा हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2007।
4. रमेन्द्रनाथ मिश्र, "छत्तीसगढ़ का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास", रायपुर, 1992।
5. हरिहर वै णव, "बस्तर के तीज त्यौहार", बस्तर संभाग हल्बी साहित्य परिशद्, कोण्डागॉव, 2002।

■■■

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

एक आद ा समाज व्यवस्था और जाति प्रथा के दोश — डॉ. बी.आर. अम्बेडकर का राजनैतिक द ान

डॉ. अजय चन्द्राकर
विभागाध्यक्ष
राजनीति विज्ञान विभाग
दुर्गा महाविद्यालय रायपुर

डॉ. अम्बेडकर ने कोलम्बिया युनिवर्सिटी, न्यूयार्क में आयोजित डॉ. ए.ए. गोल्डन वाइजर गोष्ठी में नृविज्ञान (एंथ्रोपोलाजी) पर एक लेख पढ़ा। इस लेख में इन्होंने भारत में जाति प्रथा की उत्पत्ति और उसके स्वरूप पर विस्तार से अपने विचार अभिव्यक्त किये। प्रारंभ में ही डॉ. अम्बेडकर ने स्पष्ट कर दिया कि उन्होंने भारतीय जाति प्रथा के वि लेशण में वैज्ञानिक दृश्टिकोण का अनुसरण किया हैं। वे किसी पूर्वाग्रह से प्रेरित नहीं हैं। डॉ. अम्बेडकर के अनुसार यह विषय अत्याधिक जटिल है और इसका तार्किक और वैज्ञानिक विवेचन ही होना चाहिए। लेख का भीर्षक था — भारत में जाति प्रथा, संरचना, उत्पत्ति और विकास।[1]

बाबा साहब ने कहा कि होने को तो हिन्दुओं की जाति व्यवस्था एक स्थानीय समस्या है, लेकिन इसके परिणाम बड़े विकराल हैं। इस संबंध में एक भारतीय विद्वान का कथन है ''जब तक भारत में जाति प्रथा विद्यमान है, तब तक हिन्दुओं में अंतर्जातीय विवाह और बाहय लोगों से भाायद ही समागम हो सके, और यदि हिन्दू पृथ्वी से अन्य क्षेत्रों में भी जाते हैं तो भारतीय जाति—पॉति की समस्या वि व की समस्या हो जायेगी।[2]''

डॉ. अम्बेडकर ने अपने को जाति प्रथा के केवल तीन पहलुओं तक सीमित रखा है — जाति प्रथा की संरचना, उत्पत्ति और उसका विकास।

पि चम के नृतत्व वैज्ञानियों के अनुसार भारतीय समाज में आर्यों, द्रविड़ों, मंगोलों और तुर्कों का सम्मिश्रण है। ये जातियां दे ा विदे ा से भाताब्दियों पूर्व भारत पहुंची और अपने मूल दे ा के सांस्कृतिक विरासत के साथ यहॉ बस गयीं। तब इनकी स्थिति कबायली थी। ये अपने पूर्ववर्तियों को धकेल कर इस दे ा के अंग बन गये। इनके परस्पर सतत सम्पर्कों औ सम्बन्धों के कारण एक समन्वित संस्कृति का सूत्रपात हुआ।[3]

डॉ. अम्बेडकर नृतत्व वैज्ञानियों, वि ोषकर पि चम के वैज्ञानियों का खंडन करते हुए कहते है कि भारतीय समाज के विषय में यह बात कहना असंगत है कि यह विभिन्न जातियों का संकलन है। पूरे भारत में भ्रमण करने पर दिकदिंगत में यह साक्ष्य मिलेगा कि इस दे ा के लोगों में भाारीरिक गठन और रंग रूप की दृष्टि से कितना अंतर है। संकलन में सजातीयता उत्पन्न

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

नहीं होती है, यदि रक्त भेद की दृष्टि से देखा जाये तो भारतीय समाज विजातीय है, हॉ यह संकलन सांस्कृतिक रूप से अत्यंत गुंथा हुआ है। इसी आधार पर यह कहा जा सकता है कि इस प्रायद्वीप को छोड़कर संसार की कोई दे   ा ऐसा नहीं है जिसमें इतनी सांस्कृतिक समरसता हो। हम केवल भौगोलिक दृष्टि से ही सुगठित नहीं है, बल्कि हमारी सुनि चत सांस्कृतिक एकता भी अविच्छिन्न और अटूट है, जो पूरे दे   ा में व्याप्त है। इसी सांस्कृतिक एकता के कारण जाति प्रथा इतनी विकराल समस्या बन गयी है। यदि हमारा समाज केवल विजातीय या समिश्रण भी होता तब भी कोई बात थी, किन्तु यहॉ तो सजातीय समाज में भी जाति प्रथा घुसी हुई है।

जाति प्रथा के संबंध में डॉ. अम्बेडकर ने निम्न नृजाति वैज्ञानियों के विचारों की विवेचना की है – फ्रान्सीसी विद्वान श्री सेनार, नेसफील्ड सर एच रिजले, डॉ. केतकर। डॉ. अम्बेडकर के अनुसार इन परिभाषाओं में कुछ बातें ही सही हैं, भोष का त्याग किया जाना चाहिए। भारत में सपिंड विवाहों व सजातीय विवाहों पर ही प्रतिबंन्ध नहीं है, बल्कि सगोत्र विवाह भी अपवित्र माने जाते है। इनका उल्लंघन करने पर कठोर दंड दिया जाता है।[4]

इस संबंध में स्त्री–पुरूषों की संख्या में संतुलन रखने की आव   यकता है। यदि स्त्री मरे तो पुरूषों की संख्या बढ़ेगी और पुरूष मरे तो स्त्रियों की संख्या बढ़ेगी। इस विषमता को न रोक पाने से जाति व्यवस्था का जाल छिन्न–भिन्न हो जायेगा। लोग जाति के बाहर विवाह करने लगेंगे। भारत में इस समस्या से निपटने के लिए सती प्रथा और विधवा विवाह निषेध की व्यवस्था की गई है। बालिका विवाह का भी समर्थन किया गया है।[5]

डॉ. अम्बेडकर ने पुरूष को स्त्री की तुलना में श्रेष्ठ कहा है। पुरूष का वर्चस्व हर समाज में रहा है। डॉ. अम्बेडकर, हिन्दू समाज की तीनों संस्थाओं की आलोचना करता है – सती प्रथा, विधवा विवाह निषेध, बाल विवाह। ये सभी अवैज्ञानिक, अतार्किक व्यवस्थाऍ हैं और स्त्री स्वाधीनता का हरण करती है।

डॉ. अम्बेडकर मार्क्स के वर्ग से सहमत नहीं थे। अम्बेडकर के अनुसार समाज में वर्ग रहेंगे किन्तु यह जरूरी नहीं है कि उनके बीच संघर्ष हो।

ब्राम्हण वर्ग भारतीय समाज का विधि निर्माता रहा है। मनु एक ढीठ, कठोर, क्रूर अन्यायी, विधि निर्माता था जिसने भाूद्र वर्ग को दास या प   ु बना दिया। डॉ. अम्बेडकर लिखते है – ''मनु ने एक सर्वाधिक अन्यायपूर्ण विधान की रचना की, जो उसकी व्यवस्था में साफ झलकता है। मैं मनु के विषय में कठोर लगता हूँ, परन्तु यह नि चत है कि मुझमें इतनी भाक्ति नहीं कि मैं उसका भूत उतार सकूँ। वह एक भौतान की तरह जिन्दा है। किन्तु मैं नहीं समझता कि वह सदा जिंदा रह सकेगा। वैचारिक दृष्टि से मनुस्मृति गलत और इरादतन दुर्भावना पूर्ण

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

है।''[6]

फिर भी अम्बेडकर का कहना है कि मनु ने जाति के विधान का, जाति व्यवस्था का निर्माण नहीं किया और ना वह ऐसा कर सकता था। प्रचलित जाति प्रथा को ही उसने एक सुदृढ़ द ान और संहिसा का रूप दिया और जाति धर्म का प्रचार किया। जाति प्रथा का विस्तार और उसकी दृढ़ता इतनी विराट है कि यह एक व्यक्ति या वर्ग की धूर्तता और बलबूते का काम नहीं हो सकता।

हिन्दुओं में प्रचलित यह धारणा सर्वर्था त्रुटिपूर्ण और भ्रमोत्पादक है कि जाति की उत्पत्ति भाास्त्रों से हुई है या ब्रम्हा, विष्णु, ि ाव के मुख से हुई है। जाति अति प्राचीन व्यवस्था है जिसका विकास होता रहा है, सबलों ने निर्बलों को धीरे–धीरे अपना दास बताया और ब्राम्हण क्षत्रिय भाासन की वैधता सिद्ध करने के लिए भाास्त्र गढ़े जिसमें मनुसंहिता का प्रयास सबसे सार्थक था। किन्तु किसी जाति को चिरकाल न भाासक बनाकर रखा जा सकता है और न भाासित।

जाति प्रथा ने हिन्दुओं में नकलबाजी की प्रवृत्ति उत्पन्न की। नीची जातियों ने ऊँची जातियों की नकल की। इस संबंध में अम्बेडकर गेब्रियेल तर्दे और वाल्टर बेगहाट को उद्धृत करते हुए कहते हैं कि भाूद्रों, वै यों, क्षत्रियों ने ब्राम्हणों के सती प्रथा, विधवा विवाह निषेध और बाल विवाह का अनुकरण किया।

डॉ. अम्बेडकर ने राष्ट्रीय आन्दोलन और अखिल भारतीय कांग्रेस की यह कहकर आलोचना की कि उसने समाज सुधार के प्रयासों को दरकिनार कर दिया और केवल स्वतंत्रता की लड़ाई पर बल दिया। इससे हिन्दू समाज की जड़ीभूत बुराईयों को दूर करने के लिए जो एक स ाक्त रिनासॉ (पुनरोदय का युग Renaissance) आरंभ हुआ था, जिससे कबीर, नानक, दादू, चैतन्य, रैदास, घासीदास, राजा राममोहन राय, विवेकानंद, एनीबेसेन्ट, दयानंद सरस्वती आदि ने गति दी थी, वह राष्ट्रीय आन्दोलन के रंगमंच से हटा दिया गया और केवल राजनीतिक सुधारों की बात की जाने लगी। जाति प्रथा की जड़े और भी घनीभूत होती गई।

समाज सुधार दल की समाप्ति का एक कारण यह भी था कि इसने उन समस्याओं पर बल दिया जो द्वितीयक थे जैसे सती प्रथा, बाल विवाह और प्राथमिक महत्व के प्र नों जैसे जाति प्रथा और अस्पृ यता उन्मूलन को दरकिनार कर दिया।

डॉ. अम्बेडकर ने इसीलिए भाुद्धि आन्दोलन, समाजवादी आन्दोलनों को भी निरर्थक बतलाया। इनमें ऊँचनीच पर आधारित जाति प्रथा और अस्पृ यता को हटाने का कोई अ ाक्त आन्दोलन नहीं किया। डॉ. अम्बेडकर का कहना है कि राजनैतिक सुधार और राजनैतिक स्वतंत्रता की आधारि ाला क्षमता पर आधारित समाज है। जिस समाज में गहरी

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

विषमता हो, जो जात–पॉत अस्पृ यता को बनाये रखना चाहता है उसे राजनैतिक आजादी के लिए आंदोलन चलाने का क्या अधिकार है। समता मूलक समाज में ही स्वतंत्र संविधान का

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

मार्ग में खड़ा है। आप जब तक इस दैत्य को नहीं मारोगे आप न कोई राजनैतिक सुधार कर सकते हैं, न कोई आर्थिक सुधार।''

कुछ लोग कहते है कि जाति व्यवस्था श्रम का विभाजन है। अम्बेडकर इस तर्क का खण्डन करते हुए कहते हैं कि जाति प्रथा न केवल श्रम का विभाजन है वह श्रमिकों का भी विभाजन है। श्रम विभाजन सामाजिक कार्यकु ालता पर आधारित है, किन्तु जाति–प्रथा कार्यकु ालता का ह्रास करती है। यह उद्योग और व्यापार के मार्ग में एक बड़ी बाधा है। जाति प्रथा द्वारा उत्पन्न विभाजन छांट पर आधारित विभाजन नहीं है। इसमें वैयक्तिक भावना और वैयक्तिक वरीयता का कोई प्र न नहीं है। इसकाआधार कर्म का सिद्धांत या पूर्व नियति का सिद्धांत है। जाति पर आधारित श्रम विभाजन का सबसे बड़ा दोष यह है कि इस प्रणाली में ज्यादा लोग ऐसे व्यवसायों में लगे हैं, जिनके प्रति उनकी प्रवृत्ति नहीं है। वह ऐसे व्यवसाय से घृणा करने लगता हैऔर उससे अपना पिण्ड छुड़ाने का प्रयास करता है। इसका एकमात्र कारण वह निरा ाा जनक प्रभाव है जो उन पर हिन्दू धर्म द्वारा उनके ऊपर आरोपित कलंक के कारण पड़ता है। ऐसी व्यवस्था में क्या कार्यकु ालता हो सकती है, जिसमें न लोगों के दिल और न दिमाग अपने काम में होते है ?

यह भी दलील दी जाती है कि यह व्यवस्था जैविक आधारों पर आधारित है और रक्त की भाुद्धता को कायम रखने के लिए है। किन्तु ब्राम्हण, ठाकुर भ्रम में है, जैसा डी.आर. भोडारकर कहते हैं कि भारत में भाायद ही कोई ऐसा वर्ग या जाति होगी जिसमें खून न हो। पंजाब में ब्राम्हण और चमार एक ही जाति के है, बंगाल के ब्राम्हण और भाूद्र ही एक ही प्रजाति के हैं, मद्रास के ब्राम्हण और पेरिया भी एक ही प्रजाति के हैं। जाति प्रथा मानव वं ा या प्रजाति के विभाजन का निर्धारण नहीं करती। जाति प्रथा तो एक ही प्रजाति के लोगों का सामाजिक विभाजन है।

जाति प्रथा सुप्रजनन ाास्त्र (Ugenices) पर भी आधारित नहीं है। जाति के भीतर उत्तम स्त्री पुरूषों में विरले ही समागम होती है। अम्बेडकर के अनुसार जाति प्रथा नकारात्मक तथ्य है। यह केवल अलग–अलग जातियों के लोगों को आपस में अन्तर्विवाह का निषेध करती है। यह ऐसा सकारात्मक उपाय नहीं है जिससे एक ही जाति के दो उत्तम नर–नारी आपस में विवाह कर सकें।

जाति प्रथा एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था है जो हिन्दू समाज के ऐसे विकृत समुदाय की झूठी भाान और स्वार्थ की प्रतीक है, जो अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा के अनुसार इतने समृद्ध थे कि उन्होंने इस जाति प्रथा को प्रचलित किया और इस प्रथा को अपनी ओर से जोर जबरदस्ती के बल पर अपने से निचले तबके के लोगों पर लागू किया। जाति प्रथा से हिन्दू समाज पूरी तरह

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

छिन्न भिन्न और हता ा हो गया। जाति प्रथा के कारण हिन्दू संगठित नहीं हो सके, वे बुजदिल बन गये और मुसलमानों, यूरोपियनों आदि मुठ्ठीभर विदे ाी आक्रान्ताओं के सामने उन्होंने घुटने टेक दिये। वास्तव में जाति प्रथा के कारण हिन्दू समाज जातियों का एक संग्रह मात्र नहीं, बल्कि वह भात्रुओं का समुदाय है। ब्राम्हणों, ठाकुरों ने आदिवासियों को जंगली ही बनाये रखा।

हिन्दु लोग मुसलमानों की इसलिए आलोचना करते हैं कि उन्होंने तलवार के बल पर अपना धर्म फैलाया। वे ईसाई धर्म की भी इसलिए आलोचना करते हैं कि वे धर्म न्यायाधिकरण के आदे ा से काम करते हैं। लेकिन सच पूछा जाय तो हमारे आदर का पात्र कौन है ? वे मुसलमान या ईसाई जो बलपूर्वक अनिच्छुक व्यक्तियों को वह सब करने के लिए विव ा कर देते हैं जिसे वे उनकी मुक्ति के लिए आव यक समझते हैं, अथवा वे हिन्दू जो ज्ञान का प्रका ा फैलाने नहीं देते, जो दूसरों को अंधेरे में रखने की कोि ा ा करते रहते हैं जो अपने बौद्धिक और सामाजिक दाय को उन लोगों के साथ मिल बॉटना नहीं चाहते, जो उस दाय को अंगीकृत करने के लिए पूरी तरह तैयार और इच्छुक है ?अम्बेडकर लिखते हैं, ''मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि अगर मुसलमानों को क्रूर माना जाये तो हिन्दुओं को भी निकृष्ट माना जाना चाहिए और निकृष्टता तो क्रूरता से भी अधिक निन्दनीय है।''

मुसलमानों, सिक्खों और ईसाईयों के रहन–सहन के तरीके उनमें भाईचारा पैदा करते हैं किन्तु हिन्दुओं के रहन–सहन के तरीके एक जाति और दूसरी जाति में वैमनस्य उत्पन्न करते हैं। जब तक जाति प्रथा रहेगी हिन्दुओं में संगठन नाम की कोई बात नहीं रहेगी और जब तक उनमें संगठन नहीं होगा हिन्दू कमजोर और डरपोक रहेंगे।

जाति प्रथा के कारण हिन्दुओं में एक–दूसरे के प्रति उदासीनता, राष्ट्र के प्रति उदासीनता की भावना उत्पन्न हुई है। इस उदासीनता के कारण उनमें किसी अच्छे काम के लिए भी संगठन का और सहयोग का होना असम्भव है। जाति प्रथा ने जन–चेतना को नष्ट कर दिया है।

अम्बेडकर ने जाति प्रथा की अन्य आधारों पर भी आलोचना की है जिनका यहॉ स्थानाभाव के कारण उल्लेख करना सम्भव नहीं है :–

डॉ. अम्बेडकर के विचारों की निम्न आधारों पर आलोचना की जा सकती है :–

(1) एक स्थान पर अम्बेडकर ने पुरूष को स्त्री की तुलना में श्रेष्ठ कहा है, किन्तु आज का युग नारी को प्रतिष्ठित कर रहा है और उसे समान अधिकार प्रदान किये जा रहे है।

(2) सजातीय विवाह के वे उद्दे य नहीं भी हो सकते जिनका अम्बेडकर ने उल्लेख किया है और जिन कारणों पर अम्बेडकर ने बल दिया है उनके अतिरिक्त भी अन्य कारण हो सकते हैं।

(3) विधवा विवाह, बाल विवाह प्रारंभ से ही पिछड़ी जातियों में प्रचलित रहा है।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

(4) कोई जाति अन्य जातियों की तुलना में क्यों उच्च या नीची है इस पर कोई वैज्ञानिक ढंग से प्रका ा नहीं डाल सका है।

(5) ब्राम्हण भाास्त्र निर्माता है, क्षत्रिय भास्त्रों के धारण करने वाले हैं, किन्तु इनकी संख्या बहुत कम है, इन्होंने किस प्रकार से हजारों वर्षों तक निम्न और पिछड़ी जातियों पर अपना प्रभुत्व स्थापित किया इस पर अम्बेडकर ने कोई प्रका ा नहीं डाला है।

(6) अम्बेडकर ने अस्पृ यता की उत्पत्ति के कारणों और विभिन्न युगों में उसके विकास पर कोई प्रका ा नहीं डाला है।

(7) अम्बेडकर इस तथ्य को समझाने में विफल रहे हैं कि क्यों हजारों वर्षों तक अस्पृ यों ने अपने को सवर्णों को समर्पित किया।

(8) अस्पृ यों में भी ऊँच नीच का भेदभाव है, ऐसा क्यो ?

कुल मिलाकर अम्बेडकर ने हिन्दू समाज व्यवस्था के एक प्रमुख दोष पर प्रका ा डाला है। समाज व्यवस्था का आधार समानता, स्वतंत्रता, बन्धुत्व और भाईचारे की भावना तथा सामाजिक न्याय की भावना होनी चाहिए। इनके बिना हिन्दू समाज का कोई भविष्य नहीं है।

फुटनोट्स

1. डॉ. भयाम सिंह भाि ा (प्रधान सम्पादक) – बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर, संपूर्ण वाङमय, खण्ड 1, नई दिल्ली, कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार, 1993, पृ. 15–37 (महाराष्ट्र सरकार द्वारा प्रकाि ात ''डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर : राइटिंग्स एण्ड स्पीचेज'' सम्पूर्ण वाङमय का एक खण्ड हिन्दी में भारत सरकार द्वारा अनूदित)।
2. वही, पृ. 17–18 डॉ. अम्बेडकर ने केतकर की पुस्तक – कास्ट (जातिप्रथा) पृ. 4 का उद्धरण दिया है।
3. वही, पृ. 18
4. ए.के. कुमारस्वामी – सती ए डिफेंस ऑफ दि ईस्टर्न वीमेन, सोि ायालाजीकल रिव्यू, भाग VI, 1993. डॉ. केतकर – हिस्ट्री ऑफ कास्ट इन इंडिया, 1909, पृ. 2 – 23
अम्बेडकर ने इनके विचारों की आलोचना की है – वहीं पृ. 28 – 29
5. डॉ. भयाम सिंह भाि ा – पृ. 28 – 29
6. वही
7. वाल्टर बेगहाट – फिजिक्स एण्ड पालिटिक्स, पृ. 60, ग्रेब्रियेल तार्दे – लाज ऑफ इमिटे ान, पृ. 217–25
अम्बेडकर में पृ. 31–32 उद्धृत

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

8. डॉ. भयाम सिंह भाि ा, पृ. 60
9. वही पृ. 63—64

■■■

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

छत्तीसगढ़ राज्यान्तर्गत रायपुर परिक्षेत्र की आर्थिक पृष्ठभूमि–एक अध्ययन

डॉ. अजय कुमार शर्मा
(सहा. प्राध्यापक-वाणिज्य)

भू–पटल को अधिष्ठान बनाकर सम्यता एवं संस्कृति की प्रथमावस्था से ही मनुष्य अपनी आवश्यकता अभिरूचि, सामर्थ्य,तकनीकी ज्ञान तथा कौशल के आधार पर संसाधनों के श्रेष्ठतम चयन एवं उनके कुशलतम उपयोग द्वारा उत्पादन, विपणन और उपभोग से सम्बन्धित क्रियाओं को सम्पन्न करते हुए आर्थिक भू–दृश्य का निर्माण करता आया है।

आर्थिक क्रियाओं में संलग्न मनुष्य एक ओर जहां नैसर्गिक संसाधनों का आवश्यकतानुसार दोहन करते हुए उनसे दीर्घकाल पर्यन्त उपयोगिता प्राप्त करने के उद्देश्य से प्राकृतिक परिवेश को अपरिवर्तित बनाए रखने की दिशा में सद्यः प्रयत्नशील रहा है, वहीं दूसरी ओर अधिकतम लाभ प्राप्त करने हेतु उसमें सतत् परिवर्तन भी करता रहा है। परिणामस्वरूप आर्थिक क्रियाजन्य उपयोगिता के आधार पर भूमि–उपयोग–स्थितियों में निरन्तर परिवर्तन होते रहे हैं। संसाधनों की उपलब्धता एवं मानवीय आर्थिक क्रियाओं के क्षेत्रीकरण में प्राकृतिक तथा सांस्कृतिक परिस्थिति के अन्र्तसम्बन्धों के कारण प्रादेशिक भिन्नता मिलती है। अतः किसी भौगोलिक प्रदेश–विशेष के आर्थिक भू–दृश्य के स्थूल रूपांकन हेतु उसकी भूमि–उपयोग स्थिति का निर्दर्शन प्राथमिक आधारों में से एक है। इस तथ्य के परिप्रेक्ष्य में रायपुर परिक्षेत्र की भूमि–उपयोग स्थिति पर विचार करना आवश्यक है।

अद्यः दर्शित सारिणी में समंकीय तथ्यों के माध्यम से छत्तीसगढ़ राज्यान्तर्गत रायपुर परिक्षेत्र के भूमि–उपयोग सम्बन्धी वर्तमान स्थिति का तात्विक स्वरूप प्रस्तुत किया जा रहा है।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

भूमि – उपयोग स्थिति विमर्श

। परिमाप :000 हेक्टयर में ।

		छत्तीसगढ़ राज्य		रायपुर परिक्षेत्र	
अनुकमांक	विवरण	भूमि क्षेत्र	प्रतिशत	भूमि क्षेत्र	प्रतिशत
1.	वन भूमि क्षेत्र	6355	46,08	1321	32.35
2.	निरा कृषि क्षेत्र	4772	34.24	1974	48.33
3.	कृषि हेतु अनुपलब्ध भूमि	996	7.72	332	8.14
4.	अकृष्य भूमि	857	6.21	329	8.07
5.	पड़ती एवं अन्य भूमि	810	5.75	126	3.11
कुल भौगोलिक क्षेत्र/योग		13790	100	4082	100

स्रोत :– छत्तीसगढ़ एवं रायपुर परिक्षेत्र का भूमि उपयोग–www.fsi.nic.in

उपर्युक्त सारिणी में निर्दर्शित भुमि उपयोग सम्बन्धी वर्तमान स्थिति से स्पष्ट है कि परिक्षेत्र का 32.25 प्रतिशत भूभाग वनाच्छादित है। जो कि राज्य की तुलना में कम है फिर भी यहां की जनसंख्या के यथेष्ट महत्वपूर्ण अंश की अजीविका का वनोपज आधारित प्राथमिक उत्पादक कार्यो पर आश्रित रहना स्वाभाविक है। अल्प आय, आवागमन की अत्यल्प सुविधा, संचार माध्यमों की न्यूनता तथा भौगोलिक दशाएं यहां के निवासियों के पिछड़ेपन एवं निम्न जीवन–स्तर के नियन्त्रक कारण है। इन क्षेत्रों में जनसंख्या की विरल है। यहां के गांवों में सामान्यतः समरूप आर्थिक दृश्य देखनें में आते है। इसके विपरीत वे केन्द्रीय–स्थल जहां वनोपज आधारित प्राथमिक उत्पादों के विपणन कार्य होते है, अपने निकटवर्ती चारों ओर के गांवों के साथ एक संकेन्द्रीय संगठननात्मक आर्थिक दृश्य प्रस्तुत करतें हैं। इन केन्द्रीय स्थलों में जीवनोपयोगी आवश्यक सामग्रियो का विपणन बाजार भी विकसित होता जाता है। परिवहन, संचार आदि सुविधाओं में विकास के साथ–साथ ये शनैः–शनैः नगरीय रूप प्राप्त करते जाते है। ऐसे स्थलों में जनसंख्या का घनत्व भी बढ़ता जाता है। रायपुर परिक्षेत्र के वनांचलों

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

में केन्द्रीय स्थलों का यह विकास– प्रतिरूप सर्वत्र देखा जा सकता है।

रायपुर परिक्षेत्र में विविध आर्थिक आयोजनों की दृष्टि से कृषि कर्म के अन्तर्गत नियोजित भूमि कुल भू– क्षेत्र का 48.33 प्रतिशत है जो कि राज्य की तुलना में 14.09 प्रतिशत अधिक है। विगत वर्षो की वार्षिक भूमि उपयोगिता सम्बन्धी आंकड़ों पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि कुल राजस्व क्षेत्र में जनसंख्या का अधिभार सदैव से कृषि कर्म या इससे सम्बन्धित अन्यान्य व्यवसायों पर रहा है।

मैदानी क्षेत्र में कृषि भूमि की अधिकता के कारण यहां जनसंख्या का घनत्व पर्वत–पठार व वन क्षेत्र की तुलना में अधिक होना स्वाभाविक ही है। मैदानी क्षेत्र का समतलीय विन्यास, संचरणशीलता एवं परिवहन सुविधाओं में युग–सापेक्ष आवश्यकतानुसार विकास–विस्तार में सहायक रहा है। परिक्षेत्र की प्राकृतिक दशाएं कृषि की सफलता के लिए अनुकूल होने के कारण कृषि आधारित आर्थिक दशा प्राथमिक व्यवसाय अन्तर्गत अधिक सुदृढ़ है।

वनोपज का सम्बन्ध जहां मुख्यतः प्राकृतिक कारकों पर आश्रित होता है, वहां कृषि उत्पाद में नैसर्गिक कारकों की अपेक्षा मानवीय पक्ष अधिक सबल होता है। कृषि अवलम्बित जनसंख्या अपनी दैनिक अन्यान्य आवश्यकताओं की सम्पूर्ति के लिए विक्रय शेष पर आश्रित रहती है। परिणामस्वरूप प्राथमिक उत्पादकों से विविध कृषि फसल कय करने वाले केताओं द्वारा जिन केन्द्रीय स्थानों का चयन किया जाता है, वे अपने चारों ओर के कृषि अवलम्बित अधिवसी स्थलों के साथ एक संकेन्द्रीय संगठनात्मक इकाई बनाते हैं। ऐसे स्थानों में ही जनोपयोगी अन्यान्य वस्तुओं के उपभोक्ता बाजार भी विकसित होते जाते हैं। ये केन्द्र स्थान, आश्रित ग्रामीण स्थलों से किसी न किसी श्रेणी के मार्ग और उस पर चलने वाले परिवहन साधन से जुड़े रहते है। ये केन्द्र अपने से बड़े केन्द्रों के साथ संकेन्द्रीय सम्बन्ध बनाते है। अतः ऐसे स्थानों का सांस्कृतिक एवं प्रशासनिक महत्व भी कमशः बढ़ता जाता है। रायपुर परिक्षेत्र के अंतर्गत अनेक अर्धनगरीय व लघुनगरीय स्थलों के विकास में हम उपर्युक्त कारणों की सहभागिता पाते है। छ0ग0 के अनेक कृषि उत्पादों का क्षेत्रीय, राज्य स्तरीय, अन्तर्राज्यीय तथा अंतर्राष्ट्रीय मांग बाजार है। परिणाम स्वरूप वे स्थान जो देश के विभिन्न राज्यों एवं निर्यातक केन्द्रों से रेल अथवा सड़क मार्गो द्वारा सम्बद्ध हैं, जहां बैकिंग, संचार उर्जा, श्रम आदि इतरसंसाधनिक सुविधाएं उपलब्ध है, और जो प्राथमिक केता मण्डी केन्द्रों से जुड़े हुए है, जहां प्रशासनिक मुख्यालय या सहायक कार्यालय हैं तथा जहां शैक्षणिक सुविधाओं का केन्द्रीकरण है, ऐसे संकेन्द्रीय स्थलों का प्रशस्त नगरीं के रूप

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

में विकास हुआ हैं तथा जहां शैक्षणिक सुविधाओं का केंन्द्रीयकरण है, ऐसे संकन्द्रीय स्थलों का प्रशस्त नगरीं के रूप में विकास हुआ है। परिक्षेत्र अंतर्गत डोंगरगढ़, राजननांदगांव, दुर्ग, रायपुर तिल्दा नेवरा, भाटापारा, बलोदाबाजार, महासमुन्द, गरियाबन्द, नयापारा धमतरी आदि नगर इसी तरह विकसित संकेन्द्रीय स्थल हैं। यहां यह उल्लेखनीय है कि कृषि उपजों के अतिरिक्त वनोपजों का भी राज्य स्तरीय तथा अन्तर्राज्यीय व्यापार इन्हीं नगरों में संकेन्द्रित है।

कृषि अवलम्बित ग्रामीण आर्थिक संरचना यहां के प्रादेशिक आर्थिक भूदृश्य का सर्वोपरि महत्व का पक्ष है। वनोपज दोहन–संग्रहण आधारित आर्थिक क्रियाएं द्वितीय क्रम में आती हैं। इन प्राथमिक उत्पादो में क्षेत्रीय औद्योगिक विकास को सदैव नया आयाम प्रदान किया है। रायपुर परिक्षेत्र के औद्योगिक विकास में वनोपज व कृषि आधारित उद्योगों की ऐतिहासिक भूमिका रही है तथा संख्या स्थिति की दृष्टि से आज भी यह सर्वोपरि महत्व रखता है। वे नगर जहां कृषि उत्पादों की बड़ी मंडियां है, जो रेल अथवा पक्की सड़कों से राज्य व देश के विभिन्न क्षेत्रों से जुड़े हुए हैं तथा जहां अन्य आवश्यक संसाधनिक सुविधाएं उपलब्ध हैं वहीं द्वितीयक र्निमाणी उद्योग जैसे चावल मिल, दाल मिल, साल्वेंट एक्सट्रेक्शन प्लांट, सॉ–मिल आदि स्थापित हैं।

वनोपज एवं कृषि आधारित द्वितीयक व तृतीयक निर्माणी उद्योगों एवं बहुआयामी उपभोक्ता बाजारों की केन्द्रीयता है। व्यापारिक–व्यावसायिक और औद्योगिक विकास के लिए आवश्यक सभी प्रकार के संसाधन यहां सुलभ कराये गये हैं। इन्ही नगरों में संभागीय, जिला, तहसील तथा विकासखण्ड स्तरीय प्रशासनिक मुख्यालयों की संकेन्द्रीयता है। इसके अतिरिक्त कृषि, लोक निर्माण, वन एवं भौमिकी आदि अनेक राजकीय विभागों के भी विभिन्न स्तरीय कार्यालय इन्ही नगरीय क्षेत्रों में है। शैक्षणिक, सांस्कृतिक आदि गतिविधियों के भी ये नगर प्रमुख केन्द्र हैं। परिणामस्वरूप इन नगरीय क्षेत्रों में जनसंख्या का घनत्व सर्वाधिक है। नवछत्तीसगढ़ राज्य निर्माण पश्चात् विगत 13 वर्षो के मध्य ग्रामीण जनसंख्या का शहरों की ओर निरन्तर प्रवाह होता रहा है। कार्यकारी जनसंख्या के द्वितीयक एवं तृतीयक व्यवसाय के केन्द्रों की ओर प्रवाह को आर्थिक संवृद्धि का सूचक माना जा सकता है, परन्तु रायपुर के नगरीय क्षेत्रों में जनसंख्या के अन्यान्य राज्यों से आप्रवजन का उत्तरोत्तर बढ़ता आकार क्षेत्रीय लोगों के लिए रोजगार के अवसर में और क्षेत्रीय सन्तुलित आर्थिक विकास के मार्ग में बाधक भी बनता जा रहा है।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

संदर्भः—

1. कुमार प्रमिला, — मध्य प्रदेश एक भौगोलिक अध्ययन, पृ. क0 — 78, एवं 201.
2. एलेग्जेडर जॉन डब्ल्यू — इकॉनामिक ज्यॉग्रफी, पृ0 क0 — 513
3. छ0ग0 एवं रायपुर परिक्षेत्र का भूमि उपयोग. www.fsi.nic.in
4. इंडिया स्टेट ऑफ फॉरेस्ट रिर्पोट — 2009
5. सिंह उजागिर — भौगोलिक चिन्तन का विकास, पृ. क0 — 39

■■■

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

Family Mobility and the Position of Women in the Indian family

Dr. Rajesh Shukla
Head Deptt. of Sociology,
Durga College, Raipur (CG)

First of all social mobility, even in modern industrial societies occurs fairly slowly and to a relatively small degree (Weber 1953: 363) No one social element works alone to produce mobility. Social mobility as a process takes place over time. The different parts of a society are closely inter related with one another. The concrete process of mobility is usually affected by several different interrelated social factors and conditions.

The family is obviously of crucial importance for the process of social mobility in all societies. This is because every one in society comes under the far- reaching and basic influence of the family. The family comes first in the life of an individual. The family instils in its members different institutional norms about social mobility, different aspirations and expectations and different abilities.

It has been observed that, due to industrialisation, there is migration of the unemployed from rural to urban areas. Consequently, nuclear families are established . The new family composition with limited manpower resources has a significant division of labour amongst its members; usually the adults- the husband and wife - share duties. It was an accepted norm that the man as a bread winner took care of the economic aspect. The women took over the other duties of running the home. Education has now prepared women as socialisers of children in the new setting which has new needs. Socio economic change has given a new stauts and role to urban educated women in India. Well known role theorists like Parsons opine that a person's attitude is influenced by the role he occupies in the social system. Lieberman felt that a change in role involves a change in functions, and in the kind of behaviour and actions of the role occupant. This in turn, influences his attitude with the addition of new roles. Women in an urban setting have additional roles; especially those who are employed have dual roles as wife, mother, house keeper and office worker . Women who seek employment are striving for equality; at the same time they do not complain about household work. No doubt they welcome help and appreciate other family members sharing the burden of this work. They do not shirk their duty at home because they are aware that they will not succeed in their new role if they make an issue of what is considered their primary duty. Due to her education a womean in the nuclear setting has found she can coach her children in their school work, which so for was the work of school teachers and elderly men. Men in the joint family. Besides, she is the main socialising force for the children in the nuclear home as the husband has very little spare time. There is no other adult member who can do this. The task is now the responsibility of the mother. Educated women can manage their own shopping, banking and take decisions at rudimentary levels. Her new role is that of a companion to her husband . She is considered responsible enough to advise, gudie or discuss important issues with her husband. She is an independent entity in her own right.

It is a fact that there is a world of difference between the rural and urban women . There are many more constraints upon the rural woman . It has however, been observed that rural women with some \educaion have also sought to establish nucler families One does not know if basically women want to marry and fulfil the role of homemaker But it is now accepted that by seeking higher education they wish to enrich their lives by participating in the activities of the world outside.

A look at Indian society in respect of the position of women reveals a great deal of controversy .

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

By and large today's world is a rapidly changing one. The change is felt in many spheres. One of the most fundamental and remarkable changes is the relative emancipation of women and their participation in activities outside their home. The changing socio economic conditions have widened their educational and employment potential. They have provided new avenues of expression. To some extent values underlying friendship patterns, love sex, marriage and the family have undergone some change.

Friendship patterns which are presently prevailing are not within the perview of traditional normative sanctions. In the traditional joint family the large kin group provided enough companionship. Playmates were availabe, not serious necessity was felt especially by girls o seek outside friends. Socialisation of girls was to train them to fulfil the adult roles of daughter in law, mother and mother in law. As a result friendship outside the family was an unknown phenomenon, especially because girls were married at a young age. With the establishment of nuclear families in urban areas, and as a direct consequence of education of women extra familial friendships and its importance have come to stay Nuclear homes canot provide adequates companion for the children. They have to seek friendship outside the family. Parents of young children can choose their friends, or at least find out who their friends are. But after they are sent to school, effective supervision is impossible. School girls normally have friends of the same sex, but the natural attraction for the opposite sex is manifested in the change of friendship patterrs in later years. The joint family could effectively control unmarried girls their friendship and their ideas to suit the traditional values of pattern maintenance. This is ineffective in nuclear homes where the girls are mature and have developed independent thinking . Endogamous rules of marriage are strained when friendship patterns change. This makes posible inter caste, inter religious and iner regional marriage No doubt such a situation has fostered secular values. Often couples who have crossed the prescribed endogamous marriage code are secluded from their kingroups, encouraging dependence and companionship of the parteners within these marriage. Social mobility of the women in such a family could be said to have reached the status of a copartner. If education of women continues, the present nascent changes would be a common fact in the years to come. It would be needless to stress, once again, that education is the important factor which facilitates friendship, love and marriage, and enhances social mobility. Women have begun to realise that the mission of their life does not end merely with becoming good wives and wise mothers. They have other important objectives in life. A number of studies made by different authors have revealed that educated working women of modern Indian have changed considerably in respect of their role and stauts in the family. The change in their status and attitudes are in turn bringing about change in the patterns of and role relationships within, marriage and family.

Marriage and family are the basic and fundamental institutions in the proper functioning of social life. In kapur's work change in the attitudes towards marriage have been recorded over a span of ten years, based on the respondent's self perception of marriage . The respondents who first viewed marriage as a sacrament later felt it to be a social contract, entered into primarily for the good of the individual and for his personal happiness and satisfaction. Marriage was considered necessary for the complte fulfilment of men and women and to achieve moksha. It was considered essential because of raditional, cultural and economic dependence of women on men. This concept has undergone some change with the increased education of women. The new trends that have now been observed are the lack of the pativrata concept and the new concept of soulmate in marriage . In spite of civil law provisions for marriage, the instituion has retained its sancary and purity. It maintains caste endogamy. Marriages even

today are arranged, though the traditional pattern has given way to the modern idea of knowing one's partner in life before tying the nuptial knot. The normative practice of seing one's husband only after marriage has given way to seeing him before marriage. The basic values of marriage within the fold of the joint family have still retained their hold over the Hindu mind exchange of dowry and marriage expenses being borne by the bride's family exclusively are till practised. These uphold the age old norm of girls being a burden on the parents. In this context it must be mentioned that most educated women are opposed to dowry. They however, experience difficulty in securing partners though the arranged marriage pattern within the same caste and class. Some of the girls compromise and work to earn a dowry. In the case of those girls who are non earners, no objections are raised if the parents provide a dowry at great personal sacrifice. Educated women seek employment not only to provide a dowry but also to contract a love marriage. These are new values which have been corroborated by Girija Khanna, Kapur and Giri Raj Gupta in their recent studies. It was noticed by Ramanamma, that more and more women prefer love marriages or at least marriage with their prior consent. One may infer that in the Indian context, education of women in the light of job prospects and self choice of partners has contributed to identity formation. This in turn has promoted individuation in respect of self choce in marriage.

The history of women's education and emancipattion has stressed the fact that educated girls married late and have no desire to live within the large joint family. Socialising an older girl into the ethos of the new family is more difficult. She has already imbibed values on her own. These factors act as counter currents, leading to inter generational conflicts in the joint family. These factors result in the establishment of nuclear families. These nuclear families are not always the ideal typical western type. In Indian nuclear families, we find some relatives live with the married couple, often for further education, or because a single person having a job in the same city has not other place to live. At times an elderly woman relative stays with the family for the specific reason of looking after the young children. These are families in transition and are neigher completely nuclear nor joint. Another factor pointing to the transitory phase is that despite the nuclear residential, pattern there is a financial contributiion to the joint family for the performance of the rituals on auspicious occasions, such as marriage, and for looking after old parents. Nuclear homes we find. have elevated the position of women in the family. Often she is the only other adult member whom the husband can consult. Often husbands of educated woven leave responsibile decisions to the wife and expect their implementation. The transition from joint to nuclear households has thus given rise to the social mobility of women.

The woman is said to be the pivot of the family and the basic unit of psychological change in any society. She is one of the first socialisiing agents for new generations and the psychic factor in all cultures and civilisations. Her role and status in society play a very significant part in moulding the social system including the family and family relatioships. The changing socio economic status of women in modern Indian has helped the educated urban women to plan a family . The birth rate among such families is decreassing. Actually a definite posivite correlation has been discerned between the imporved status of women and a low rate fertility.

Any soical movement can best be conceived as process occurring over a period of time. With individuals and their family units moving from one role and class position to another because of what they have done or what has happened to them in various kinds of social interaction the family is obvisously of crucial importances for the process of social mobility. In all societies everyone comes

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

under its far reaching and basic influence.

Even the type of family in which an individual is brought up can be discerned from their diffeent institutional norms about social mobility, aspirations, expectations and abilities, instilled in the individual. Thus we can say that in those families where women are educated they inculcate the importance of education in their children.

In the modern world higher education is especially important. Such an education is now a nearly indispensible prerequisite for social mobility. Educated women living in nuclear homes are adhering to demoratic measures for pattern maintenance in the family to a greater degree. We find that education is regarded as an engine in modern times. It changes one's values priorities and roles. Education, along with employment, makes women think and act differently about the family, friendship, marriage patterns, in short almost everything. We find that a majority of educated women hope to have self choice love marriages. However, they accept the parent's choice of a partner only after seeing the boy. This compromise is due to non availability of opportunities. In western societies like the USA and Canada dating and setting up a separate establishment at a young age are practised. The chances of a self choice marriage are abundant. India is in a transitory phase. Educated girls continues to stay in their natal home till a marriage is arranged for them. Even employed women who are economically independent prefer to leave the final decision in marriage to their parents.

It must be stressed that social mobility occurs fairly slowly and to a relatively small degree, even in modern industrial societies. Most socially mobile individuals only move slightly up or down in the class hierarchy. This is one of the reasons why social mobility among women in the family is rather low. Besides this, even in advanced socieites like the Russia, there is almost complete eqaulity with men in employment, education, marriage friendship and other matters. Here also it was noticed that women voluntarily choose to be in a subordinate postion in the family. This is basically for pattern maintenance and proper socialisation of childern. In the traditional Indian setting also pattern maintenance is relieved by our authoritarian structure, which emphasised superordination and subordination of the family members, resulting in inequality.

We have to recognise the improvement in the status of women regarding the liberty to choose any branch of education, to be gainfully employed, power in decision making and inter spouse communication. These are some of the more important indices of the position of women in any society. We can, therefore, say that due to family mobility Indian women have found their rightful place in the Indian family.

It is seen that education is the key to social mobility. As the saying goes, if a man is educated it is for his benefit, if a woman is educated, the entire family is benefited by it. In the transitional phase the position of women is slowly changing . If a daughter is educated, the father is more prepared to counsel with her than with his illiterate wife. Even in a nuclear family set up the husband of an educated woman prefers to discuss problems with her. In the intital phase where girls were given education , it was with the intention of getting good husbands who were employed in government offices, Education alone will enhance the position of women in India. They have the advantage of an infrastructure of a legal executive machinery working for their eqality. Education fosters autonomy, individuation and rationality in women. These make them companions for their husbands.

Employed women also increase the class smobility of the family . However a word of caution is necessary. A majority of our women are illiterate. The benefits are limited to a group of highly educated

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

women. Society is then in a transitory phase since a majority of rural and urban women are still bound by the shackles of a tradition which gives them a lower status than men. The male psyche is such that they cannot visualise their wives being more educated or earning more money . Unless an attitudinal change occurs, the positoin of women is bound to be inferior.

In Indian society, the position of Muslim women, in spite of the provision of mehr talaks (divorce) and remarriage is still much lower than Hindu women because more Muslim women are illiterate.

In the case of the christains and parsees, education and employment of women outside their home came much earlier. Therefore we find their position superior to that of Hindu women. Among Catholics divorce is not allowed and yet, because of education and employment, women are in a better position.

We conclude that eduction is the major factor in enhancing the position of women in any society.

REFERENCES

1. Agarwala, B.R.,"Caste and Joint Family in a Mobile Commercial Community" Sociological Bulletin Vol. IV, No.2
2. Agnew, Vijay, 1979, Elite Women in Indian Politics, New Delhi, Vikas Publishing house.
3. Barber ernard, 1957, A Comparative Analysis of Structure and Process, New York: Harcourt Brace and Company.
4. Bedekar, Maltibai, 1977, " Women in Maharashtra," in A.K. Bhagwat (ed.), op cit.
5. Bhagwat, A.K. (ed.), 1977, Maharashtra -A Profile, Kolhapur: V.S. Khandekar.
6. Chakraborty, Krishna, 1978, The Conflicting Worlds of Working Mothers, Calcutta: Progressive Publishers.
7. Damle, Y.B. 1966 " College Youth in Poona. A Study of Elite in the Making " NIMH Project Deccan College (Poona)
8. Das, Man Singh (ed)., 1978, The Family in Asia, New Delhi: Vikas.

■■■

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

Self-multiplicative Irony in Doctor Faustus

Dr. Deepali Sharma
Dept. Of English
Durga College, Raipur (C.G.)

Dr. Faustus is one of the four powerful tragedies written by Christopher. Marlowe. The other three are – Tamburlaine in two parts (2) The Jew of Malta and (3) Edward II. Each one of these tragedies revolves round one central personality who is consumed by the lust for power, beauty or knowledge. Faustus' self deception, his overweening pride, his desires and his reaction to the consequences of his actions ring true for every man. Doctor Faustus is a universal portrait of the dark side in each of us.

Kierkegard truly said, "In order to exist as an individual self one has to renounce mere intellectualism because this is a great hindrance to existential living and to establishing an existential relationship to God or ultimate reality." (41)

We are familiar with the expression, "As you sow, so shall you reap." This is the law of Karma. When a person does wrong and becomes successful in doing so, he is materialistically profited, but the law of Karma tells us that he has disturbed the moral balance of the universe. According to this law, the moral balance will vindicate itself by reacting violently upon his personality. Consequently, he will suffer in various ways. He will reap as he has sown. First of all, he will suffer in a spiritual way. This action produces a considerable drop in his level of consciousness. Such things as happiness and joy depend upon our level of consciousness. The plane on which we think and live. This lowering of the level of consciousness bring in its trial other disastrous consequences.

Doctor Faustus, a play by Christopher Marlowe is a unique achievement of the writer ranking among the tragic masterpieces of all time. The play portrays the damnation of human soul with greater tragic power than it had ever before been portrayed in drama evoking terror, pity and a sense of human loss that are the ingredients of tragedy according to Aristotle.

As we know, human nature is the most paradoxical phenomenon because many contradictory elements are embedded in it. The limitless reservoir of energy is one aspect of human personality. Looking to the other side of human nature, we find the rational side. There is conscience, the stern daughter of the voice of God. There is the human ability to hear the voice of God and enter into communion with the spiritual dimension and the eternal verities. The sense of higher values at the heart of

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

human nature has an uplifting, ennobling influence on us, as a result of which we are never satisfied with what we are, with our embodied animal existence. We are perpetually looking for something, reaching out for something higher and greater and nobler, longing for perfection and infinity. It is true man is finite but he is always reaching out for the infinite. We see within human beings the possibility of descending lower than beasts or of rising higher than angles. What makes the difference? The answer is our conscience, intelligent self-control and organised living.

Faustus is introduced by the chorus in the play who describes his humble birth, his excellence in scholarship, his ambitions nature and his evil desire to do magic.

"His waxen wings did mount above his reach
And, melting, heavens conspired his overthrow;
For, falling to a devilish exercise
And glutted now with learning's golden gifts,
He surfeits upon cursed necromancy." (21-25)

A Good Angel tries to persuade Faustus to reject magic and instead look to God; a Bad Angel encourages him to continue with his plan. In his first attempt he conjures Mephistophilis who asks him to sign a bond saying that Faustus gives his soul to Lucifer for 24 yrs and for this period he is going to rule over the world. Soon he becomes famous in the world. When the span comes to an end he suffers agony. His body was torn to pieces by the devils. The chorus laments that a man with such fine possibilities was so utterly lost.

"Cut is the branch that might have grown full straight,
And burned is Apollo's laurel bough
That sometime grew within this learned man.
Faustus is gone: regard his hellish fall,
Whose fiendful fortune may exhort the wise,
Only to wonder at unlawful things.
Whose deepness both entice such forward wits
To practise more than heavenly power permits. (124-131)

Dr. Faustus is a play nearer to the psychic experience of the modern man who experiences a split personality and copes with it through the stratagems of neurosis. For Kenneth L. Golden, "Like modern man, Faustus is the victim of splitting of will. He rejects Christianity because it would hamper

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

his boundless desires, yet he cannot escape Christianity or at least certain aspects of it – especially guilt and the sense of sin that leads to despair...

Faustus's neurosis – the split dissociated nature of his psyche – is a match for any of the 'double thinking of the modern man's mind." (203-4)

The twin themes of salvation and damnation, like The Good and Bad Angels, are in tension throughout the play. The emphasis on damnation over salvation is a reflection of Faustus's own predilections, that is to say his own conscience. But in the way that damnation is approached is another antithesis or opposition of themes – pleasure and pain, Faustus is driven forth by love of exotic pleasures and by excessive fear of pain. This pleasure culminates in his taking the spirit of Helen as his paramour and his delight in seeing the parade of the Seven Deadly Sins shows symbolically his love of all damnable pleasure. Faustus, on the brink of despair turns to repent, then repents of repentance when he is once again visited by the cruel Mephistophilis. This oscillation between despair and repentance is a characteristic of Faustus's mind and is indicative of consistency paradox in his nature. This is what we call Dissociative identity disorder or split personality Dr. Faustus's Circadian rhythm is disturbed and as a result of this his end is disastrous.

Marlowe's Dr. Faustus is a titanic character in front of whom the other characters look like tiny Lilliputians surrounding Gulliver (Dr. Faustus). He has a dazzling and dominating personality. As mentioned earlier, the play is based on Aristotle's views on tragedy. The greatest tragic flaw (Hamartia) in his character is that he wants 'to gain a deity.' (60) We find that there is very little external action in play. What is important is the delineation of a psychological or spiritual conflict in the mind of Dr. Faustus. The Good Angel is his voice of conscience who urges him to shun 'that damned book' and the Evil Angel in his voice of passions, with the assurance that by mastering the black magic art he would be "the lord and commander of all elements." (76) There is always a spiritual conflict in his soul between vice and virtue, between will and conscience.

Dr. Faustus is a psychological tragedy. The anguish of a mind (that of Faustus) at war with himself. Thus in the play the conflict is not with one man and the other but with the other self of the man. Conflict is the essence or soul of such tragedy. What makes the play outstanding and unsurpassable is Marlowe's dramatic skill in his description of the waverings and vacillations in Faustus's mind. Thus **Dr. Faustus** is the story of human presumption, temptation, damnation and fall.

"Doctor Faustus is a man who of his own conscious wilfulness brings tragedy and torment crashing down upon his head, the pitiful and fearful victim of his own ambitions and desires." (24)

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

Works Cited

Chaudhari Haridas, **The Essence of Spiritual Philosophy**, Harper Collins Publishers, India Pvt. Ltd., 1992.

Alexander Nigel, **The Performance of Christopher Marlowe's Doctor Faustus**, London. Oxford University Press, 1971.

Kenneth L. Golden, **Myth, Psychology and Marlowe's Dr. Faustus**, College Literature 12, 3, 1985.

Douglas Cole. **Suffering and Evil in the plays of Christopher Marlowe**. New Jersey, Princeton University, 1962.

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

''निगमों का सामाजिक उत्तरदायित्व''
''एन.टी.पी.सी. के विशेष संदर्भ मे''

डॉ. राजेन्द्र शुक्ल
कु. मीना पिंजानी
(सहा. प्राध्यापक)
दुर्गा महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग)

आधुनिक समाज विभिन्न वर्गो के सहयोग से संचालित है, यह अन्योन्याश्रित व्यवस्था है। कार्पोरेट जगत भी अन्य संस्थाओं की भाँति समाज का सदस्य है। व्यवसाय समाज का एक उत्तरदायी घटक है। अतः इनका कार्य नैतिकता से परे नही हो सकता। गुडपेस्ट मैथ्यूज के अनुसार ''एक निगम भी चेतना रखता है और रखनी चाहिये, संगठन के शब्द कोष में नीतिशास्त्र की भाषा का महत्वपूर्ण स्थान है'' [1] किसी भी व्यवसाय की दीर्घकालीन सफलता के लिए नैतिक सिध्द्रान्तों का पालन अनिवार्य है। समाज के बिना व्यवसाय की कल्पना नहीं की जा सकती, इसलिये कार्पोरेट जगत को समाज के प्रति अपना दायित्व निर्वहन करना चाहिये। कोई भी उत्तरदायित्व मानवीय हितों को प्राथमिकता देता है। इसलिये सामाजिक उत्तरदायित्व को मानवीय दर्शन माना गया है। इस प्रकार समाजिक उत्तरदायित्व में व्यावसायिक गतिविधियाँ इस प्रकार निश्चित की जाती है कि जिससे जनकल्याण में वृद्धि हो सके, समाज की बुनियादी आवश्यकताओं के विकास के साथ–साथ समाज की स्थिरता एवम् सुदृढ़ता बनी रहे। आधुनिक युग में सामाजिक परिवर्तन के कारण जनता की आवश्यकताओं में तेजी से परिवर्तन हुआ है, फलस्वरूप व्यवसायिक परिदृश्य भी परिवर्तित हुआ है। व्यवसाय एक शक्तिशाली सामाजिक संस्था है अतः व्यवसाय को अपनी शक्ति अनुरूप दायित्व को भी स्वीकार करना चाहिये।

वर्तमान में विश्व के सभी देशों में व्यवसायिक शक्ति पर नियंत्रण के लिये वैधानिक प्रावधानों को तेजी से लागू किया जा रहा है। श्रम कल्याण एवम् सामाजिक सुरक्षा न्यूनतम मजदूरी, पर्यावरण एवम् प्रदूषण प्रबन्धन व्यवस्थायें सामाजिक दायित्व को महत्व देती है

जेम्स ई. पोस्ट के अनुसार ''संगठन की वैधानिकता इस बात पर निर्भर करती है कि इसके प्रबन्धक समाज की बदलती हुई दिशा एवम् मूल्यों के प्रति संचेतना की योग्यता रखते हैं।'' [2] इस प्रकार सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना समाज के

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

मूल्यवान साधनों के उत्पादक उपयोग पर बल देती है। फलस्वरूप इसका लाभ व्यवसाय व समाज दोनों को प्राप्त होता है।

भारत में सामाजिक उत्तरदायित्व की अवधारणा का प्रारंभ गाँधी जी के प्रन्यास सिध्दान्त के साथ प्रारंभ हुआ। गाँधीजी के अनुसार ''कोई भी व्यक्ति अपने आपको समाज के सेवक के रूप में देखता है, समाज के लिए जीविको पार्जन करता है, समाज पर ही व्यय करता है तो उसकी आय को उचित माना जायेगा और उसके व्यवसायिक उपक्रम को रचनात्मक कहा जायेगा। इसी सिद्धान्त को आधार शिला मानकर देश के प्रमुख उद्योगपतियों ने समाज के चहुँमुखी विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। टाटा बिड़ला, डेल, एयर टेल, गोदरेज, मारूति, काग्निजेंट आदि विभिन्न कार्पोरेट घरानों ने शिक्षा, चिकित्सा, बालकल्याण साँस्कृतिक कार्यक्रम खेलकूद, बुनियादी एवम् उपयोगी शोधकार्य, पर्यावरण प्रबन्धन आदि क्षेत्रों में सक्रिय योगदान दिया है। प्रस्तुत शोध आलेख में ''नेशनल थर्मल पावर कार्पोरेशन'' द्वारा संपादित सामाजिक उत्तरदायित्वों की विवेचना की गयी है। छत्तीसगढ़ एवम् राष्ट्र के पावर सेक्टर के विकास में इस संस्था का उल्लेखनीय योगदान रहा है। विद्युत निर्माण के साथ–साथ सामुदायिक विकास कार्यक्रमों में भागीदारी पर्यावरण संरक्षण से सम्बन्धित नीति निर्माण एवम् क्रियान्वयन में सक्रिय भूमिका का निर्वहन किया है।

सामाजिक उत्तरदायित्व के संपादन हेतु एन.टी.पी.सी. में सी.एस.आर.बोर्ड तथा एन.टी.पी.सी. फाउन्डेशन की स्थापना की गयी है। इस फाउण्डेशन द्वारा समय–समय पर समाजिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुये विभिन्न एन.जी.ओ. तथा स्थानीय प्रशासन से प्राप्त सुझावों के अनुसार सी.एस.आर. की पॉलिसी तैयार की जाती है एवम् यथा समय इसमें संशोधन भी किया जाता है। सामाजिक उत्तरदायित्वों की पूर्ति हेतु सी.एस.आर. बोर्ड द्वारा एक निश्चित प्रक्रिया अपनायी जाती है। जिसके प्रमुख चरण अग्रलिखित हैं–

1. नियोजन– प्रथम चरण के अंतर्गत सामाजिक उत्तरदायित्व कार्यक्रमों की योजना निर्माण किया जाता है इस हेतु अंशधारकों, कर्मचारी समिति स्थानीय प्रशासन, जन प्रतिनिधि आदि से विचार – विर्मश तथा सामाजिक सर्वेक्षण से प्राप्त सुझावों के आधार पर इस कार्यक्रम की रूप रेखा तैयार की जाती है।

2. क्रियान्वयन – द्वितीय चरण में सामाजिक उत्तरदायित्वों से सम्बन्धित विभिन्न गतिविधियों को पूर्व निर्धारित समयाविधि में पूरा करने का प्रयास किया जाता है। क्रियान्वयन विशेष एजेन्सियों तथा कर्मचारियों के सहयोग से पूरा किया जाता है।

3. पर्यवेक्षण व मूल्याँकन – तृतीय चरण में सामाजिक उत्तरदायित्व

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

कार्यक्रमों की प्रभावशीलता आन्तरिक एवम् बाह्य मूल्याँकन मासिक एवम् त्रैमासिक रिपोर्ट के आधार पर किया जाता है।

4. प्रपत्रीकरण एवम् सूचनाओं का संवहन – अंतिम चरण में सी.एस. आर. कमेटी की रिपोर्ट, ब्रोशर, इन्टरनेट आदि द्वारा इन गतिविधियों का संचार एवं प्रतिपुष्टि की जाती है। सूचनाओं के संवहन एवम् प्रतिपुष्टि से ही किसी भी कार्यक्रम की प्रभावशीलता का मापन किया जा सकता है। इस आधार पर ही सुधार एवं नये सुझावों की जानकारी सम्भव होती है, साथ ही भविष्य की योजना निर्माण में भी सहायक होती है।

एन.टी.पी.सी. द्वारा संचालित सामुदायिक विकास कार्यक्रमों के कुछ उल्लेखनीय प्रयास अग्रलिखित हैं।

1. शिक्षा – किसी भी राष्ट्र के विकास की नींव का आधार शिक्षा होती है, समाज के सतत् विकास के लिये शिक्षा भविष्य का एक सुरक्षित व सफल विनियोग है। एन.टी.पी.सी. द्वारा अपने सी.एस.आर.बजट का 15–20 प्रतिशत भाग शिक्षा पर व्यय किया जाता है। इस संस्था द्वारा 48 स्कूलों का संचालन किया जा रहा है। उच्चशिक्षा के विकास हेतु आई.आई.टी. रायपुर में सहयोग तथा कोरबा में इंजिनियरिंग कालेज की स्थापना के प्रयास किये जा रहे हैं। साथ ही तकनीकी व पोलिटेक्निक कालेज के निर्माण हेतु भी सहायता दी जा रही है। शासकीय स्कूलों में मध्यान्ह भोजन के वितरण हेतु डिलीवरी वैन की सुविधा एवम् ग्रामीण क्षेत्रों में बालिकाओं की शिक्षा, कोचिंग, व्यक्तित्व विकास कार्यक्रम, छात्रवृत्ति, पाठ्य सामग्री, एवम् पोषाक वितरण आदि गतिविधियाँ भी संचालित की जाती है।

2. स्वास्थ्य – आर्थिक एवम् सामाजिक विकास तथा मानवीय कल्याण के लिये स्वस्थ शरीर एक अनिवार्य आवश्यकता है। एन.टी.पी.सी. द्वारा पावर स्टेशन के निकटवर्ती क्षेत्रों में चिकित्सा सुविधायें अनुदानित दर पर प्रदान की जाती है। इसके अलावा नेत्र उपकरणों तथा चिकित्सकीय उपकरणों के क्रय हेतु आर्थिक सहायता प्रदान की जाती है। एन.टी.पी.सी. फाउन्डेशन द्वारा विभिन्न चिकित्सा केन्द्रों में एम्बूलेन्स की सुविधा उपलब्ध करवायी गई है। इसके साथ ही मोबाइल चिकित्सालय स्वास्थ्य शिविर एवं निशुल्क शल्य चिकित्सा सेवा, परिवार नियोजन कार्यक्रम तथा नशा उन्मूलन कार्यक्रमों के माध्यम से वर्ष 2011–12 में 20,000 से अधिक लोगों को लाभान्वित किया है।

3. क्षमता उन्नयन एवं महिला सशक्तिकरण :– जीवन यापन के लिये क्षमता उन्नयन के अवसर प्राप्त होना अनिवार्य है। साथ ही महिला सशक्तिकरण के माध्यम से महिलाओं की सामाजिक आर्थिक स्थिति में सुधार किया जा सकता है।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

समाज को सुदृढ़ आधार और सतत् विकास प्रदान करने के लिये इस संस्थान द्वारा विभिन्न कार्यक्रम आयोजित किये जाते हैं। इसके अंतर्गत कम्प्यूटर रिपेयरिंग, सिलाई, कढ़ाई, ड्रेस डिजाइनिंग, फल परीरक्षक, ब्यूटिशयन आदि के प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किये जाते हैं। इन समस्त गतिविधियों से आसपास के क्षेत्र की महिलाओं को स्वरोजगार हेतु प्रेरित कर आर्थिक रूप से सुदृढ़ किया जाता है।

4. अधोसंरचना विकास :— समाज एवं राष्ट्र को गति प्रदान करने के लिए कुछ सेवाओं एवं सुविधाओं का होना अनिवार्य है विशेष रूप से ग्रामीण जीवन को गति प्रदान करने में एन.टी.पी.सी. की भूमिका उल्लेखनीय रही है। इसके अंतर्गत हैंडपम्प निर्माण, ओवर ब्रिज निर्माण, पानी टंकी, स्ट्रीट लाईट, सड़क निर्माण, सौर उर्जा तकनीक का विकास, श्मशान घाट का विकास स्थानीय हाट — बाजार एवं पंचायत घर के निर्माण कार्य द्वारा समाज के विकास को नया आयाम देने का प्रयास किया जा रहा है।

5. प्राकृतिक आपदा सहायता :— एन.टी.पी.सी. द्वारा अपनी सी.एस.आर. नीति के तहत विभिन्न प्रकार के राहत कार्यों में योगदान दिया जाता है। लेह लद्‌दाख में प्राकृतिक आपदाओं के दौरान बेघर लोगों को आवास सुविधा, उड़िसा में वित्तीय एवं खाद्‌य सामग्री सहायता, सिक्किम में भूकम्प पीड़ितों को वित्तीय सहायता तथा सुनामी से प्रभावित जनता को तकनीकी, वित्तीय एवं मानवीय संसाधनों की सुविधायें प्रदान कर अपना उत्तरदायित्व पूर्ण किया जा रहा है।

6. निशक्त एवं विकलांग व्यक्तियों को सहायता :— एन.टी.पी.सी. फाउन्डेशन शारीरिक रूप से निशक्त एवं विकलांग व्यक्तियों की सहायता हेतु सन् 2004 से पंजीकृत संस्था के रूप में कार्यरत है विकलांग व्यक्तियों की सहायता सामाजिक दायित्व का महत्वपूर्ण अंग है। इसके अंतर्गत ग्रामीण एवं शहरी विकलांगों को ट्राइसाइकल वितरण पोषाक वितरण, विभिन्न प्रकार के श्रव्य दृष्य यंत्र तथा चिकीत्सकीय उपकरणों की व्यवस्था के साथ—साथ इनके लिये विभिन्न प्रकार के शिविरों का भी आयोजन किया जाता है।

उपरोक्त प्रमुख सामाजिक दायित्वों के अतिरिक्त एन.टी.पी.सी. द्वारा अन्य क्षेत्रों में भी यह दायित्व पूर्ण किया जाता है। जैसे — दूरस्थ ग्रामीण क्षेत्रों में आत्म निर्भरता हेतु सहायता, नशा उन्मूलन कार्यक्रम, सेनीटेशन सुविधायें आदि गतिविधियों को स्थानीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर पूर्ण किया जाता है। सामाजिक उत्तरदायित्व के कार्यों को सफलता पूर्वक पूर्ण करने के लिये सरकार एवं विभिन्न संस्थाओं द्वारा एन.टी.पी.सी. को पुरस्कार व सम्मान भी दिये गये हैं। सामाजिक दायित्व में उल्लेखनीय योगदान होते हुए भी कुछ क्षेत्रों में एन.टी.पी.सी.

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

को विशेष रूप से ध्यान देना होगा, जैसे पर्यावरण संरक्षण एवं प्रदूषण की रोकथाम के साथ–साथ खेलकूद एवं सांस्कृतिक गतिविधियों के विकास पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है। छत्तीसगढ़ राज्य विद्युत आधिक्य वाला राज्य माना जाता है। परन्तु अभी भी कुछ गांव ऐसे हैं, जहां अभी तक बिजली नहीं पहुंची है, इस प्रकार विशेष रूप से पावर सप्लाई के क्षेत्र में एन.टी.पी.सी. से समाज की अपेक्षायें हैं। आशा है, भविष्य में उपरोक्त क्षेत्रों में भी समाजिक उत्तरदायित्व को सफलता पूर्वक पूर्ण किया जायेगा।

इस प्रकार सी.एस.आर. के तहत एक निगम अपने कर्मचारियों को सामाजिक विकास में भागीदारी का अवसर प्रदान करता है, इससे उत्पादकता वृद्धि के साथ–साथ कर्मचारियों की सामाजिक गतिविधियों का भी विकास होता है। जो कर्मचारी सी.एस.आर. से जुड़ते हैं, उन्हें समाज के लिये और ज्यादा करने की ताकत व उत्साह मिलता है। सामाजिक उत्तरदायित्व की पूर्ति से निगमों की सामाजिक स्वीकार्यता बनी रहती है, साथ ही संस्था की ख्याति में भी वृद्धि होती है परिणाम स्वरूप दीर्घकाल तक व्यवसायिक अस्तित्व कायम रहता है।

संदर्भ ग्रंथ सूचि

1. उपाध्याय जी., शर्मा आर.एल., दयाल पी., व्यवसाय, सरकार एवं समाज, रमेश बुक डिपो जयपुर 2003।
2. अग्रवाल रमेश चन्द्र, कोठारी एन.एस., व्यवसाय और सरकार, मलिक एन्ड कम्पनी प्रकाशन 1993।
3. गुप्ता सी.बी. आधुनिक व्यवसायिक संगठन एवं प्रबंध, मयूर पेपर बैक्स 2003।
4. अग्रवाल आर.सी., प्रबंध अवधारणायें एवं संगठनात्मक व्यवहार, साहित्य भवन पब्लिशर्स एन्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स प्रा. लि. 2007
5. Nirjharni House Jurnal of NTPC
6. दैनिक समाचार पत्र – दैनिक भास्कर, पत्रिका एवं नवभारत
7. Website - www.ntpc.co.in

DMV Journal
Annual Journal of Durga Mahavidyalaya, Raipur (C.G.)

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

अरविन्द चिंतन

डॉ. अर्चना गोमास्ता
सहा. प्राध्यापक (शिक्षा विभाग)
दुर्गा महाविद्यालय, रायपुर

महर्षि अरविन्द भारतीय नव–जागरण युग एवं राष्ट्रवाद के अप्रतिम प्रतिनिधि थे। उनके नैतिक, बौद्धिक एवं आध्यात्मिक उपलब्धियों ने न केवल उनके युग को प्रभावित किया वरन् वर्तमान में भी वे बुद्धिजीवियों के लिये प्रेरणा के असीम स्त्रोत बने हुए हैं, उनकी सुप्रसिद्ध रचना 'दि लाइफ डिवाइन' एवं 'सावित्री' ने आध्यात्मिक काव्य साहित्य के क्षेत्र में नवीन युग का सूत्रपात किया। आधुनिक भारतीय विचारकों में उनको सर्वाधिक सुव्यवस्थित विचारक और अहिंसीय प्रतिभा के धनी तत्व दर्शी के रूप में माना जाता है। गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर ने विचार व्यक्त किया था कि उनके विचारों के माध्यम से ही समस्त विश्व भारत को वास्तविक रूप में पहचानेगा।

महर्षि अरविन्द (1872–1950) का जन्म 15 अगस्त 1872 में हुआ था। यह एक अद्‌भुत संयोग है कि उनके जन्म के 75 वर्ष बाद 15 अगस्त 1947 को भारत सदियों की गुलामी से स्वतंत्र होकर एक नवीन राष्ट्र के रूप में उदित हुआ।

अरविन्द बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। वे एक उत्कृष्ट कवि, प्रखर आध्यात्मवादी उच्चकोटि के दार्शनिक एवं अद्‌भुत राष्ट्रवादी थे। उनका संदेश सिर्फ भारतवासियों के लिये नहीं होकर समस्त मानवजाति के लिये था जिसकी आवश्यकता आज भी है। उनके व्यक्तित्व में आध्यात्मिकता और राजनीति के मध्य एक अटूट संबंध समाहित होने के कारण वे किसी भी अन्य राष्ट्रवादी नेता की राजनीति से सर्वथा भिन्न रहे। उनकी राजनीति एक योगी की राजनीति थी। महर्षि अरविन्द की यह स्पष्ट धारणा थी कि विश्व के लिये भारत का एक महान लक्ष्य निर्धारित है और वह लक्ष्य है समस्त मानवजाति को आध्यात्मिक नेतृत्व प्रदान करना और उसको मानव सभ्यता की प्रगति के एक नवीन सृजनात्मक समन्वय की दिशा में मार्ग दिखाना।

अरविन्द यह जानते थे कि जब तक भारत पराधीन और शक्तिहीन रहेगा, वह अपने निर्धारित लक्ष्य की दिशा में आगे नहीं बढ़ सकेगा। इसीलिये उन्होंने सर्वप्रथम स्वाधीन, संगठित तथा शक्तिशाली राष्ट्र बनने का आह्वान किया। उन्होंने अपने देशवासियों के समक्ष औपनिवेशिक स्वराज्य के उदारवादी स्वरूप के स्थान पर एक पूर्ण स्वतंत्र व स्वाधीन भारत का लक्ष्य रखा अरविन्द राष्ट्रीय स्वाधीनता का मूल्य उसके स्वयं

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

में एक साध्य होने के कारण नहीं वरन एक उच्चतर साध्य के लिये एक साधन के रूप में समझते थे। वह भारत को शक्तिशाली, स्वतंत्र केवल इसलिये नहीं देखना चाहते थे कि वह जनता का मौलिक कल्याण कर सके और विश्व में सम्मानजनक स्थान प्राप्त कर सके, बल्कि वे चाहते थे कि भारत की आध्यात्मिकता की विजय हो और वह सम्पूर्ण मानव समाज का पथ–प्रदर्शक और सहायक बन सके। उन्होंने चेतावनी दी थी कि भारत को सम्पन्न औद्योगिक राष्ट्रों का अंधानुकरण नहीं करना है। यदि उसने ऐसा किया तो वह अपनी आत्मा को ही खो बैठेगा और प्राचीन भारत सर्वथा लुप्त हो जायेगा। यदि ऐसा हुआ तो यह भारत और विश्व के लिये दुःखद घटना होगी।

उनका यह अटल विश्वास था कि संसार को एक शक्तिशाली तथा स्वतंत्र भारत की आवश्यकता है जो उसकी आध्यात्मिकता का संदेशवाहक बन सके। अरविन्द की भारतमाता की कल्पना भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के उदारवादी नेताओं से भिन्न थी। उदारवादी 'मातृभूमि' शब्द का उपयोग करते थे जबकि अरविन्द ने 'माता' शब्द का उपयोग किया दूसरे शब्दों में भारत एक वास्तविक सजीव और आध्यात्मिक सत्ता है। यह विचार एक बौद्धिक धारणा मात्र न होकर मानवता में विकासमान आत्मा की ही शक्ति है। अरविन्द भारत को अक्षय शक्ति से ओतप्रोत, महान आध्यात्मिक धारणा की सजीव उर्जा के रूप में देखते थे।

कतिपय विचार –

अरविन्द के राजनीतिक विचार उनके जीवन की तीन प्रमुख अवस्थाओं के प्रतीक हैं। प्रारंभिक चरण में उन्होंने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की आलोचना उसके संकुचित, सीमित उद्देश्य और दोषपूर्ण, प्रभावहीन साधनों के लिये की। ब्रिटिश सरकार की तीखी आलोचना कर गुप्त संगठन द्वारा एक सशस्त्र विद्रोह के लिये आधार तैयार करने का प्रयास किया। अपने जीवन के द्वितीय चरण में वे खुलकर सामने आये। उन्होंने बंगाल में राष्ट्रवादी दल का नेतृत्व किया और अभिनव राष्ट्रवाद के जनक बने। 1910 में सक्रिय राजनीतिक जीवन से अवकाश ग्रहण कर पांडीचेरी (वर्तमान पुदुचेरी) में जा बसे जहाँ वे योगाभ्यास तथा साहित्यिक व दार्शनिक साधना में लग गये। उन्होंने 'मानव एकता' के आदर्श का संदेश देकर 'अति मानव' के अवतरण के लिये तैयारी की।

प्राथमिक चरण में उन्होंने कांग्रेस की कटु आलोचना करते हुए कहा था – 'जब मैं कांग्रेस के विषय में यह कहता हूँ कि इसके उद्देश्य भ्रमपूर्ण है, जिस भावना

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

को लेकर यह उसकी पूर्ति करना चाहती है, वह सच्चाई एवं संलग्नता की भावना नहीं है इसके साधन सही नहीं है। आज हमारी स्थिति उस अंधे व्यक्ति की तरह है जिसका मार्गदर्शन यदि कोई अंधा नहीं तो एक काना कर रहा है। राष्ट्रीय कांग्रेस वास्तव में राष्ट्रीय नहीं और उसने राष्ट्रीय बनने का प्रयास ही नहीं किया।'

अरविन्द का यह दृढ़ विश्वास था कि जब हममें एक महान तथा सच्ची देशभक्ति जागृत हो जायेगी तब हम इंग्लैण्ड द्वारा फेके गये जूठे टुकड़ों के पीछे दौड़ना छोड़ देंगे।

यह स्मरणीय है कि तत्कालीन भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के उद्देश्यों तथा साधनों में स्वामी विवेकानंद एवं गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर को भी कोई आस्था नहीं थी। अरविन्द के अनुसार कांग्रेस की दुर्दशा का मुख्य कारण यह था कि उसने उस श्रमजीवी वर्ग की ओर ध्यान नहीं दिया जो अज्ञानता और संकट के गर्त में पड़ा हुआ था। अरविन्द के नेतृत्व में राष्ट्रवादी बंगाल के राजनीतिक जीवन में एक महान शक्ति इसीलिये बन सके क्योंकि उन्होंने श्रमजीवी वर्ग को जागृत कर दिया था। आगे चलकर महात्मा गांधी ने 'सविनय अवज्ञा' तथा 'भारत छोड़ो आंदोलन' के अपने कार्यक्रमों के लिये जन साधारण का सक्रिय समर्थन प्राप्त किया और सफल रहे। अरविन्द ने इस बात की ओर ध्यान आकृष्ट किया कि अंग्रेजों द्वारा स्थापित शासन प्रणाली देश की उस समय की स्थितियों के अनुकूल नहीं थी। तत्कालीन प्रचलित शिक्षा प्रणाली की उन्होंने इस आधार पर आलोचना की कि उसने राष्ट्र की आत्मा का ही हनन कर दिया है। कालांतर में उन्होंने राष्ट्रीय कांग्रेस से वैचारिक संधि कर ली। गांधीजी का अहिंसक असहयोग तथा सविनय अवज्ञा कार्यक्रम 1906 में, अरविन्द द्वारा प्रतिपादित, निष्क्रिय प्रतिरोध का ही रूपांतरित स्वरूप था।

अलीपुर जेल में उनके एक वर्ष के निवास से उनके विचारों में क्रांतिकारी परिवर्तन कर दिया। उन्होंने राजनीति के क्षेत्र का त्याग कर अपना सम्पूर्ण समय ध्यान योग साधना में लगाने का संकल्प लिया। इस काल में उनका राजनीतिक चिंतन उनकी रचनाओं द्वारा अभिव्यक्त हुआ और वे इस परिणाम पर पहुंचे कि भारत की प्राचीन आध्यात्मिकता को पुनजागृत किये बिना उसका पुनरूत्थान असंभव है। योग के द्वारा ही वह अपनी एकता तथा स्वतंत्रता को प्राप्त करने की शक्ति प्राप्त कर सकता है।

अरविन्द का राष्ट्रवाद कुछ महत्वपूर्ण बातों में उस राष्ट्रवाद से भिन्न था जिसकी वकालत पूर्व के राष्ट्रवादी नेताओं ने की थी। और अरविन्द के शब्दों में –

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

''राष्ट्रवाद एक राजनीतिक कार्यक्रम मात्र नहीं है, राष्ट्रवाद एक धर्म है, जो ईश्वर से आया है। राष्ट्रवाद ईश्वरीय बल से जीवित रहता है और इसको कुचल देना संभव नहीं है चाहे इसके विरूद्ध कैसे ही शस्त्रों का प्रयोग क्यों न किया जाये।''

अरविन्द देश में सोई हुई आध्यात्मिक शक्तियों को जागृत करने में सफल हुए। उनकी सफलता का यही कारण था कि उन्होंने राष्ट्रवाद को एक ज्वलंत धार्मिक भावना बना दिया।

अरविन्द का महानतम योगदान यह है कि उन्होंने अपने देशवासियों के सम्मुख पूर्ण स्वाधीनता का आदर्श रखा। अपने राष्ट्रवाद के द्वारा उन्होंने राष्ट्रीय आंदोलन को अनेक नवीन भाव व दिशा प्रदान की और भौतिक स्तर से ऊपर उठाकर उच्चतर आध्यात्मिक स्तर पर रख दिया। उन्होंने यह समझाने का प्रयास किया कि राष्ट्रीय आंदोलन का चरित्र एकमात्र आर्थिक नहीं था, यद्यपि उसका उद्देश्य देश का '' आर्थिक कल्याण भी था। वह विशुद्ध रूप से राजनीतिक आंदोलन भी नहीं था जिसका उद्देश्य विदेशी शासन का अंत करना था। वह एक तीव्र आध्यात्मिक आंदोलन था। उन्होंने भारत माता की धारणा प्रस्तुत करके और राष्ट्रवाद को एक धर्म, परमात्मा के प्रति अपने कर्तव्य का एक अंग बनाकर उसे आध्यात्मिकता का रूप दे दिया। 'मानव एकता' का उनका आदर्श राजनीति के क्षेत्र में एक अप्रतिम विचार है। कलकत्ता छोड़ने के समय उन्होंने अपने देशवासियों को अपने पत्र में लिखा था।

''हमारी देशभक्ति का आदर्श प्रेम तथा बंधुत्व के ऊपर आधारित है और वह राष्ट्र की एकता से परे देखता है और अंततोगत्वा मानव जाति की कल्पना करता है। यह बंधुओं, समान तथा स्वतंत्र मनुष्यों की एकता होगी स्वामी तथा दास की भक्षक और भक्षिक की एकता नहीं।''

संदर्भ ग्रंथ –

1. डॉ. व्ही.पी. वर्मा – माडर्न इंडियन पोलिटिकल थॉट 1967
2. जे.पी. सूद – आधुनिक भारतीय राजनीतिक विचार की मुख्य धारायें – 1994

■■■

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

कला संकाय के शहरी छात्रों के विभिन्न विषयों में शैक्षिक उपलब्धि पर सामाजिक समायोजन का अध्ययन

डॉ. संजीवनी ठाकुर
सहायक प्राध्यापक, दुर्गा महाविद्यालय

सारांश –

प्रस्तुत अध्याय छात्र वर्ग से संबंधित है। यह समस्य किशोर विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि तथा सामाजिक समायोजन से जुड़ी हुई है। किशोरावस्था में सबसे ज्यादा समस्या छात्रों के समायोजन में होती है। छात्र का जब समाज में कुसमायोजन होता है। तो इसका व्यापक असर छात्र के शैक्षिक उपलब्धि पर भी पड़ता है। ऐसी स्थिति में छात्र एवं अभिभावक दोनों के सामने समस्या खड़ी हो जाती है। यदि समय रहते इस समस्या का समाधान नहीं किया गया तो, छात्र भ्रष्ट हो सकते हैं अतः अभिभावकों को अपने संतान को सुरक्षित, स्वस्थ एवं सहयोगी वातावरण प्रदान करना चाहिये ।

किशोर बालक, किशोरावस्था की अनेक समस्याओं से घिरे रहता है तथा दिग्भ्रमित होकर गलत राह चुन लेता है। ऐसे में अभिभावकों को उनकी बात सुनना चाहिये और स्नेहपूर्वक उनकी क्षमताओं के अनुरूप प्रेरणा देकर प्रोत्साहित करना चाहिये ।

भूमिका –

किशोरावस्था को जीवन का बंसतकाल कहा जाता है । परंतु यह अवस्था अभ्यस्त किशोर का जीव अस्त व्यस्त हो जाता है। अपनी समस्याओं और दूसरों की अपेक्षाओं से त्रस्य किशोर के लिये यह समय एक तूफान और दबाव से भरा होता है, जिससे गुजरते हुए वास्तव में किशोर का एक नया जन्म होता है । किशोर अपने में हुए इस परिवर्तन को सहन नहीं कर पाता फलतः उसके अंदर निराशा, तनाव, भावनात्मक औंधता पनपने लगती है। वर्तमान समय में हम देखते हैं कि किशोरों में विध्वंसक प्रवृत्ति की अधिकता पायी जा रही है। यदि समय रहते बालक को समायोजित किया जाय तो कुसमायोजन पर कुछ हद तक अंकुश लगाया जा सकता है।

उद्देश्य –

विद्यार्थी द्वारा शैक्षिक उपलब्धि की प्राप्ति ही विद्यालय का प्राथमिक उद्देश्य रहता है। एवं इस मंजिल की सीमा प्राप्ति ही विद्यालय की सफल योजना को दर्शाता है

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

सामाजिक समायजन किस तरह शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित करता है। अतः शैक्षिक उपलब्धि पर इसके प्रभाव का अध्ययन आवश्यक है ।

परिकल्पना –

शहरी छात्रों के शैक्षिक उपलब्धि पर सामाजिक समायोजन का धनात्मक प्रभाव प्राप्त होगा ।

न्यायदर्श –

प्रस्तुत शोध कार्य हेतु रायपुर जिले में अध्ययनरत छात्रों का चयन किया गया है छात्रों का संकलन कला संकाय से किया गया है। कला संकाय के 60 छात्रों पर परीक्षण किया गया । स्वनिर्मित सामाजिक समायोजन हेतु स्वनिर्मित उपकरण का प्रयोग किया गया । शैक्षिक उपलब्धि हेतु 10वीं कक्षा के बोर्ड के प्राप्तांक लिये गये।

शोध की प्रविधि एवं प्रक्रिया –

सामाजिक समायोजन एक सामूहिक परीक्षण है। यह प्रश्नावली स्वप्रशासनिक प्रश्नावली है। छात्रों को उनके विचारों के आधार पर उत्तरों को पूर्णतः गोपनीय रखा गया। इस प्रश्नावली को भरने के लिये छात्रों को 30 मिनट का समय दिया गया । अंकों का विभाजन अधिकतम 10 बहुधा 8 अनिश्चित 6 अंक प्रायः 3 अंक, कभी नहीं के लिये अंक निर्धारित था।

परिणामों का विश्लेषण

क्रमांक	शैक्षिक उपलब्धि XI	व्यक्तिक प्र्याप्तता	अंतरव्यक्तिक प्र्याप्तता	सामाजिक प्र्याप्तता	कुल सामाजिक समायोजन
1.	हिंदी	.3266	.1310	.0713	.1449
2.	अंग्रेजी	.2727	.0687	.0340	.1655
3.	संस्कृत	.0513	.391	.2050	.1024
4.	गणित	.0848	.0909	.1928	.0266
5.	विज्ञान	.4472	.3116	.4476	.3951
6.	सामा.विज्ञान	.2620	.2503	.3119	.5407
7.	कुल प्राप्तांक	.3524	.1709	.2172	.3455

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

तालिका से स्पष्ट है कि सामाजिक विज्ञान और कुल प्राप्तांक की शैक्षिक उपलब्धि का सामाजिक समायोजन के साथ धनात्मक संबंध है । विज्ञान कुल प्राप्तांक ये दोनों .05 स्तर पर सार्थक धनात्मक सहसंबंध प्रदर्शित करते है। जबकि सामाजिक विज्ञान .01 स्तर पर सार्थक सहसंबंध प्रदर्शित करता है । अतः यह परिकल्पना धनात्मक मानी जायेगी।

निश्कर्श –

प्रस्तुत अध्ययन सामाजिक समायोजन और शैक्षिक उपलब्धि विद्यार्थी वर्ग से संबंधित है। यह समस्य किशोर विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि से जुड़ी हुई है। अतः निश्चित ही इसकी कुछ शैक्षिक उपादेयता है। जिसका लाभ छात्र अभिभावक विद्यालय तथा समाज उठा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ –

अनुसंधान की विधियाँ – डॉ. एच. के. कपिल
शिक्षा आयोग की रिपोर्ट – (1964–66) शिक्षा मंत्रालय
तुलनात्मक शिक्षा – डॉ. श्याललाल कौशिक एवं कृष्ण कुमार बीजावत,
परीक्षक – शैक्षिक शिक्षा मण्डल अप्रेल–जून 1987
बुनियादी शिक्षा – भाई योगेन्द्रजीत
मुदलियार कमीशन – सुझाव और समीक्षा – डॉ. सुरेश भटनागर
माध्यमिक समाजोपयोगी – डॉ. के. सी. भलैरूया
शैक्षिक अनुसंधान – एच.सी. सिंहा

■■■

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

शिक्षा में सम्प्रेषण का महत्व

प्रो.नमिता खोटेले,
सहायक प्राध्यापक (शिक्षा),
दुर्गा महाविद्यालय, रायपुर

प्रो.कुसुम राठौर,
सहायक प्राध्यापक (शिक्षा),
दुर्गा महाविद्यालय, रायपुर

साधारण शब्दों में सूचनाओं अथवा विचारों का आदान प्रदान करना सम्प्रेषण है। सम्प्रेषण एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें विभिन्न प्रकार के हावभावों के माध्यम से भी व्यक्ति अपने विचारों का आदान प्रदान करता है। सम्प्रेषण दो या दो से अधिक व्यक्तियों में होने वाली सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है। एण्डरसन के अनुसार ''सम्प्रेषण एक गत्यात्मक प्रक्रिया है, जिसमें व्यक्ति चेतनतया अथवा अचेतनतया दूसरों के संज्ञानात्मक ढ़ांचे को सांकेतिक हावभाव आदि रूप में उपकरणों या साधनो द्वारा प्रभावित करता है।

सम्प्रेषण सामाजिक जीवन की अनिवार्य प्रक्रिया है। शिक्षा के क्षेत्र में यह अति आवश्यक है। शिक्षण कार्य सम्प्रेषण के द्वारा ही सम्भव है। विद्यालय में शिक्षक, शिक्षार्थी, प्रधानाचार्य, अन्य कर्मचारियों में सम्प्रेषण प्रक्रिया चलती रहती है। प्रभावी सम्प्रेषण शिक्षण को प्रभावी बनाता है।

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया एवं सम्प्रेषण :

सामान्य जीवन में सम्प्रेषण प्रक्रिया बहुत सरल मानी जाती है। शिक्षा के क्षेत्र में प्रभावषाली सम्प्रेषण द्वारा ही अंतःक्रिया सम्भव है। अंतः क्रिया द्वारा ही शिक्षार्थियों का व्यवहार परिवर्तन किया जाता है। शिक्षक द्वारा दी गई सूचनाओं व संदेश को छात्रों द्वारा जब ग्रहण किया जाता है तभी अन्तःक्रिया होती है। केवल विचारों को सुनने से ही सम्प्रेषण प्रक्रिया पूर्ण नहीं होती। शिक्षण उद्देश्य में भी यह निर्धारित किया जाता है कि छात्र विषय वस्तु को सुनकर ग्रहण कर सकेंगे। सुनकर ग्रहण करने से ही उनमें व्यवहारगत परिवर्तन हो सकता है।

सम्प्रेषण एक सामाजिक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा मानवीय संबंध स्थापित होते है, दृढ़ होते हैं तथा विकसित होते हैं। सम्प्रेषण की प्रक्रिया, सामाजिक संरचना में ऐसे गुथे हुए कि बिना सम्प्रेषण के सामाजिक जीवन की कल्पना करना ही मुश्किल होता है।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

सम्प्रेषण प्रक्रिया मॉडल

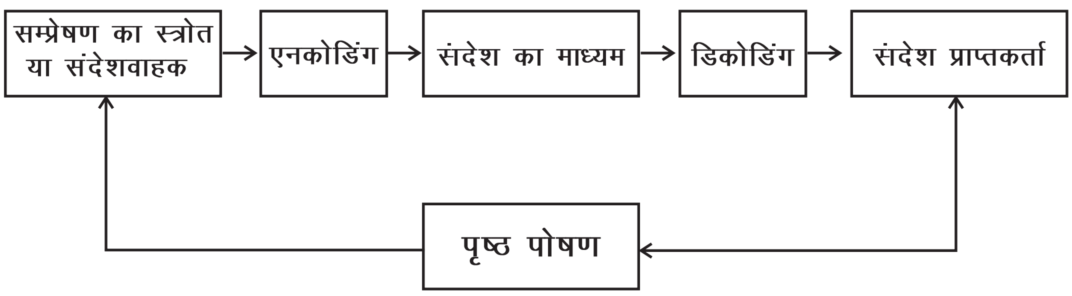

उपरोक्त मॉडल के अनुसार जो व्यक्ति संदेश भेजता है, वह संदेश बनाता है, उसे लिखता है (Encoding) फिर किसी न किसी माध्यम के द्वारा जैसे रेडियो, टेलीफोन, तार, भाषण आदि संदेश प्रेषित किया जाता है। प्रेषित संदेश जहां पहुंचता है, वहां उसे पढ़कर (Decode) करते हैं और संदेश जिसके लिए उसे उस तक पहुंचाते है। यह व्यक्ति यदि आवश्यकता होती है तो संदेश प्राप्ति की सूचना देता है (Feedback)।

प्रभावशाली शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के लिए प्रभावशाली सम्प्रेषण आवश्यक है। प्रभावशाली शिक्षण में शिक्षक एवं छात्र मिलजुलकर प्रभावशाली सम्प्रेषण के लिए प्रयास करते हैं। हरबर्ट महोदय के अनुसार, ''शिक्षण का प्रमुख कार्य विचारों तथ्यों एवं सूचनाओं को छात्रों तक पहुंचाना है।'' शिक्षक इस हेतु जितने प्रभावशाली ढ़ंग से इनका सम्प्रेषण करता है, वह उतना ही सफल शिक्षक कहा जाता है। शिक्षण एवं प्रशिक्षण के क्षेत्र में छात्रों, छात्राध्यापकों को जटिल नियमो, विधियो, पद्धतियों तथा शिक्षण व्यूह रचनाओं (नीतियों) के विषय में ज्ञान प्रदान करने के लिए अनेक सम्प्रेषण तकनीकों का प्रयोग किया जाता है। शिक्षक सैद्धांतिक रूप से शिक्षण हेतु अपनी पाठ योजनाएं बनाता है। शिक्षण विधियों, नीतियों, प्रविधियों आदि के प्रयोग पर विचार करता है और अपने विचार तथा योजनाओं के अनुसार, शिक्षण हेतु इन्हे क्रियान्वित करने में सम्प्रेषण का प्रयोग करके छात्रों को विषय वस्तु समझाने में सफलता प्राप्त करने का प्रयास करता है। इसके लिए आवश्यक है कि शिक्षक सम्प्रेषण की कला में निपुण हो। जब तक शिक्षक सम्प्रेषण की कला में निपुण नहीं होगा, वह अपने शिक्षण को सक्रिय नहीं बना सकता है।

प्रभावशाली शिक्षणअधिगम प्रक्रिया को गत्यात्मक, सक्रिय तथा जीवन्त बनाने के लिये सम्प्रेषण को अनवरता या निरन्तरता आवश्यक होती है। शिक्षण में सम्प्रेषण को

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

कई प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है, जैसे शाब्दिक सम्प्रेषण, शैक्षिक तथा सार्वजनिक सम्प्रेषण आदि।

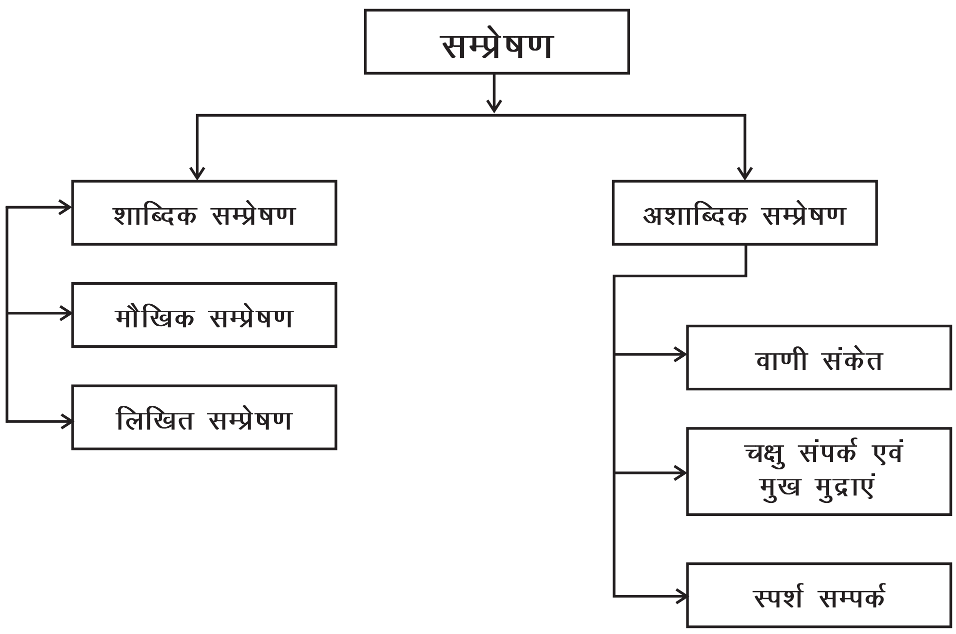

शाब्दिक सम्प्रेषण में सदैव भाषा का प्रयोग किया जाता है, यह लिखित या मौखिक हो सकता है लिखित सम्प्रेषण में संदेश देने वाला एवं प्राप्त करने वाले व्यक्ति का आमने. सामने होना आवश्यक नहीं है जबकि मौखिक सम्प्रेषण में संदेश देने वाला तथा संदेश ग्रहण करने वाला दोनो ही परस्पर आमनेसामने होना आवश्यक है, इसमें वाणी द्वारा तथ्यों एवं सूचनाओं का आदान प्रदान किया जाता है।

अशाब्दिक सम्प्रेषण में भाषा का प्रयोग नहीं किया जाता है। इसमें वाणी संकेत, चक्षुसम्पर्क तथा मुखमुद्राओं के प्रयोग एवं स्पर्शसम्पर्क आदि प्रमुख प्रकार के सम्प्रेषण होते हैं। वाणी सम्प्रेषण में विचारों तथा भावनाओं की अभिव्यक्ति व्यक्तिगत रूप से अथवा छोटेछोटे समूहों में आमनेसामने रहकर वाणी द्वारा की जाती है।

व्यक्तिगत सम्प्रेषण में चक्षु सम्पर्क तथा मुख मुद्राओं का प्रदर्शन अत्यंत प्रभावशाली माना जाता है। कक्षा में चक्षु सम्पर्क (Eye to eye contact) एवं मुख मुद्राओं के द्वारा शिक्षक अपने छात्रों की मनः स्थिति का अंदाजा लगाने में सफल होते

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

है। बधिरों एवं गूंगे व्यक्तियों के लिए तो यह सम्प्रेषण अत्यंत उपयोगी है।

स्पर्श सम्पर्क में स्पर्श को ही सम्प्रेषण का प्रमुख माध्यम बनाया जाता है। मां के हाथ का स्पर्श मात्र उसके शिशु को बहुत कुछ कह जाता है। प्रशंसा की एक शाबासी, प्यार का एक चुंबन अपने आप बहुत सी भावनाओं, संवेदनाओं तथा विचारों की अभिव्यक्ति का एक महत्वपूर्ण साधन है। दृष्टिहीन छात्रों के लिए तो ''स्पर्श'' एक बहुत बड़ा वरदान सिद्ध हुआ है।

सम्प्रेषण की प्रभावशीलता :

सम्प्रेषण की प्रभावशीलता से तात्पर्य उसके द्वारा होने वाले लाभों से है, जिन्हे प्राप्त करने हेतु सम्पन्न किया जाता है, हममें आपसी विचार विनिमय तथा भावनाओं का आदानप्रदान किस सीमा तक सफल हो पाया है और इसके फलस्वरूप अंर्तवैयक्तिक संबंधो की स्थापना तथा सामाजिक विकास के कार्य में कितनी सहायता मिली है, इस प्रकार के मापदंडो से ही संप्रेषण की प्रभावशीलता का अनुमान लगाया जा सकता है। सम्प्रेषण की प्रभावशीलता में वृद्धि करने हेतु हमें इस बात पर अच्छी तरह ध्यान देना होगा कि सम्प्रेषण प्रक्रिया से जुड़े हुए वे तत्व तथा कारक कौनकौन से है, जिन पर ध्यान देकर किसी भी सम्प्रेषण की प्रभावशीलता को बढ़ाया जा सकता है।

सम्प्रेषण स्त्रोत : सम्प्रेषण स्त्रोत जितना सशक्त तथा प्रभावशाली होगा सम्प्रेषण प्रक्रिया उतनी ही प्रभावकारी बन जाएगी। अध्यापकों के लिए अच्छा सम्प्रेषणकर्ता होना आवश्यक है परंतु सभी अध्यापक उतने अच्छे सम्प्रेषक नहीं होते। जो होते हैं, उनकी कक्षाओं के विद्यार्थी उनकी बात ध्यान से सुनते है, विषय में रूचि लेते हैं, सम्प्रेषण प्रक्रिया में बराबर के भागीदार बनते हैं। इसके विपरीत जो अध्यापक अपने विचारों, भावों तथा अनुभवों को प्रभावशाली रूप से प्रस्तुत नहीं कर पाते, उनके विद्यार्थी लाभन्वित नहीं हो पाते तथा ऐसी कक्षा में शिक्षणअधिगम का कार्य एक तरफा ही रहता है। सम्प्रेषण स्त्रोत के रूप में उनकी सशक्ता तथा प्रभावशीलता ही उन्हे अपने उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक बनाती है। यही कारण है कि विज्ञापन जगत में विज्ञापनों के जरिये अपनी राय या बात जन समुदाय तक पहुंचाने हेतु सशक्त सम्प्रेषण स्त्रोतों, फिल्म अभिनेताओं या अभिनेत्रियों, प्रसिद्ध खिलाड़ियों तथा आकर्शक चेहरे और रूप लावण्य की मदद ली जाती है।

सम्प्रेषण सामग्री : सम्प्रेषण की प्रभावशीलता सम्प्रेषण सामग्री की प्रभावशीलता पर बहुत निर्भर करती है यदि सामग्री प्रभावशील नहीं है तो सम्प्रेषण प्रक्रिया में आकर्षण कैसे आएगा। यदि कोई अध्यापक, भाषणकर्ता या संगोष्ठी नियोजक अपने भाषण कार्यक्रम

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

के दौरान इतनी जान डाल देते है कि स्त्रोत तथा प्राप्तकर्ता दोनो ही सम्प्रेषण प्रक्रिया में पूर्ण रूचि लेकर बराबर के भागीदार बन जाते हैं सम्प्रेषण प्रक्रिया को सफल बनाने में हमें आदानप्रदान करने वाली सम्प्रेषण सामग्री की प्रभावशीलता पर अवश्य ध्यान देना चाहिए। इसलिए अवसर यह कहा जाता है कि चाहे कम बोलो या कम लिखो परन्तु सदैव ऐसा बोलो या लिखो जो उचित, सार्थक एवं प्रभावपूर्ण हो।

सम्प्रेषण माध्यम : स्त्रोत या प्राप्तकर्ता के मध्य विचारों या भावों का आदानप्रदान करने में सेतु का कार्य करता है, वही सम्प्रेषण माध्यम है। यह सेतु जितना सशक्त एवं प्रभावशाली होगा, विचारो का आदानप्रदान भी उतना ही प्रभावशाली होगा। माध्यम के रूप में भाषा का प्रयोग अशाब्दिक वस्तुओं, कार्यो तथा संकेतो का प्रयोग किया जा सकता है लेकिन इनकी पूर्णता, यथार्थता, औचित्यता तथा सत्यता पर हमें विशेष ध्यान देना चाहिए। सम्प्रेषण माध्यम इस प्रकार का होना चाहिए कि हमारे द्वारा की गई अभिव्यक्ति को प्राप्तकर्ता उसी रूप तथा अर्थो में ग्रहण कर सके जैसा कि हम चाहते हैं। कभी भी ऐसे सम्प्रेषण माध्यमों, भाषा या संकेतो का प्रयोग नहीं करना चाहिए जिन्हे हम अच्छी तरह नहीं जानते या प्राप्तकर्ता उसका जानकार ना हो।

प्राप्तकर्ता : स्त्रोत जहां सम्प्रेषण की प्रारंभिक कड़ी है, वहां उसके अंतिम छोर को प्राप्तकर्ता द्वारा अच्छी तरह संभालने का उत्तरदायित्व निभाया जाता है। यदि स्त्रोत, सम्प्रेषण सामग्री तथा माध्यम भी प्रभावपूर्ण है लेकिन प्राप्तकर्ता सम्प्रेषण में रूचि नहीं रखता है या इतना योग्य या सक्षम नहीं है कि सम्प्रेषण कार्य में ठीक प्रकार भागीदारी निभा सके तो सम्प्रेषण की प्रभावशीलता पर प्रश्न चिन्ह ही लगा रहेगा। एक अच्छा प्राप्तकर्ता कमजोर सम्प्रेषण से भी पूरा लाभ उठाकर उसकी क्रियाशीलता को बराबर बनाए रख सम्प्रेषण स्त्रोत को अभिप्रेरित रख सकता है तथा अंर्तवैव्यक्तिक संबंधो को प्रगाढ़ तथा मधुर बनाने में काफी प्रभावशाली भूमिका निभा सकता है।

सम्प्रेषण में बाधक तत्व : सम्प्रेषण की प्रभावशीलता में सम्प्रेषण परिस्थितियों तथा वातावरण का भी बहुत महत्वपूर्ण हाथ होता है, ऐसे बहुत से तत्व अथवा परिस्थितियां है जो सम्प्रेषण में सहायक अथवा बाधक सिद्ध होते हैं। परिस्थितियां यदि किन्ही अर्थो में विशेष सहायक चाहे ना भी हो उन्हे बाधक तो होना ही नहीं चाहिए।

1. रूचि का अभाव : स्त्रोत तथा प्राप्तकर्ता ये दोनो ही सम्प्रेषण के मुख्य आधार है। यदि किसी कारणवश इनमें से कोई भी सम्प्रेषण प्रक्रिया में अरूचि रखता है तो सम्प्रेषण प्रक्रिया अप्रभावी होती है।

2. सम्प्रेषण सामग्री की कमियां : सम्प्रेषण सामग्री यदि प्राप्तकर्ता की रूचि तथा

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

आवश्यकताओं अथवा योग्यताओं और क्षमताओं के अनुकूल नहीं है तो सम्प्रेषण का प्रवाह रूक सकता है। सम्प्रेषण सामग्री प्राप्तकर्ता को सम्प्रेषण के लिए आकर्षित कर उसे उसमें भागीदार बनाती है परंतु यदि वह प्राप्तकर्ता के अनुकूल नहीं है तो स्त्रोत द्वारा प्रयास करने पर भी सम्प्रेषण की कड़ियों को जोड़े रखना कठिन हो जाता है।

3. सम्प्रेषण माध्यम की कमियां : स्त्रोत तथा प्राप्तकर्ता के बीच माध्यम अर्थात् पुल यदि कमजोर तथा अक्षम होगी तो आदानप्रदान रूपी यातायात कैसे चल पाएगा। यदि आप जिस भाषा में बोल रहे होंगे उसका ज्ञान प्राप्तकर्ता को नहीं है तो सम्प्रेषण कार्य शुरू ही नहीं हो पाएगा। यदि किसी तरह समझ भी लेता है परंतु उसमें भाषात्मक योग्यता नहीं है कि वह अपने विचार आप तक पहुंचा सके तो भी सम्प्रेषण प्रक्रिया अप्रभावी होगी। सम्प्रेषण प्रक्रिया में जो बात कही, सुनी या सोची जा रही है, उसके अनेक अर्थ भी लगाए जा सकते है तथा अच्छी तरह अर्थ न समझने से बात बिगड़ सकती है।

4. प्राप्तकर्ता संबंधी कमियां : सम्प्रेषण में कई बार प्राप्तकर्ता या उससे संबंधित कमियां ही आड़े आ जाती है। इसमें उनकी पर्याप्त रूचि का अभाव, उचित योग्यता व क्षमता का अभाव, सम्प्रेषण माध्यम संबंधी कमियां आदि तो ही ही सकती है, इसके अतिरिक्त सम्प्रेषण के समय वह जिस शारीरिक और मानसिक स्थिति से गुजर रहा है, उसका भी प्रभाव सम्प्रेषण में बाधा बनकर खड़ा हो जाता है, प्राप्तकर्ता का मानसिक दृष्टिकोण, स्वभावगत विशेषताएं तथा वर्तमान मूड या चल रहा घटनाक्रम उसे सम्प्रेषित बातों का गलत या अन्य अर्थ लगवाकर सम्प्रेषण चक्र से दूर ले जा सकता है।

5. वातावरण जन्य कमियां : जिस वातावरण और परिस्थितियों में सम्प्रेषण की प्रक्रिया चल रही है, उसका अनुकूल ना होकर बाधक सिद्ध होना जैसे मौसम की प्रतिकूलता बहुत अधिक गर्मी, वर्षा, आंधी तूफान, सुविधाओं का अभाव प्रकाश, वायु, पानी, बिजली, बैठने की व्यवस्था, अत्यधिक शोरगुल, आवश्यक उत्साह एवं प्रोत्साहन का अभाव सम्प्रेषण में प्रभावहीनता तथा बिखराव ला सकता है।

सम्प्रेषण के विभिन्न माध्यम : जो अध्यापक सम्प्रेषण कला में कुशल होते हैं उन्ही की पहचान प्रभावशाली अध्यापकों के रूप में होती है परंतु उनकी इस सफलता की पीछे उन विद्यार्थियों का भी हाथ होता हे जो प्राप्तकर्ता के रूप में उनकी सम्प्रेषण क्षमता से पूरा. पूरा लाभ उठाने की योग्यता और इच्छा रखते हैं अध्यापक और विद्यार्थी दोनो की इस सफलता के पीछे एक बात ओर जो अधिक आवश्यक है, वह है सम्प्रेषण माध्यम की उपयुक्तता। सम्प्रेषण माध्यमों को उनके प्रयोग और उपयोगिता के आधार पर विभाजित किया जा सकता है।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

1. श्रव्य माध्यम : कक्षा सम्प्रेषण में सम्प्रेषण की पूरी प्रक्रिया श्रव्य माध्यम के जरिये ही चलती रह सकती है। अध्यापक अपनी वाणी का प्रयोग कर भाषण विधि की सहायता से सम्प्रेषण करते है और विद्यार्थी सुनकर सम्प्रेषित बातों को ग्रहण करने का प्रयत्न करते है, दोनो ही श्रव्य माध्यम की सहायता से सम्प्रेषण प्रक्रिया जारी रखते हे। रेडियो, टेपरिकार्डर आदि इसी श्रेणी में आता है।
2. दृश्य माध्यम : सम्प्रेषण की क्रिया में जब मात्र दृश्य माध्यम का प्रयोग हो अर्थात् अध्यापक के द्वारा श्यामपट पर लिखना, चित्र एवं ग्राफ बनाना, माध्यम से विद्यार्थी, सम्प्रेषित सूचनाओं तथा ज्ञान को ग्रहण कर सके। विद्यार्थी किसी भी सम्प्रेषित सामग्री को पढ़कर तथा देखकर अपनी दृश्य इंद्रिय का प्रयोग करके कक्षा सम्प्रेषण में भागीदार बन जाते हैं। इस तरह चार्ट चित्र, मानचित्र, ग्राफ, मॉडल, नमूने, फिल्म, समाचार पत्र, पत्रिकाओं तथा पुस्तकों के रूप में उपलब्ध सामग्री सम्प्रेशण प्रक्रिया में दृश्य माध्यम के रूप में प्रयोग में लायी जाती है।
3. दृश्यश्रव्य माध्यम : केवल श्रव्य तथा केवल दृश्य माध्यमों के जरिये भी सम्प्रेषण प्रक्रिया संपन्न हो सकती है परंतु सम्प्रेषण की प्रभावशीलता दोनो माध्यमों के उचित समन्वय के द्वारा काफी बढ़ सकती है, अध्यापक द्वारा श्यामपट पर लिखना, चित्र बनाना और प्रयोग का प्रदर्शन करते हुए उसकी व्याख्या एवं वर्णन कर अपने शिक्षण को प्रभावशाली बनाता है, यह दृश्यश्रव्य साधनो का उचित समन्वय है। केवल रेडियो, टेपरिकॉर्डर या फिल्म आदि श्रव्य या दृश्य साधनो का प्रयोग करते हुए सम्प्रेषण करने से टेलीविजन, वीडियो आदि दृश्यश्रव्य साधनो से सम्प्रेषण करना अधिक उपयुक्त सिद्ध हो सकता है।
4. बहुइंद्रिय माध्यम : ज्ञानइंद्रियां सम्प्रेषण का अमूल्य साधन है। जितनी अधिक इंद्रियो के सहयोग से सम्प्रेषण क्रिया चलेगी। सम्प्रेषण प्रक्रिया में उतनी ही अधिक सफलता प्राप्त होगी। कक्षा सम्प्रेषण में यदि अध्यापक तथा विद्यार्थी द्वारा अधिक से अधिक ज्ञानेनिद्रयों (आंख, नाक, कान, जीभ और त्वचा) का उपयोग करते हुए सम्प्रेषण प्रक्रिया चालू रखी जाय तो अधिक प्रभावशाली परिणाम सामने आ सकते हैं।
5. जन सम्पर्क माध्यम : सम्प्रेषण प्रक्रिया में जनसम्पर्क माध्यम का अर्थ रेडियो, टेलीविजन, सिनेमा, फिल्म, मुद्रित सामग्री, पुस्तक, पत्रपत्रिकाएं तथा इंटरनेट और वेबसाइट पर आधारित अति आधुनिक माध्यम से लगाया जाता है, इस माध्यम की सहायता से सम्प्रेषण प्रक्रिया में बहुत अधिक व्यक्तियों को शामिल किया जा सकता है।
6. बहु माध्यम : सम्प्रेषण प्रक्रिया में विविध साधनो एवं माध्यमों का व्यवस्थित एवं

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

सुनियोजित ढंग से किया गया प्रयोग प्रक्रिया को और अधिक प्रभावी बना देता है। बहुत से मुक्त विश्वविद्यालयों जैसे इंदिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय द्वारा अपने सुदूर स्थित विद्यार्थियों के साथ उचित सम्प्रेषण के लिए बहु माध्यम उपागम का प्रयोग भली भांति किया जा रहा है। सम्प्रेषण को लेकर बहुमाध्यम का उपयोग ऑनलाइन एजुकेशन देने के लिए सुविधापूर्वक किया जा रहा है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :

1. भार्गव, शर्मा 2008, शैक्षिक तकनीकी एवं कक्षा कक्ष प्रबन्धन, राखी प्रकाशन, आगरा।
2. मंगल, मंगल 2009, शिक्षा तकनीकी, पी.एच.आई.लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।
3. शर्मा, सिंह, सेवानी 2010, भावी शिक्षक एवं शिक्षा तकनीकी, अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा।
4. सिंघल, कुलश्रेश्ठ 2012, शैक्षिक तकनीकी के मूल आधार, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा।
5. www.deshbandhu.co.in

■■■

DMV Journal
Annual Journal of Durga Mahavidyalaya, Raipur (C.G.)

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

Android System

Ravindra Singh Rajput
Vibha Dubey
ASST.PROF (COMPUTER SCIENCE DEPT.)
DURGA MAHAVIDYALAYA , RAIPUR

Android devices come in all kinds of sizes, with all sorts of features, and at all sorts of prices. Each version of Android is named after a dessert, and the most recent version of Android is Jelly Bean. With Android, you're in control of your mobile experience.

Android is a mobile operating system developed by Google. It is used by several smartphones, such as the Motorola , micromax,Samsung Galaxy, and Google's own Nexus One.

The Android operating system (OS) is based on the open source, that means developers can modify and customize the OS for each phone. Therefore, different Android-based phones may have different graphical user interfaces GUIs even though they use the same OS.

Developers can create programs for Android using the free Android SDK (Software Developer Kit). Android programs are written in Java and run through Google's "Davlik" virtual machine, which is optimized for mobile devices. Users can download Android "apps" from the online Android Market.

The name "Android" comes from the term android, which refers to a robot designed to look and act like a human.

Android version names are based on food name's

Version	Code name	Release date
1.5	Cupcake	April 30, 2009
1.6	Donut	September 15, 2009
2.0–2.1	Eclair	October 26, 2009
2.2	Froyo	May 20, 2010
2.3.3–2.3.7	Gingerbread	February 9, 2011
2.3–2.3.2	Gingerbread	December 6, 2010
3.1	Honeycomb	May 10, 2011
3.2	Honeycomb	July 15, 2011
4.0.3–4.0.4	Ice Cream Sandwich	December 16, 2011
4.1.x	Jelly Bean	July 9, 2012
4.2.x	Jelly Bean	November 13, 2012
4.3.x	Jelly Bean	July 24, 2013
4.4	KitKat	October 31, 2013

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

Features of Android operating system

Messaging

SMS and MMS are available forms of messaging, including threaded text messaging and Android Cloud To Device Messaging (C2DM) and now enhanced version of C2DM, Android Google Cloud Messaging (GCM) is also a part of Android Push Messaging service.

Web browser

The web browser available in Android is based on the open-source Blink layout engine, coupled with Chrome's V8 JavaScript engine.

Voice based features

Google search through voice has been available since initial release. Voice actions for calling, texting, navigation, etc. are supported on Android 2.2 onwards. As of Android 4.1, Google has expanded Voice Actions with the ability to talk back and read answers from Google's Knowledge Graph when queried with specific commands. The ability to control hardware has not yet been implemented.

Multi-touch

Android has native support for multi-touch which was initially made available in handsets such as the HTC Hero.

Smart virtual keyboard

The addition of a virtual keyboard means that Android 1.5 devices can support both physical and virtual keyboards, packing the best of both worlds. It's up to you to use whichever input method fits you in a specific scenario.

Android's virtual keyboard is provided in portrait or landscape orientation and works in any application, including Gmail, the browser, SMS and even in third-party programs.

It comes with an auto-correct feature, suggestions and user dictionary for custom words. You can also set it up so that it gives you tactile feedback by vibrating the screen. Unlike rival mobile platforms, Android 1.5 supports user installation of third-party virtual keyboards.

Phone number entry. Text entry.

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

Multitasking

Multitasking of applications, with unique handling of memory allocation, is available.

Screen capture

Android supports capturing a screenshot by pressing the power and volume-down buttons at the same time. Prior to Android 4.0, the only methods of capturing a screenshot were through manufacturer and third-party customizations or otherwise by using a PC connection (DDMS developer's tool). These alternative methods are still available with the latest Android.

Video calling

Android does not support native video calling, but some handsets have a customized version of the operating system that supports it, either via the UMTS network (like the Samsung Galaxy S) or over IP. Video calling through Google Talk is available in Android 2.3.4 and later. Gingerbread allows Nexus S to place Internet calls with a SIP account. This allows for enhanced VoIP dialing to other SIP accounts and even phone numbers. Skype 2.1 offers video calling in Android 2.3, including front camera support. Users with the Google+ Android app can video chat with other google+ users through hangouts.

Multiple language support

Android supports multiple languages like ENGLISH,DEUTSCH, ITALIANO etc .

Accessibility

Built in text to speech is provided by Talk back for people with low or no vision. Enhancements for people with hearing disabilities is available as is other aids.

Connectivity

Android supports connectivity technologies including Wi-Fi, Bluetooth,

Bluetooth

Supports voice dialing and sending contacts between phones, sending files (OPP), accessing the phone book , A2DP and AVRCP. Keyboard, mouse and joystick support is available in Android 3.1+, and in earlier versions through manufacturer customizations and third-party applications.

Tethering

Android supports tethering, which allows a phone to be used as a wireless/wired Wi-Fi hotspot. Before Android 2.2 this was supported by third-party applications or manufacturer customizations

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

These are also types of connectivity

GSM/EDGE, LTE, CDMA, EV-DO, UMTS, NFC, IDEN and WiMAX.

Media

Streaming media support

RTP/RTSP streaming (3GPP PSS, ISMA), HTML progressive download (HTML5 <video> tag). Adobe Flash Streaming (RTMP) and HTTP Dynamic Streaming are supported by the Flash plugin. Apple HTTP Live Streaming is supported by RealPlayer for Android, and by the operating system in Android 3.0 (Honeycomb)

Media support

Android supports the following audio/video/still media formats: 3GP or MP4 container , MPEG-4 SP, AMR, AMR-WB (in 3GP container, MP3, MIDI, Ogg Vorbis, FLAC, WAV, JPEG, PNG, GIF, BMP, WebP.

External storage

Most Android devices include microSD slot and can read microSD cards formatted with FAT.

Hardware support

Android devices can include still/video cameras, touchscreens, GPS, accelerometers, gyroscopes, barometers, magnetometers, dedicated gaming controls, proximity and pressure sensors, thermometers, accelerated 2D bit blits and accelerated 3D graphics.

REFERENCE

WED SITE
http://www.techterms.com
http://www.Wikipedia.org
http://www.geek.com
http://www.google.com

■■■

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

RIGHT TO REJECT-IS IT A NEW BEGINNING

Dr. Aman Jha

None of the Above (NOTA), also known as "against all" or a "scratch" vote, is a ballot option in some jurisdictions or organizations, designed to allow the voter to indicate disapproval of all of the candidates in a voting system. It is based on the principle that consent requires the ability to withhold consent in an election, just as they can by voting no on ballot questions.

Entities that include "None of the Above" on ballots as standard procedure include India ("None of the above"), Greece (white, but unrelated to a political party of the similarly sounding name-however it is symbolic only), the U.S. state of Nevada (None of These Candidates), Ukraine, Spain (voto en blanco), and Colombia (voto en blanco). Russia had such an option on its ballots until it was abolished in 2006[1]. Bangladesh introduced this option in 2008[2]. Pakistan introduced this option on ballot papers for the 2013 Pakistan elections but later the Election Commission of Pakistan rejected this.[3]

When None of the Above is listed on a ballot, there is the possibility of NOTA receiving a majority or plurality of the vote, and so "winning" the election. In such a case, a variety of formal procedures may be invoked, including having the office remain vacant, having the office filled by appointment, re-opening nominations or holding another election (in a body operating under parliamentary procedure), or it may have no effect whatsoever, as in the state of Nevada, where the next highest total wins regardless.

The Election Commission of India told the Supreme Court in 2009 that it wished to offer the voter a "None of the above" option at the ballot, which was something that the government had generally opposed. The People's Union for Civil Liberties, a non-governmental organization, filed a Public-interest litigation statement in support of this.[4]

On 27 September 2013, the Supreme Court of India ruled that the right to register a "none of the above" vote in elections should apply, noting that it would increase participation. The judges said that this "would lead to a systemic change in polls and political parties will be forced to project clean candidates". "Democracy is all about choices and voters will be empowered by this right of negative voting," said the order passed by a bench headed by Chief Justice P Sathasivam.[5]

The "none of the above" (NOTA) choice differs radically from "right to reject" (RTR). Although the votes registered as NOTA are counted, they will not change the outcome of the election process.[6]

The Supreme Court ordered the Election Commission to provide a NOTA button on the voting machine which would give voters the option to choose "none of the above".

None of the Above candidates and parties in other countries

- In Serbia, None of the above is a parliamentary political party, legally formed in 2010, which was mostly popularized on Facebook and less on other social networking websites. In Serbian parliamentary election, 2012 they received 22,905 votes and thus won one seat in National Assembly of Serbia. Serbian NOTA aspires to form an international political movement not so much based on ideology but rather on a common goal – fight against all corrupt politicians.
- A Prince George businessman ran in the June 2, 1997 Canadian election in the district of Prince George-Bulkley Valley[7] under the name Zznoneoff, Thea Bove (Thea Bove Zznoneoff); ballots listing candidates alphabetically by surname, he appeared at the bottom. He came sixth of seven candidates with 0.977 percent of votes cast.

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

- Geoff Richardson changed his full name to "Of The Above None" and stood as an independent for the seat of Gilmore at the 2007 Australian federal election. His name appeared as NONE, Of the Above on the ballot.[8]
- In Ukrainian presidential election, 2010, a candidate Vasiliy Humeniuk changed his name to Vasily Protyvsih (Vasily Against-all). "Against all candidates" is the name of the "none of the above" vote used in Russia and Ukraine.[9]
- In 2000, Michael Moore advocated a write-in candidate Ficus (the plant) for Congress as a unified vote for none of the above in congressional seats where the incumbent was running unopposed.[10]
- David Gatchell of Tennessee ran for governor in 2002 and for Senate in 2006 as a protest, officially changing his middle name from Leroy to None of the Above.[11] In 2006, he got 3,738 votes (0.2 percent).
- For the 2013 Pakistani general election, the Election Commission of Pakistan unilaterally decided that a 'none of the above' box will be available as a voting option on ballot papers during this election. However, they subsequently decided against it owing to the short amount of time remaining till the elections.[12]

As it is stated that real democracy is possible only in heaven. Even in the so called developed democracies of USA, UK and Western Europe the condition of democracy is not as good as it appears to be. In countries like India the problems that hinder proper functioning of democracy are really very complicated and NOTA is just going to serve as a superficial treatment to a chronic disease.

REFERENCES

1. "Russians Divided Over Electoral Reforms: Angus Reid Global Monitor".
2. "Bangladesh amends election law incorporating 'no' vote option".
3. http://tribune.com.pk/story/530557/none-of-the-above-vote-to-be-added-to-ballots-ecp/
4. Sorabjee, Soli J. (1 March 2009). "Right of negative voting".
5. "India voters get right to reject election candidates".
6. Jain, Bharti (27 September 2013). "Will implement voters' right to reject candidates straight away: Election Commission"
7. http://www2.parl.gc.ca/Sites/LOP/HFER/hfer.asp
8. "About".(http://www.noneofthe above.com.au/about.htm)
9. CEC registers two more candidates for Ukraine's president,
10. Ficus Plant Announces Candidacy For Congress
11. (http://tennessean.com/apps.pbcs.dll/article?AID=/20060720/NEWS0206/607200385)
12. http://tribune.com.pk/story/531463/ecp-decides-against-introducing-none-of-the-above-vote/

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

भारतीय अर्थव्यवस्था पर आर्थिक सुधारों का प्रभाव

डॉ. आशीष दुबे
दुर्गा महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

डॉ. व्ही. के. चौबे
दुर्गा महाविद्यालय रायपुर (छ.ग.)

जुलाई 1991 में नरसिंम्हा राव सरकार के तत्कालीन वित्त मंत्री जी श्री मनमोहन सिंह के प्रयासों से भारत में आर्थिक सुधारों के अन्तर्गत वैश्वीकरण, उदारीकरण एवं निजीकरण की नीति लागू हुई जिसके परिणामस्वरूप भारतीय अर्थव्यवस्था की विकास दर में आशातीत वृद्धि हुई। वैश्विक मंदी की अवधि में भी भारतीय अर्थव्यवस्था की विकास दर प्रभावशाली रही। वर्ष 2007—08 में भारतीय अर्थव्यवस्था 9.3 प्रतिशत विकास दर, 2008—09 में 6.7 प्रतिशत, वर्ष 2009—10 में 8.4 प्रतिशत वर्ष 2010—11 में 8.4 प्रतिशत तथा वर्ष 2011—12 में 6.9 प्रतिशत संवृद्धि दर प्राप्त करने में भारतीय अर्थव्यवस्था सफल रही है उपरोक्त लगातार महत्वपूर्ण विकास दर के लक्ष्यों को प्राप्त करने के बाद भी भारतीय अर्थव्यवस्था आज संकट के दौर से गुजर रही है तथा विभिन्न वैश्विक संगठन और अर्थशास्त्री भारत को आर्थिक सुधारों के मार्ग पर लौटने का सुझाव दे रहे है।

अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष ने भारत की विकास दर को वापस पटरी पर लाने तथा विकास दर के पूर्व लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए ढाँचागत सुधारों के सुझाव दिये है। इन सुधारों में अधोसंरचना का विकास, वित्तीय समेकन तथा महँगाई पर नियंत्रण शामिल है। आई.एम.एफ. के अनुसार अनुकूल व्यापक आर्थिक नीतियों तथा भारतीय अर्थव्यवस्था का परंपरागत आर्थिक ढाँचा ने भारतीय अर्थव्यवस्था को वैश्विक मंदी से निपटने के लिए सक्षम बनाया है इसके बाद भी वर्तमान में भारत के आर्थिक विकास दर में गिरावट का दौर जारी है अतः भारतीय परंपरागत आर्थिक ढाँचे को नकारात्मक विकास दर के लिए जिम्मेदार ठहराना उचित नहीं है। भारतीय आर्थिक विकास दर को पुनः गति देने के लिए ढाँचागत सुधारों से अधिक महत्वपूर्ण वित्तीय समेकन है। वित्तीय समेकन के लिए महँगाई दर में नियंत्रण सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। विकास के अनिश्चितता की दशा में महँगाई दरों में नियंत्रण के लिए नीतिगत दरों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए महँगाई दरों में नियंत्रण ही निवेशकों को आकर्षित एवं स्थायी बना सकता है। विशेषज्ञों ने भारतीय रिर्जव बैंक को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया है कि यदि महँगाई दोबारा बढ़नी शुरू होती है तो उसे नीतिगत दरों में वृद्धि करने के लिए तैयार रहना चाहिए और यदि महँगाई दर में गिरावट होती है तो वह कटौती पर विचार कर सकती है। निजी निवेश बढ़ाने के लिए वित्तीय समेकन

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

आवश्यक है साथ ही सामाजिक व्ययों को युक्ति युक्त किये जाने की भी सिफारिश की गयी। ईधन तथा उर्वरक सब्सिडी को युक्ति संगत बनाने तथा सार्वजनिक व्ययों के प्रबंधन पर सुधार करने पर जोर दिया गया।

भारतीय उद्योग परिसंघ ने देश में विकास दर की गति बढ़ाने के लिए आर्थिक सुधारों को तेजी से लागू करने की सिफारिश किया है इससे देश में विकास और निवेश की गति बढ़ेगी तथा देश की छवि में सुधार होगा। देश की अर्थव्यवस्था वर्तमान में मंदी के दौर से गुजर रहा है अर्थव्यवस्था की वर्तमान स्थिति को देखते हुए आर्थिक संकट से पूर्व की विकास दर 9 प्रतिशत प्राप्त कर पाना संभव नहीं है, इसके लिए केन्द्र तथा राज्य के स्तर पर संरचनात्मक सुधार की आवश्यकता होगी।

उदारीकरण की प्रक्रिया शुरू होने के पश्चात् देश ने विकास की नवीन उँचाइयों को छुआ है तथा भारतीय अर्थव्यवस्था की गिनती वैश्विक अर्थव्यवस्था में उभरती हुई शक्तिशाली अर्थव्यवस्था के रूप में हो रही है। वर्ष 1991 में जहाँ देश में विदेशी मुद्रा का भण्डार 1 अरब डॉलर भी नहीं था वह बढ़कर वर्तमान में लगभग 300 अरब डॉलर हो गया है। दुर्बल सरकार की नीतियों के कारण देश के आर्थिक विकास की गति धीमी पड़ गयी है किन्तु सरकार द्वारा विकास की गति बढ़ाने के लिए सुदृढ़ दीर्घकालिक नीतियाँ अपनाने के लिए इच्छा शक्ति का अभाव प्रतीत हो रहा है।

वर्ष 2012–13 में अर्थव्यवस्था की आर्थिक विकास दर 5.5–6 प्रतिशत के स्तर पर रहा है यह वृद्धि विकास दर का स्तर विकसित राष्ट्रों से तो अधिक है किन्तु भारत जैसे विकासशील देश के लिए उचित नहीं है विकास दर के इस स्तर के आधार पर देश के जनसाधारण के जीवन स्तर को ऊपर उठाने की महत्वपूर्ण चुनौती है भारतीय अर्थव्यवस्था की वित्तीय स्थिति घरेलु तथा विदेशी दोनों की स्थिति पर कमजोर है। सकल घरेलु उत्पाद के सापेक्ष राजकोषीय घाटा तथा भुगतान संतुलन के चालू खाते का घाटा दोनों में वृद्धि हुई है। कमजोर अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति, दुषित अधोसंरचना, भ्रष्टाचार तथा राजनैतिक स्थितियों के कारण आर्थिक क्षेत्र के वृद्धि में अनेक बाधाएँ आ रही है। सम्पूर्ण देश के आर्थिक स्थिति के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि पिछले कुछ वर्षो में देश का राजकोषीय घाटा जीडीपी का 9–10 प्रतिशत है जिसका प्रमुख कारण सरकार द्वारा प्रदत्त सब्सिडी को माना जा रहा है वर्तमान में सरकार सब्सिडी पर जीडीपी का 9 प्रतिशत व्यय करती है। मार्च 2012 में भारत का राजकोषीय घाटा 5.9 प्रतिशत रहा यह सरकार द्वारा निर्धारित लक्ष्य 4.6 प्रतिशत से अधिक है भारत की घटती हुई विकास दर भारत के घाटा सहने की क्षमता को प्रभावित कर रही है। भारत सरकार का कर्ज भी उसकी जीडीपी के 70 प्रतिशत के बराबर पहुँच गया है।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

भारतीय रिर्जव बैंक द्वारा जारी किये गये जुलाई – सितम्बर 2012 के त्रैमासी रिपोर्ट में चालु खाते का घाटा 5.4 प्रतिशत (22.3 बिलियम डॉलर) था जो रिकार्ड स्तर पर है व्यापार के मामले में भारत की कमजोरी का असर रूपये की स्थिति पर पड़ रहा है तथा भारतीय कम्पनियों के लिए भी स्थितियाँ कठिन बनती जा रही है। इस समय भारत के पास लगभग 300 अरब डॉलर का विदेशी मुद्रा भण्डार है लेकिन इस वर्ष भारत को जितना विदेशी कर्ज चुकाना है वह इस राशि का लगभग 40–45 प्रतिशत है।

भारत में आर्थिक वृद्धि दर कम होने का कारण यहाँ अधोसंरचना में कमी है। देश में बिजली, सड़क और यातायात जैसी मूलभूत सुविधाओं की कमी है जिससे देश की आर्थिक गतिविधियाँ प्रभावित हो रही है।

गत दो वर्षो में यूरोप के कर्ज संकट तथा अमेरीकी अर्थव्यवस्था की धीमी गति का नकारात्मक असर भारतीय अर्थव्यवस्था पर पड़ा है अमेरीकी अर्थव्यवस्था की धीमी गति के कारण भारतीय निर्यात में कमी आई तथा विदेशी निवेश पर भी विपरीत प्रभाव पड़ा तथा घरेलु अर्थव्यवस्था में दूसरे दौर के सुधारों को गति न दे पाने के कारण विकास पर अत्यन्त विपरीत प्रभाव पडा है। वित वर्ष 2010–11 में उभरती हुई अर्थव्यवस्था वाले देशों में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश का प्रभाव बेहतर होने के बाद भी भारतीय अर्थव्यवस्था का प्रदर्शन उत्साहजनक नहीं रहा इसके बाद भी भारतीय अर्थव्यवस्था का वैश्विक स्थिति पर प्रदर्शन प्रभावशाली रहा है जो भारतीय अर्थव्यवस्था की सुदृढ़ता को प्रदर्शित करता है।

तालिका क्रमांक – 1
क्षेत्रवार विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (बिलियन डॉलर में)

क्षेत्र	2006–07	07–08	08–09	09–10	10–11	11–12
विनिर्माण	1.6	3.7	4.8	5.1	4.8	6.71
सेवा	5.3	8.0	10.2	7.4	4.5	9.00
रियल एस्टेट	1.4	4.3	4.2	6.0	2.6	6.53
अन्य	0.9	3.3	3.4	4.0	3.0	4.45
कुल विदेशी प्रयत्न निवेश	9.2	19.3	22.7	22.5	14.9	26.69

स्त्रोत :– प्रतियोगिता दर्पण जुलाई – 2013

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

उदार आर्थिक नीतियों तथा अर्थव्यवस्था की मजबूती के कारण 2006–07 से 2011–12 भी अवधि में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है वैश्विक आर्थिक मंदी की अवधि में भी देश में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश का प्रवाह संतोषजनक रहा है इसके बाद भी वैश्विक परिदृश्य में भारतीय अर्थव्यवस्था की विपरीत स्थिति की व्याख्या तथा कारणों को खोज पाना कठिन है। वर्ष 2008 में वित्तीय संकट तथा भारत में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश में उल्लेखनीय वृद्धि हुई जिसका प्रमुख कारण भारतीय घरेलु अर्थव्यवस्था का मजबूत होना था जिसका कारण वैश्विक परिदृश्य में भारत उभरते हुए आकर्षक बाजार के रूप में पहचाना जाने लगा प्रत्यक्ष विदेशी निवेश में उत्तरोत्तर वृद्धि के बाद भी भारतीय अर्थव्यवस्था की नकारात्मक प्रवृत्तियों का विस्तृत अध्ययन कर इसके कारणों को जानना आवश्यक है।

आर्थिक उदारीकरण तथा वैश्वीकरण के समर्थकों के दावों का विभिन्न देशों के अनेक शोधकर्त्ताओं ने परीक्षण किया है। वैश्वीकरण की कड़ी आलोचना अर्थशास्त्र में 2001 में नोबल पुरूस्कार विजेता तथा विश्व बैंक के प्रमुख अर्थशास्त्री जोजेफ स्टिग्लिटज ने अपनी पुस्तक ''वैश्वीकरण और उनकी निराशाएँ'' (Globalization and its Discontents) में प्रस्तुत किया। वैश्वीकरण के सामाजिक आयाम पर विश्व आयोग (World Commission) ने भी विश्व भर में वैश्वीकरण के अनुभव पर विचार किया है और अनेक चौकने वाले तथ्य प्रस्तुत किये है। विश्व आयोग ने स्पष्ट किया ''वैश्वीकरण का मौजूदा मार्ग बदलना होगा इससे बहुत कम लोगों को लाभ होता है''। वैश्वीकरण या नयी आर्थिक नीति के माध्यम से सामाजिक कल्याण तथा समानता के लक्ष्यों को प्राप्त कर पाना संभव नहीं है यही कारण है कि भारतीय अर्थव्यवस्था वृद्धिगत तो दिखलाई पड़ती है किन्तु वास्तविक स्तर पर यह दिखलाई नहीं पड़ती आवश्यक है कि नई आर्थिक नीतियों को लागू किये जाने के पूर्व उचित नियोजन तथा मूल्याँकन किया जाना आवश्यक है अन्यथा ये नवीन आर्थिक नीतियाँ भारतीय अर्थव्यवस्था के अनुकूल नहीं होगी।

संदर्भ ग्रंथ

1. भारतीय अर्थव्यवस्था – रूद्रदत्त एवं के.पी.एम. सुन्दरम्
2. विकास का अर्थशास्त्र एवं नियोजन – डॉ. रामरतन शर्मा
3. अर्थव्यवस्था अवलोकन (बजट स्पेशल)
4. भारतीय अर्थव्यवस्था – धनकर प्रकाशन
5. प्रतियोगिता दर्पण – जुलाई 2013
6. दैनिक भास्कर, नवभारत, पत्रिका

DMV Journal
Annual Journal of Durga Mahavidyalaya, Raipur (C.G.)
80
ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

" भारत में वाणिज्यिक बैंक प्रणाली का विकास एक अध्ययन "

डॉ. गिरजा शंकर गुप्ता
सहायक प्राध्यापक
दुर्गा महाविद्यालय रायपुर (छ.ग.)

बैंकिग किसी भी देश की अर्थव्यवस्था की जीवन रेखा हैं । बैंक वित्तीय प्रणाली के एजेण्ट और चालक हैं । आर्थिक विकास की प्रक्रिया में वाणिज्यिक बैंकों का अत्यधिक महत्व है । इस बात को अर्थशस्त्रियों और प्रगतिशील बैंकरों ने समय–समय पर दोहराया है । हमारी अर्थव्यवस्था में वाणिज्यिक बैंक की भूमिका को इन्कार नहीं किया जा सकता है । वस्तुतः यह सत्य है कि इनके द्वारा प्रदत्त अनेक वित्तीय ढॉचे की आत्मा हैं । रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया के सहयोग से ये राष्ट्र की मुद्रा आपूर्ति में वृध्दि करने की क्षमता रखते हैं । बैंक ऋण देने, विनियोग करने तथा सम्बन्धित अन्य कार्यकलापों से देश में उत्पादन, वितरण एवं उपभोग की प्रकिया को सरल एवं सुविधाजनक बनाते हैं ।

आधुनिक युग में वाणिज्यिक बैंकिंग की गतिविधियों में बहुदिशात्मक और बहु परिमाणात्मक तरीके से वृध्दि हुई है । बैंक विकास के क्षेत्र में ,पिछड़े क्षेत्रों के विकास तथा ग्रामीण विकास में अहम् भूमिका अदा कर रहे हैं । ये कृषि, उद्योग, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में भी महत्वपूर्ण तरीके से सहयोग प्रदान कर रहे हैं । अतः हम कह सकते हैं कि वाणिज्यिक बैंकों का देश के तीव्र आर्थिक विकास के लिए प्रमुख वित्तीय एजेन्सी के रूप में प्रादुर्भाव हुआ है ।

भारतीय बैंक प्रणाली बीसवीं शताब्दी के पहले अर्धभाग में बहुत से संकटों से गुजरी हैं जिसमें बहुत से बैंक विफल हुए । परन्तु स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारतीय बैंक प्रणाली ने तीव्र प्रगति दर्ज की हैं । इसका मुख्य कारण आयोजित आर्थिक विकास, मुद्रा संभरण (Money supply) में वृध्दि, बैंकिंग प्रवृति का विकास, रिजर्व बैंक आफ इंण्डिया द्वारा नियंत्रण और मार्गदर्शन था और सबसे अधिक जुलाई 1969 में बैंकों के राष्ट्रीयकरण (Nationalisation) को मानना होगा ।

ध्यान देने योग्य बात यह है कि 1950 के पश्चात् बैंक जमा (Bank deposits) में निरन्तर वृध्दि हुई है । बैंकों की संख्या में कमी रिजर्व बैंक को छोटे बैंकों के बड़े बैंकों के साथ विलयन की नीति के कारण हुई ताकि बैंक प्रणाली सबल बन सकें । 1950–51 के दौरान इन बैंकों की संख्या 430 अननुसूचित बैंक (Non-scheduld Banks) थे परन्तु इनकी संख्या नवम्बर 1980 तक कम होकर केवल 4

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

हो गई । शेष बैंकों का बड़े बैंकों से विलयन कर दिया गया । मई 2006–07 में देश में 179 अनुसूचित वाणिज्य बैंक थे । आयोजन के प्रभावाधीन भारतीय अर्थव्यवस्था में इनका तेंजी से विकास हो गया है ।

भारत में वाणिज्कि बैंकों की विकास को निम्न बिन्दुओं के द्वारा अध्ययन किया जा सकता है ।

1. बैंक जमा और उधार का विस्तार

बैंक जमा का विस्तार हाल ही के वर्षो में बैंक व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण लक्षण रहा है आयोजित विकास, न्यून–वित्त प्रबन्ध (Deficit financing) और जारी करेन्सी की अधिक मात्रा के कारण बैंक जमा (Bank deposits) में वृध्दि हुई । साथ ही लगातार प्रचार, बड़े पैमाने पर बैंक शाखाएँ खोलकर और अपने ग्राहकों को अच्छी सेवा उपलब्ध कराकर बैंकों ने जनता में बैंक आदतों के विकास करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है । तालिका 1 में अनुसूचित बैंकों की जमा एवं उधार की वृध्दि की प्रवृति सम्बन्धी ऑकड़े प्रस्तुत किए गए हैं ।

तालिका 1 : सभी अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की जमा एवं उधार

वर्ष	बैंकों की संख्या	बैंक जमा करोड़ रूपय	बैंक उधार करोड़ रूपय
1950 – 51	430	820	580
1970 – 71	87	5,910	4,690
1990 – 91	271	1,92,540	1,16,300
2000 – 01	297	9,62,620	5,11,430
2006 – 07	179	26,08,300	19,28,910
2011 – 12	212	3,00,09400	22,19,830

स्त्रोत – रिजर्व बैंक बुलेटिन से प्राप्त

वाणिज्य बैंकों ने बचत गतिमान करने में सराहनीय कार्य किया है । 1950–51 और 2011–12 के बीच बैंक जमा 820 करोड़ से बढ़कर 30009400 करोड़ रूपए हो गयी । परन्तु अभी भी थोड़े से कस्बे ऐसे हैं जहॉ बैंक स्थापित नहीं किये जा सकें । अभी भी

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

5 लाख ऐसे गॉव हैं जहॉ बैंक सेवाओं का अभाव है । ऐसे क्षेत्रों में जहॉ बैंक कायम किये जा चुके हैं नये जमाकर्ताओं (Deposotors) को आकर्षित करने की जरूरत है और वर्तमान जमाकर्ताओं को अपनी जमा बढा़ने के लिए प्रेरित करना होगा । बैंक जमा विस्तार के साथ–साथ बैंक –उधार का भी लगातार विस्तार हुआ है जो कृषि तथा औद्योगिक उत्पादन में वृध्दि को व्यक्त करता है । बैंक अब उद्योग,व्यापार और कृषि की उधार सम्बन्धी आवश्यकताओं के लिए कहीं अधिक मात्रा में वित्त उपलब्ध कराते हैं । 1950–51 और 2011–12 में बैंक उधार लगभग 580 करोड़ रूपए से बढ़कर 2219830 करोड़ रूपए हो गया ।

2. विकास – प्रेरित बैंक व्यवस्था (Develompent-oriented Banking) – ऐतिहासिक दृष्टि से बैंक–व्यवस्था का वाणिज्य और पारम्परिक उद्योगों (अर्थात् सूती वस्त्र और पटसन) के साथ घनिष्ठ संबंध रहा है, तथा अन्य क्षेत्र उपेक्षित रहे । इसका मुख्य कारण वाणिज्य बैंकों द्वारा व्यापार और पारम्परिक उद्योगों को प्राथमिकता देना था । हाल ही के वर्षो में बैंक–व्यवस्था पारम्परिक सीमाबन्धनों से निकल कर नये क्षेत्र में प्रवेश कर रही है । बैंक –व्यवस्था की धारणा जो कि केवल बैंक जमा स्वीकार करने और उसे उधार देने तक सीमित थी, का अब विस्तार हो रहा है बैंक–व्यवस्था विकास – प्रेरित बनती जा रही है । संयुक्त स्कन्ध बैंक अब औद्योगिक और कृषि वित्त की आवश्यकताओं की पूर्ति करने की ओर अधिकाधिक ध्यान दे रहे हैं अल्पकालीन वित्त–प्रबन्ध की अपेक्षा अब बैंक विकास और विस्तार की आवश्यकताओं को दृष्टि में रखते हुए मध्यम और दीर्घकालीन उधार की ओर अपनी क्रियाओं को बढ़ा रहे हैं ।

3. बैंकों का राष्ट्रीयकरण – जुलाई 1969 में 14 बड़े बैंकों का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया । विदेशी बैंक और ऐसे बैंक, जिनकी जमा 50 करोड़ रूपए से कम थी, राष्ट्रीयकृत क्षेत्र में नहीं लाये गए । भारत सरकार का विचार था कि राष्ट्रीयकृत बैंक अर्थव्यवस्था को गत्यात्मक बना देंगे और देश में आर्थिक विकास की दर को त्वरित करने में सहायता देंगे । 15 अप्रैल 1980 को छः और वाणिज्य बैंकों का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया । इस प्रकार कुल जमा में सरकारी क्षेत्र के बैंकों का लगभग एकाधिकार हो गया ।

4 शाखा विस्तार **(Branch Expansion)** – मुख्य वाणिज्य बैंकों के राष्ट्रीयकरण और अग्र बैंक योजना (Bank Scheme) के आरम्भ के पश्चात् शाखा विस्तार प्रोग्राम तेज हो गया । ग्रामों एवं अर्ध्दग्रामीण क्षेत्रों में बैंक सुविधओं के विस्तार पर विशेष बल देने के कारण देश के पिछड़े हुए जिलों को लाभ हुआ है ताकि इनमें लधु–स्तर उद्यमों को प्रोन्नत किया जा सके । अभी तक भारत के केवल 30,750 ग्रामों

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

में राष्ट्रीयकृत बैंकों की शाखाएँ खोली गयी है किन्तु भारत में लगभग 5 लाख गॉव हैं जिन्हें प्रत्यक्ष रूप में बैंक सुविधएँ पहुँचाने की समस्या है । बैंक सुविधओं के ग्राम एवं पिछड़े क्षेत्र में विस्तार और किसानों एवं ग्रामीण दस्तकारों को रियायती दर पर ऋण देने से सार्वजनिक क्षेत्र के बैको की निम्न लाभदायकता (Low profitability) में योगदान दिया है ।

5 विकास प्रयास में सहयोग – राष्ट्रीयकरण के पश्चात् सरकारी क्षेत्र में बैंकों ने अपने पारम्परिक उद्देश्य अर्थात् हिस्सेदारों के लाभ को अधिकतम करने के कार्य का परित्याग कर दिया है और वे अपने आपको विकास–प्रयास का मुख्य उपकरण समझने लगे । इस चेतना का सबसे महत्वपूर्ण पहलू अग्र बैंक योजना (Lead Bank Scheme) का चालू करना था जिसके आधीन देश के सभी जिले किसी–न किसी बैंक को सौंपे गए । प्रत्येक अग्र बैंक अपने आधीन जिलों में विस्तृत आर्थिक सर्वेक्षण करवाता है ताकि 1. – सभी महत्वपूर्ण स्थानों पर शाखाएँ खोली जा सकें 2. – जिले में विकास के लिए अधिकतम उधार सेवाएँ उपलब्ध कराई जा सकें और 3. – जिले में उपलब्ध अतिरेक को गतिमान किया जा सकें ।

प्राथमिकता क्षेत्र को उधार (Priority Sectors Lending) राष्ट्रीयकरण से पूर्व वाणिज्य बैंकों के विरूध्द प्रायः यह आलोचना की जाती थी कि उन्होने किसानों ,छोटे उद्योगपतियों, कारीगरों और निर्यातकों को वित्त उपलब्ध कराने में उपेक्षा की । राष्ट्रीकरण के पश्चात बैंकों ने इन प्राथमिकता वाले क्षेत्रों को उधार उपलब्ध कराने की ओर काफी ध्यान दिया ।

छोटे व्यापारियों एवं उद्यमकर्ताओं को ऋण देने के सम्बन्ध में बहुत प्रगति हो चुकी है और बैंको ने निम्न वर्गो को उधार देने के लिए विशेष योजनाएँ चालू की हैं बहुत से उधार लेने वाले इससे पूर्व महाजनों की दया पर निर्भर थे और अत्यधिक ब्याज देते थे । वाणिज्य बैंक अब उचित ब्याज दर 8 से 10 प्रतिशत के बीच पर पर्याप्त मात्रा में और उचित समय पर ऋण उपलब्ध कराते है । प्राथमिकता–प्राप्त क्षेत्रों के बारे में जो आरम्भिक जोश उत्पन्न हुआ था, वह बैंकों द्वारा सामना की गयी कई समस्याओं के कारण ठण्डा हो गया :

1. 40 प्रतिशत का लक्ष्य प्राप्त करने के उद्वेश्य में बैंक पर कमजोर वर्गो को उधार देने में बाहरी दबाव था ।

2. चूँकि प्राथमिकता–क्षेत्र वाले ऋण छोटे खातों से सम्बन्धित थे, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक इन विवरण पर पूरी निगरानी न रख सके और न ही इन छोटे ऋणों की पूरी वसूली ही हो पायी । परिणामतः बैंको की लाभदायकता पर इसका बुरा प्रभाव पड़ा ।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

3. वाणिज्य बैंकों को दोहरी मार सहनी पड़ी । एक ओर उन्हें अपनी जमा का 53.5 से 55 प्रतिशत रोक–आरक्षण अनुपात (Cash Reserve Ratio) और संवैधानिक तरलता अनुपात (Statutory Liquidity Ratio) के रूप में रखना पड़ता था और दूसरी ओर अपने उपलब्ध संसाधनों का 40 प्रतिशत प्राथमिकता क्षेत्र (Priority sector) को रियायती दर पर उपलब्ध कराना पड़ता था । परिणामतः उनकी लाभदायकता (Profitability) पर इसका बुरा असर पड़ा ।

4. प्राथमिकता क्षेत्र को बैंक –उधार देश के सभी राज्यों में समान नहीं था । बहुत से पिछड़े हुए राज्यों अर्थात् उत्तर प्रदेश, बिहार, राजस्थान आदि में यह बहुत कम था । इससे देश में असंतुलन बढ़ा है ।

प्राथमिक क्षेत्र उधार और आई.बी.ए.पैनल

वित्तीय प्रणाली पर नरसिम्हम समिति 1991 ने प्राथमिकता क्षेत्र कि लिए उधार को जारी रख्ने का विरोध किया । समिति ने सिफारिश की

क. प्राथमिकता क्षेत्र की पुनः परिभाषा करनी चाहिए ।

ख. इसे कुल बैंक उधर का 10 प्रतिशत कर देना चाहिए ।

ग. इसकी तीन वर्षो के पश्चात समीक्षा की जानी चाहिए ।

ध. इसे धीरे–धीरे पूर्णतया समाप्त कर देना चाहिए ।

भारत सरकार ने नरसिम्हम समिति की सिफारीशो को स्वीकृति नहीं दी । किन्तु भारतीय बैंक संगठन (Indian Bank Association) ने बैंकिग क्षेत्र पर सुधार सम्बन्धी नरसिम्हम समिति 1998 को यह सुझाव दिया कि प्राथमिकता क्षेत्र के उधार की सीमा जो अब कुल उधर का 40 प्रतिशत है, को धटा कर 10 प्रतिशत कर देना चाहिए। इसके तीन मुख्य कारण बताए गएः

क. छोटे ऋण का परिचालन स्टाफ व्यय (Operation Field Staff expense) बहुत अधिक है और इसके लिए बहुत सा क्षेत्रीय स्टाफ (Field Staff) रखना पड़ता है ।

ख. कृषि एवं लधु–स्तर क्षेत्र में वसूली का अनुपात बहुत कम है ।

ग. परिसम्पत्तियों की गुणवत्ता बहुत बुरी है और इस कारण बहुत से जोखिम सहन करने पड़ते हैं ।

भारतीय बैंक संगठन ने प्राथमिकता क्षेत्र को पुनः परिभाषित करने के लिए निम्नलिखित सुझाव दिए :

1. प्राथमिकता क्षेत्र (Priority sector) को केवल आन्तरक क्षेत्र (Core sector) तक सीमित कर देना चाहिए ।

2. सरकार द्वारा प्रस्तावित सभी योजनाओं में लाभ–प्राप्तकर्ताओं के चयन में बैंकों को भी शमिल करना चाहिए ।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

3. सरकार को बिचौलियों के माध्यम से बैंकों को अनुदान (Subsidies) देने की अपेक्षा इन्हें प्रत्यक्ष रूप से बैंकों को देना चाहिए ।

बैंकरों के पैनल ने यह भी सुझाव दिया है कि प्राथमिकता क्षेत्र को दिए गए ऋणो पर ब्याज की दर विनियमित कर देनी चाहिए और बैंकों को अपनी ब्याज–दर स्वयं निर्धारित करने की इजाजत होनी चाहिए और ऐसा करते समय उन्हें निधियों की लागत, जोखिम लागत (Risk cost), प्रशासनिक एवं कारोबारी लागत (Transaction cost) और लाभ की सीमा को ध्यान में रखना होगा । पैनल में तर्क दिया है कि पहचान किए गए प्राथमिकता क्षेत्र उधार से वंचित नहीं रहेंगे क्योंकि बैंक उन्हें बाजार–सम्बन्धित–ब्याजदरों (Market related interest sates) पर अपनी विशेषज्ञता के अनुसार ऋण उपलब्ध कराते रहेंगे ।

प्राथमिकता क्षेत्रों के उधार प्राप्तकर्ताओं से वसूली की गति को बढ़ाने के लिए पैनल यह सुझाव देता है कि राज्य एवं जिला स्तर पर विभिन्न शाखाओं में ऋण के लक्ष्य को वसूली प्रतिशत से जोड़ देने चाहिए । पैनल ने छोटे ऋणों की वसूली के लिए ऋण वसूली न्यायाधिकरण (Debt recivery tribunal) स्थापित करने का आग्रह किया है और परिसम्पत्तियों से वसूली के लिए समर्थन देने का सुझाव दिया है । बैंकों को यह अधिकार होना चाहिए कि अदायगी में चूक के कारण वे परिसम्पत्तियों (Assets) को अपने हाथ में लें सकें । परन्तु वित्त मंत्रालय ने इन सभी सुझावों की अनदेखी कर दी ।

संदर्भ ग्रथ

1. वाणिज्यिक बैंक प्रबंध – डॉ. यू.एस. रस्तोगी एवं डॉ. जी. एस. गुप्ता
2. भारतीय अर्थव्यवस्था – रूद दत्त के.पी.एम. सुन्दरम
3. भारतीय रिर्जव बैंक बुलेटिन
4. नाबार्ड वित्तीय विवरणियॉ

■■■

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

स्त्री– पुरूष संबंधो के बदलते प्रतिमान

डॉ. रोशनी मिश्रा
सहायक प्राध्यापिका
हिन्दी विभाग
दुर्गा महाविद्यालय, रायपुर

भारतीय पुराण में वर्णित अर्धनारिश्वर का स्वरूप स्त्री–पुरूष संबंधो की परिपूरकता की ही अभिव्यक्ति है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी स्त्री में पुरूष तत्व और पुरूष में स्त्री तत्व के विशेष समन्वय से ही सही अर्थो में स्त्री और पुरूष बनते हैं। आचार्य रजनीश ने अपने दार्शनिक सिद्धांतो में उल्लेख किया है, प्रत्येक पुरूष के भीतर एक स्त्री तत्व का अस्तित्व प्रच्छन्न रहता है तथा प्रत्येक स्त्री में एक पुरूष का अस्तित्व समाविष्ट होता है। कोई भी व्यक्ति कभी सौ प्रतिशत स्वावलंबी नहीं होता भले ही दुख अकेले सहा जा सकता है, लेकिन खुशियों को बॉटने के लिये तो भागीदार चाहिए ही स्त्री पुरूष संबंध में महत्व स्वावलंबन का नहीं बल्कि गरिमापूर्ण परावलंबन का है। दोनों ही एक दुसरे के सहयोग के आकांक्षी और आश्रित हैं पुरूष और नारी सृष्टि के निर्माण और संचालन के दो मूलभूत तत्व है, पर पुरूष मनुष्य है, मानव है। नारी केवल नारी है, नर की प्रतिच्छाया नारी। मानुषी और मानवी उसे नहीं कहा गया। यह अर्थ सारे संसार में समान है

अबला अबला कह जगने
छीन लिया है आत्मबल भी।
देवी देवी कह तुमसे
ले लिया है मानवी श्रृंगार भी।।

इस अर्थ की समानता ही हर कहीं पुरूष के खिलाफ समान आक्रोश, असंतोष, अकुलाहट और विद्रोह को जन्म देती है।

यह निर्विवाद रहा है कि समाज में नारी की जो भूमिका रही है, उसमें मॉ का स्वरूप स्र्वाधिक मान्य व प्रभावशील रहा है। मनुष्य की जननी होने के नाते ही नहीं मातृत्व की सर्वजनीन मानवीय उदारता के कारण ही मातृपद हर जगह हर काल में प्रतिष्ठित हुआ। इसके बावजूद वह दूसरे दर्जे की क्यों?

नित नये तकनीकी विकास के कारण पुरूष शक्ति पर निर्भरता कम होती जा रही है। मशीने बाहुबल का स्थान ले रही हैं। वैज्ञानिक तकनिकी प्रगति ने नारी के लिये नये कार्यक्षेत्रों के द्वारा खोले हैं । निश्चत ही यह बात स्त्रियों के लिये आत्मविश्वास की द्योतक और उत्साहवर्धक है। मातृत्व नारी की प्रमुख भूमिका है, तो पुरूष की जन्मदात्री

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

होने के नाते संतान के लिये पुरूष के समक्ष अभ्यर्थिनी है तो इस दृष्टि से पुरूष से कुछ कम मान लेने में हर्ज भी नही । शायद इसलिये भी कि आज भी विवाह नारी के लिए लगभग 'कैरियर' रहा जबकि पुरूष के लिये उसकी अन्य आवश्यकताओं में से एक। नारी को बंधना पडा पुरूष मुक्त रहा। नारी न पुरूष से हीन है, न उसे हर क्षेत्र में पुरूष की बराबरी चाहिये। उसे चाहिये मानवता का अधिकार क्योंकि इसी अधिकार और दायित्व को लेकर चलने से ही वह अपनी हीनता जन्य कुंठाओं से बच सकेगी और नई पीढी को बेहतर मानवीय संस्कारों से समृद्ध करेगी। यहाँ मै मैथिलीशरण गुप्त के द्वापर काव्य की पात्र विधृता के कथन का उल्लेख करना चाहूँगी।

अधिकारों के दुरूपयोग का
कौन कहाँ अधिकारी
कुछ भी स्वत्व नहीं रखती
क्या अर्धागंनी तुम्हारी।।

कवि ने विधृता के माध्यम से पुरूष की इस मनोवृत्ति पर करारा व्यंग्य किया है– पुरूष प्रधान समाज में पुरूष के लिये सब कुछ जायज है, पर नारी सहज सत्कर्म में भी लांछन ही पाती है।

सेवा त्याग औ सहन शीलता,
तुम पर ही विराजती सदा।
अपमान उपेक्षा औ तिरस्कार,
होती सदा ही तुम्हारा कंठहार।।

इस निस्वार्थ समर्पण के बदले उसे क्या मिला?अपने व्यक्तित्व का विलयन– क्यूंकि उसकी अस्मिता ही गिरवी पडी है, कुछ भी तो अपना नहीं। उस स्त्री का भी अपना वजूद है जो सूर्य देवता सहित सभी देवी देवताओं से अपने कोरव और सिन्दूर को बनाये रखने की भीख मांगती है, जो व्रत त्योहार के नाम पर यज्ञ की सुखी समीधा सी चिटकती होम होती रहती है। इतिहास गवाह है कि स्त्री कभी पुरूष के मान सम्मान का अवरोधक नहीं रही बल्कि उसके कारण ही गिरती प्रतिष्ठा शिखर पर पहूँची है– मंडन मिश्र जो कि ज्ञान के क्षेत्र में लब्ध–प्रतिष्ठित आचार्य शंकराचार्य से पराजित हो गये। तब मंडन मिश्र की पत्नी भारती ने स्वयं शंकराचार्य से शास्त्रार्थ कर उन्हें पराजित किया और अपने अर्धाग की प्रतिष्ठा बरकरार रखी।

आज नित नये तकनीकी विकास के कारण पुरुष–शक्ति पर नारी की निर्भरता दिनों दिन कम होती जा रही है। स्त्री–समाजशास्त्री मानवशास्त्री, चिकित्सक और मनोवैज्ञानिक भी इस दिशा में सक्रिय हो रही है। आर्थिक दृष्टिकोण से स्वावलंबन ने उसमें आत्मविश्वास को बढाया है। आमतौर पर स्त्रियों में असुरक्षा की भावना बलवती

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

रहती है। इस तीव्र मनोभाव के बावजूद अगर बडे पैमाने पर महिलाएँ अकेली रहकर भी अपना जीवन आसानी से गुजार सकती है। निश्चय ही लक्ष्य प्रप्ति में स्त्री–पुरूष दोनों की खासी भूमिका, साक्षी–जिम्मेदारी है। स्नेह और सुरक्षा सुविधा स्वतंत्रता, सुख और आश्रय का है प्रतीक है 'घर'। अपनत्व की भावना आपसी प्यार एक दूसरे के प्रति रीझ से ही आवास एक घर में परिवर्तित होता है। पर इसे समय की विडंबना कहे या दुखद आश्चर्य कि एक साथ इतने सारे आकर्षणों का केन्द्र यही घर जो पति–पत्नि दोनों के साझे सपने, साझे दायित्व का प्रतीक होना चाहिये। पुरूष के लिये विश्राआम–स्थल और नारी के लिये आजन्म कारावास मात्र ही रह गया हैं। असंतोष और निराशा की लपेट में आकर दाम्पत्य व परिवार जीवन क्षत–विक्षत होकर अपनी संज्ञा खोने लगा है, आज बडे से बड़े समस्याओं के निराकरण के लिये विद्वानों का सम्मेलन और सेमिनार आयोजित किये जाते है, पर समस्याओं की जड़ कहां है, इस बुनियादी सवाल पर ध्यान कम ही दिया जा रहा है। आज आवश्यकता तो इस बात की है कि घर ऐसा हो, जो पति–पत्नि दोनों के लिये आकर्षण का केन्द्र हो, जिसकी रचना में दोनों समान रूप से सहभागी हो जहां से ऊबकर न पति को बाहर मन बहलाने की आवश्यकता हो, और न पत्नी को ही जीवन बंधनमय या भार स्वरूप लगे। साथ ही व्यवस्थित दिनचर्या, व्यक्तिगत और सम्मिलित जीवन से विविधता नवीनता और मनोरंजन का समावेश स्वस्थ बच्चों का सीमित परिवार, बच्चों की संस्कारिता के लिये सभ्य सुसंस्कृत वातावरण, गृह कार्य में परस्पर मिल बॉट या काम में सहयोग तथा एक दूसरे को समझने सहने की आदतों का विकास ये ही हैं कुछ उपाय जो हमारे सपनों के घर की सृष्टि कर सकते है।

इन सबके बावजूद बल्कि मै कहती हूँ इनसे भी पहले आवश्यकता है – स्नेह– संवेदना का अदान–प्रदान, अपनेपन का ऐहसास और आपसी विश्वास।

संदर्भ सूची –

1 रोशनी मिश्रा, मौलिक अप्रसारित, अप्रकाशित कविता
2 मैथिली शरण गुप्त – द्वापर साहित्य सदन, चिरगांव झॉसी– 1966 पृ 31
3 रोशनी मिश्रा, मौलिक अप्रकाशित कविता

■■■

DMV Journal
Annual Journal of Durga Mahavidyalaya, Raipur (C.G.)
ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

विजयिनी मानवता हो जाय

डॉ. नीलिमा शर्मा
सहायक प्राध्यापक

मानव संस्कृति के संस्थापन की कहानी कामायनी की कथावस्तु है जिसमें देव संस्कृति के विनाश से लेकर पूर्ण आनन्द प्राप्ति की कथा है। भारतीय वाङमय के विविध ग्रंथों में बिखरी हुई सामग्री का संचयन प्रसाद जी ने किया है। कामायनी मुख्य रूप से मनु, श्रद्धा और इड़ा की कहानी है। मानव मन की विविध वृत्तियों का मनोवैज्ञानिक रूपक कवि की कुशलता है। जल प्रलय के बाद जलातिरेक घटने पर मनु की चिन्ता से कथा का प्रारंभ होता है। मनोविज्ञान और योगशास्त्र सिद्धांतों के आधार पर ऐसे रहस्य रोमांच पूर्ण दृश्यों की अवतारणा हुई है। श्रद्धा से मिलने के उपरांत श्रद्धा मनु को कर्मरत होने की प्रेरणा देती है। गजानन माधव मुक्तिबोध के अनुसार कामायनी की कथा केवल एक फैण्टेसी है। मनु उस जीवन समस्या का प्रतीक है, जो जीवन समस्या के किसी–किसी अंश में प्रसाद जी की अपनी समस्या रही है। उन्होंने जीवन समस्या का एक दार्शनिक निदान भी प्रस्तुत किया है। वैदिक साहित्य के मनु की कथा कथानक का आधार है कामायनी की कथावस्तु, पात्र, चरित्र घटनाएँ आदि माध्यम है, जिनके द्वारा लेखक के ह्रदय अंतर में संचित जीवन संघर्ष और जीवन अनुभव प्रकट हुआ है। प्रसाद जी ने वेद तथा उपनिषद् आर्य वातावरण से अनुप्राणित, समाज आदर्श से प्रेरित होकर अपनी विश्व दृष्टि तैयार की वह कामायनी में प्रकट हुई। कामायनी के अध्ययन के लिए यह आवश्यक है कि लेखक का व्यक्तित्व और उसका सामाजिक सन्दर्भ और उसके परिवेश परिस्थिति का संबंध उसका जीवन जगत का संबंध, भाव–लोक उसके जीवन निष्कर्ष का अध्ययन किया जाना होता है, कवि के माध्यम से उससे सम्बन्धित समाज, समाज और विश्व का अध्ययन – उसके बाद प्रसाद के व्यक्तित्व की अन्तः प्रकृति और उनके सूत्रों के माध्यम से कलाकृति (ग्रंथ) का अध्ययन मानव संबंध अभाव को मूर्त करने वाले जीवन मूल्य और आदर्श किस प्रकार के है?पंडित विनोदशंकर व्यास कहते है "मुझसे जब कभी यह अपनी कहानी सुनाते, तो उनका चेहारा तमतमा उठता, आंखे भर आती और ललाट पर संसार की कठोरता की एक रेखा स्पष्ट खिंच जाती थी।"

वाचस्पति पाठक ने लिखा है " जवानी कब बीत गई यह जाना ही नहीं।"

हंस मे आत्म कथा में प्रेमचन्द जी के आग्रह पर आत्मकथा के नाम पर एक कविता भेजी थी – ''कहां मिला वह सुख जिसका मैं स्वप्न देखकर जाग गया?'' आलिंगन में आते–आते मुस्क्या कर जो भाग गया?'' मानव चरित्र के क्षेत्र में सत्–असत् मंगल तथा अमंगल, शिव और अशिव के बीच कामायनी में घनघोर युद्ध

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

नहीं बताया गया है। मनु ने इड़ा के सहयोग से सारस्वत सभ्यता का पुनःनिर्माण किया और मनु ने अपने अहं के कारण उसे तोड़ दिया। श्री नन्द दुलारे बाजपेयी मनु के चरित्र को स्थूल नैतिक–मानों से मापने के लिए तैयार नहीं है। यथार्थवादी लोग प्रवृत्ति–निवृत्ति, भले और बुरे इने द्वन्द्वों का समाहार एक नित्य सत्ता में करते है और खुली आँख से उस सत्ता की समस्त लीला का रस लेते है। यह लीला या अभिव्यक्ति ही रस है। प्रसाद जी पश्चिम के उपन्यास कारों से प्रभावित थे। आधुनिक हिन्दी छायावाद में स्त्री अप्सरा, देवी और श्रद्धा है। इस फैण्टेसी का फ्रेम उसका ढांचा, वस्तुतः अध्यात्मवादी रहस्यवादी है। तुम कौन?मैं कौन?ये प्रश्न भारतीय दर्शन के अंग रहे है। इन प्रश्नों में आत्मा –परमात्मा का संबंध घोषित है। फैण्टेसी का आकार तो अपना होता है। किन्तु उसमें के रंग जीवन तथ्यों से उद्‌घाटित होते हैं। श्रद्धा दिव्य रूप में प्रस्तुत की गई है। प्रसाद जी के पास ऐतिहासिक बुद्धि थी। वे मानव भाग्य के संबंध में दार्शनिक दृष्टिकोण से तो चिन्तन करते ही थे, समाज और जाति के भाग्य के संबंध में की उन्हे सोचना पड़ा। कामायनी लिखने में प्रसाद जी का उद्‌देश्य वेद कालीन जीवन चित्रण नहीं है। वरन् वे आधुनिक प्रवृत्तियों तथा भाव विचारों को कल्पनात्मक रूप से प्रस्तुत कर रहे है। प्रसाद जी के सामन्ती सांस्कृतिक प्रभाव छायाओं से जीवन के सभी क्षेत्रों का रास्ता न बताकर अपनाकर अद्वैतवाद का मार्ग बताया लम्बे समय से चली आ रही सामन्ती सभ्यता डूब मरी देव सभ्यता को ब्रिटिश पूंजीवाद मार गया (देव, ब्रिटिश, सामंती) प्रलय मनु को सामन्ती विलास वासना सुख व्यवस्था और उसके विनाश की भावना की उसके मन में थी

भूले थे हाँ, तिरते केवल,
सब विलासिता के मद में।

यह चित्र उसी सामन्ती सभ्यता का है। प्रसादजी छायावादी व्यक्तिवादी शब्दावली में मनु कौन सी जिन्दगी तलाश करते हुए बताते है। देश में एक ओर भारतीय यूरोपीय विद्वानों द्वारा संस्कृति की गरिमा की पुनः स्थापना एक ओर रामकृष्ण विवेकानंद जैसे सन्त दार्शनिक एक ओर बंगाल साहित्यिक ब्रम्हसमाज का सुधारवादी आन्दोलन और छायावाद के विकास का क्रम था।

मनु के लिए श्रद्धा मधुर सन्देश देने वाली थी श्रद्धा का व्यक्तित्व स्वाभाविक है, जीवन के प्रत्येक क्षण को आशावादी दृष्टि से देखने वाला है उसका कार्य विवेक जन्य होता है उसे स्वरूप ज्ञान हैं, उसे पता है स्त्रियाँ पुरूष के जीवन में उत्साह माधुर्यभाव और दुर्गमधारियों को पार करने की प्रेरणा प्रदान करती है श्रद्धा कहती है–

दया, माया, ममता लो आज,
मधुरिमा, लो अगाध विश्वास

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

हमारा ह्रदय–रत्न–निधि स्वच्छ
तुम्हारे लिए खुला है पास।

प्रसादजी ने अपनी साहित्यक कृतियों में जो पात्र प्रस्तुत किये है वे सबल व्यक्तिवादी भावुकता से प्रेरित मधुर और भव्य मानव गरिमा से सम्पन्न है। मानव के सम्बन्धों की दृढ़ आस्था के आधार पर ही उन पात्रों की भावुकता तथा उनका आदर्शवाद खड़ा है।

वर्तमान सामाजिक दृष्टि से कामायनी पर दृष्टि डाले तो परिवर्तनशील समाज में एक जागरूक व्यत्ति घर बाहर और मध्यवर्ग के संस्कारों से जूझता दिखाई पड़ता है। हमारे समाज में स्त्री के जिम्मे घर है, पुरूष के जिम्मे बाहर जिसकी वजह से घर और बाहर की समस्या उत्पन्न हो जाती है। कामायनी में मनुका व्यक्तित्ववाद प्रगतिशील रूप में दिखाई पड़ता है। श्रद्धा का व्यक्तित्व आधुनिक जीवन का ऐतिहासिक सत्य है। घर में रहकर निश्छल सुख और तृप्ति का आदर्श प्राप्त करती है मनु के दुखी अवस्था में होने पर श्रद्धा उसे आश्रय देती है और इस सहायता से मनु आत्म–ज्ञान प्राप्त करता है और हिमालय जाकर तपस्या करने लगता है। प्रसाद जी ने कामायनी में शिव अशिव के द्वन्द्वका चित्रण किया है। कामायनी मुख्यतः आत्म परक काव्य हैं। मानवता की विजय की घोषणा करने वाली श्रद्धा है।

प्रसाद जी का कामायनी के माध्यम से संदेश है कि हम अपने चरित्र के सम्बन्ध में जितना जानते है कुछ क्षणों में केवल उसका आभास हमें प्राप्त होता है। संक्षेप में कामायनी के काव्य–सौन्दर्य में जो जीवन–मूल्य और जीवन–दृष्टि है वह लेखक के वर्ग चरित्र से उत्पन्न और विकसित है।

शक्ति के विद्युतकण जो व्यस्त,
विकल बिखरे है हो निरूपाय,
समन्वय उनका करे समस्त,
विजयिनी मानवता हो जाय।

प्रसाद जैसे राष्ट्रप्रेमी, विश्वप्रेमी, समताप्रेमी, अभेदप्रेमी कवि हिन्दी में दूसरा नहीं। कालिदास की कला एवं सौन्दर्य उपासना, भवभूति की करूणा, रवीन्द्र का विश्वबन्धुत्व, जयदेव का माधुर्य, सूर का प्रेम रस, शंकर की शिवशक्ति, भरत का नाट्य–लय संगीत सबको यदि एक जगह देखना है तो वह है कामायनी इसमें मिलन का, श्रद्धा का, समता का, श्रेयस का, आनन्द का संगीत है। जीवन के उभय पक्ष अंधकार–आलोक है। जगती की ज्वाला, ममत्व की निर्ममता, घृणा, उपेक्षा स्वार्थपरता का यथार्थ चित्रण है साथ ही उस ज्वाला से उबरने के लिए उस विषमता की पीड़ा से मुक्त होने के लिए सेवा समता समरसता का दर्शन भी है। इसमें सत्–रज–तम तीनों

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

तत्व है।

भारत का प्राचीन इतिहास श्रद्वा–समर्पण–साधना की कहानी है। वैदिक काल से यह विश्वास रहा है कि व्यक्ति का विवेक उसकी निर्भयता, उसकी समदृष्टि, उसकी सत्य के प्रति निष्ठा ही समाज का उत्कर्ष करती है और वही व्यक्ति समाज की सेवा कर सकता है जो परमार्थ–परोपकार को जीवन का धर्म मानता है। भारतीय ऋषियों संतों की जीवन गाथा अंतःकरण शुद्धि की गाथा है। शुद्धि तप से संभव है। तप अर्थात् सत्य की प्राप्ति की सतत चेष्टा कामायनी में चेतनता की अनुभूति अर्थात् कर्म करते हुए उस सत्य की प्रत्यक्षानुभूति और कर्म में लीन होते हुए भी उससे अनासक्ति ही अध्यात्म–आनंद है। आनन्द कामायनी का विश्राम स्थान है पूरा सर्ग ईश्वर के साथ अद्वैत भाव है। प्रसाद को ईश्वर प्रकृति् आत्मा के ऐक्य की अनुभूति से ही शांति मिली थी –

संगीत मनोहर उठता,
मुरली बजती जीवन की।

यदि श्रद्धा और मनु के सहयोग से यानवता का विकास रूपक है तो भी बड़ा ही भावमय और श्लाघ्य है। कलाकार वही है जिसे मानवीय क्षमताओं में सुदृढ़ आस्था हो। मानव जूझता है सत्य की प्राप्ति के लिए, जो जूझता है वही दूसरों के लिए प्रेरणा का स्त्रोत् है। विवेकानंद ने इसे 'मैनली नेस' कहा है। सत्यान्वेषी को मानवीय दुर्बलताओं से जूझना पड़ता है। प्रसाद ने श्रद्धा को चरित्र सृष्टि करके मानवता को उच्चता दी है। मानवता में आस्था का आशय है अपनी आत्मज्योति को दूसरे की आत्मज्योति से मिलाना। यही दान–दक्षिणा मानवता का प्राण है। श्रद्धा ने अपनी आत्मज्योति से इड़ा मनु को आलोकित किया। प्रसाद ने श्रद्धा को काव्य में बांधकर जगत् को आलोकित किया।

हे सर्वमंगले! तुम महतीं, सबका दुख अपने पर सहती
कल्याणमयी वाणी कहतीं, तुम क्षमा निलय में हो रही।

मनु ने स्वीकार किया कि वे श्रद्धा का मूल्य नहीं समझ सके थे–

"बुद्धि–तर्क के छिद्र हुए थे
हृदय हमारा भर न सका।"

कामायनी के मनु, इड़ा और श्रद्धा मनोमय (मनशक्ति), वाड.मय अभिव्यक्ति शक्ति और प्राणमय (सामंजस्य स्थिर करने वाली शक्ति), स्वरूप की प्रतिभूति दीख पड़ते है। स्वयं प्रसाद ने कहा है कि कामायनी को श्रद्धा और मनु (मनन) सहयोग से मानवता के विकास का रूपक भी माना जा सकता है।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. जयशंकर प्रसाद : नन्द दुलारे बाजपेयी पृ. 64
2. कामायनी : एक पुनर्विचार गजानन, माधव मुक्तिबोध चतुर्थ संस्करण 2007 पृ. 9, 13
3. कामायनी : जयशंकर प्रसाद पृ. 26 संस्करण 2009 प्रकाशन संस्थान
4. कामायनी : संस्कृति–सौन्दर्य श्रेयस का संगीत : डॉ. हरिहर प्रसाद गुप्त–प्रथम संस्करण 1984
5. प्रसाद का साहित्य : प्रेम तात्त्विक दृष्टि : डॉ. प्रभाकर श्रोत्रिय 1975
6. कामायनी : प्रेरणा और परिपाक डॉ. रमाशंकर तिवारी 1973

■■■

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

A CORRELATIONAL STUDY OF MENTAL HEALTH AND SPIRITUAL INTELLIGENCE

Dr. Shakuntala Dulhani
Asst. Professor, Deptt. of Psychology
Durga Mahavidyalaya, Raipur

ABSTRACT

According to WHO Expert Committee (1959) "mental health implies the capacity in an individual to form harmonious relations with others and to participate in or contribute constructively to changes in his social and physical environment. It also implies his ability to a harmonious and balanced satisfaction of his own potentially conflicting instinctive drive, in that it reaches an integrated synthesis rather than the denial of satisfaction to certain instinctive tendencies as a means of avoiding the thwarting of others".

According to Wigglesworth (2002) spiritual intelligence is the ability of individual to behave with wisdom and compassion while maintaining inner and outer peace, regardless of the situation.

The problem of the present research work was to identify the relationship of mental health and spiritual intelligence.

It was hypothesized that there would be positive correlation between mental health and spiritual intelligence.

An incidental sample of 50 adolescent students aging 15-17 years and studying 11th or 12th class was selected from school going population of Raipur city and spiritual intelligence scale and mental health battery were administered on that.

The finding confirmed the research hypothesis.

KEYWORDS: Mental Health, Spiritual Intelligence.

INTRODUCTION

Health is an indispensable quality in human being. It has been described as soil from which the finest flowers grow. Health indicates psychosomatic well-being of an individual and is a broader concept which includes physical, social, and mental health. People in a state of emotional, physical, and social well-being fulfill life responsibilities, function effectively in daily life and are satisfied with their interpersonal relationships and in themselves. Looking at the divesting scenario of the modern society, mental health is vitally important, as our entire thought process takes place in mind, our all goals originate from our mind, and all kinds of directions are issued from mind which guide, shape, and regulate our communication, conduct, and behaviour and determine our personal and social functioning as well as adjustment. If the mind is healthy, desirable behaviour exists. It will permit the individual to lead a socially and economically productive life. Mental health is a sense of well-being, and individual experience. It determines individual's way of living,

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

working and leisure activities. It produces happiness, stability, and security. It is the ability of an individual to make personal and social adjustment.

In Indian culture, various epics quoted purity and divinity as the two main characteristics of mentally healthy individual. In Sri Bhagvad Gita, the nature of God is described as, "fearless, purity of mind, wider knowledge, concentration, charity, self-control, sacrifice, uprightness, vigour, forgiveness, fortitude, freedom from pride". The "gurus" has to possess certain characteristics, which everybody should follow and "Guru" is the role-model, the qualities of "Guru" are: nonviolence, truth, freedom from anger, tranquility, aversion towards fault finding, compassion, gentleness, modesty and steadiness. All these characteristics are of a well-adjusted, well-integrated and mentally healthy individual. In Sri Bhagvad Gita, Lord Krishna emphasized on harmonious relations among individuals which leads to sound mental health and adjustment.

According to 'Yoga', mental health is an integral part of the whole healthy personality. The outstanding features of the Indian concept of mental health are balanced physical and mental constitution, happy state of self and mind, and the holistic nature of health (Khurana & Singh, 1984; Sinha, 1990; Ram, 1998; and Dalal, 2001). Tripathi et al. (2006), stated that the Indian perceptions can make a positive contribution to the state of mental health in the modern life.

According to WHO Expert Committee (1959) "mental health implies the capacity in an individual to form harmonious relations with others and to participate in or contribute constructively to changes in his social and physical environment. It also implies his ability to a harmonious and balanced satisfaction of his own potentially conflicting instinctive drive, in that it reaches an integrated synthesis rather than the denial of satisfaction to certain instinctive tendencies as a means of avoiding the thwarting of others". Mental health can be conceptualized without restricting its interpretation across cultures. WHO (2001) has recently proposed that mental health is ... "a state of well-being in which the individual realizes his or her own abilities, can cope with the normal stresses of life, can work productively and fruitfully, and is able to make a contribution to his or her community".

Life presents a series of challenges and stressors that require a set of intelligences to deal cope with them. In the later part of the twentieth century, Gardner (1983) theory of multiple intelligences proposed intelligence not as one single entity, but as seven independent primary intelligences, including linguistic, logical-mathematical, musical, bodily-kinesthetic, spatial, intrapersonal and interpersonal intelligences. Gardner (1993) defines intelligence as a computational capacity – a capacity to process a certain kind of information – that originates in human biology and human psychology.

With the advent of 21st century, there is growing evidence that there is third 'Q' – 'S.Q.', or spiritual intelligence, apart from I.Q. and E.Q. Thus, the full picture of human intelligence can be completed with this third 'Q', that is spiritual intelligence. Although, Gardner (1993) decided against theorists and researchers have recently argued for its recognition as an autonomous human intelligence or skill set (Zohar & Marshall, 2000; Emmons, 2000a; Noble, 2000; Wolman, 2001; Vaughan, 2002; Nasel, 2004; and Amram, 2007).

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

Spiritual intelligence have been described as the ultimate intelligence by Zohar & Marshall (2000), who place it at the top of a hierarchy, with emotional intelligence below and rational intelligence (I.Q.) below that. The researches of Persinger (1996) and Ramchandran (1999) led to identification of a 'God-spot' in the human brain. The 'God-spot' is an area in the brain that functions like a built-in spiritual centre located within neural connections in the temporal lobes. Examination of various brain scans, taken with position emission topography, reveals that these natural areas light up whenever subjects are exposed to discussion of spiritual motifs. These findings strongly suggest that the brain is wired for cognitive constructs that produce meaning-making reflection, that is, humans are naturally predisposed to think in spiritual terms.

According to Wigglesworth (2002) spiritual intelligence is the ability of individual to behave with wisdom and compassion while maintaining inner and outer peace, regardless of the situation. There are four hierarchies in terms of the human intelligence, which are depicted in a pyramid shape and shows the sequence of development. As babies, the first step is to control their bodies, this is physical intelligence. The next development is the linguistic and cognitive abilities, these are known as intelligence quotient. The individual with then develop the emotional intelligence before gaining spiritual intelligence. She states further that, the emotional and spiritual abilities are related to each other.

COMPONENTS OF SPIRITUAL INTELLIGENCE

Fifteen core components are proposed to comprise spiritual intelligence are

(1) Compassion, (2) Critical Existential Thinking, (3) Divinity, (4) Egolessness, (5) Equanimity, (6) Flexibility, (7) Forgiveness, (8) Gratitude, (9) Self-Acceptance, (10) Meaning And Purpose Of Life, (11) Openness, (12) Self-Actualization, (13) Self-Awareness, (14) Spiritual Practice, And (15) Transcendental Awareness.

PROBLEM & HYPOTHESIS

The problem of the present research work is to identify the relationship of mental health and spiritual intelligence.

It is hypothesized that there would be positive correlation between mental health and spiritual intelligence.

METHODOLOGY

SAMPLE

An incidental sample of 50 adolescent students aging 15-17 years and studying 11th or 12th class was selected from school going population of Raipur city.

TOOLS

Following tests were used for the purpose in the present study,

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

1. Spiritual Intelligence Scale (Ajawani et al., 2009) was used to measure spiritual intelligence level of adolescents.
2. Mental Health Battery (Singh & Sengupta, 2000) was used to determine the level of mental health of the adolescents.

PROCEDURE

Spiritual intelligence scale and mental health battery were administered on incidentally selected adolescent students aging 15-17 years and studying 11^{th} or 12^{th} class.

RESULTS AND DISCUSSION

The obtained correlation ($r = 0.29$) is found to be statistically significant at .05 level. This finding of the present study is in consonance with those of Hay &Morisy (1978), Ioannis & Ioannis (2005),Emmonce (2000),Nobel(2000),West (2004), Khodabakhshi (2011) .The finding signifies that with increase in spiritual intelligence there is increase in mental health. The finding has implication in developing intervention programme to enhance spiritual intelligence to observe its positive impact on mental health of people in turn.

ACKNOWLEDGMENT

I deeply express my gratitude and appreciation to my students Anurag Singh and Mahima Awasthi (B. A. Final year) Durga Mahavidyalaya for their help through out the tenure of this research work.

REFERENCES

Ajawani, J.C., Sethi, A., & Chhawchharia, K. (2009). Spiritual Intelligence Scale. F.S. Management India Pvt. Ltd., F.S. House, Maruti Vihar, Raipur (C.G.) India.

Amram, Y. (2007). The seven dimensions of spiritual intelligence: An ecumenical grounded theory. Paper presented at the Conference of the American Psychological Association.

Dalal, A.K. (2001). Health Psychology. In J. Pandey (Ed.), Psychology in Indian revisited: Developments in the discipline, 2, 356-411. New Delhi: Sage.

Emmons, R.A. (2000). Is spirituality an intelligence? The International Journal for the Psychology of Religion. 10, 27-34.

Gardner, H. (1983). Frames of Mind: The Theory of Multiple Intelligences. Basic Books, ISBN 0133306143

Gardner, H. (1993). Multiple Intelligences: The Theory in Practice. Basic Books, ISBN 046501822X.

Hay, D., & Morisy, A. (1978). Reports of Esctatic, (sit), Paranormal, or Religious Experience in Great Britain and the United States: A Comparison of Trends. Journal for the Scientific Study of Religion, 17, 255-268.

Ioannis, T., & Ioannis, N. (2005). Exploring the relationship of emotional intelligence with physical and psychological functioning. Stress and Health, 21, 77-86.

Khodabakhshi A., & Khodaee M. R. (2011). Europe Psychology,26 (1) 1588.www.pelagia research library.

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

Khurana, A., & Singh, A. (1984). Mental Health: Western and Indian Concept. Vedic Path, XLVII(2).

Nasel, D.D. (2004). Spiritual orientation in relation to spiritual intelligence: A consideration of traditional Christianity and new age/individualistic spirituality. Unpublished doctoral dissertation, University of South Australia.

Noble, K. (2000). Spiritual intelligence: A new frame of mind. Advanced Development, 9, 1-29.

Persinger, M. A. (1996). Feelings of past lives as expected perturbations within neurocognitive processes that generate the sense of self: Contributions from limbic labiality and vectorial hemisphericity. Perceptual and Motor Skills, 83 (2),1107-1121.

Ram, U. (1998). Suffering and stress management, West Versus East Pune: Deepa.

Ramachandran, V. S. (1999). Phantoms in the brain: Exploring the mysteries of the human brain. London: Fourth Estate.

Singh, A. K. & Gupta, A. S. (2000). Mental Health Battery. Ankur Psychological Agency. Lucknow.

Sinha, D. (1990). Concept of psychosocial well-being: Western and Indian Perspectives. NIMHANS Journal, 8, 1-11.

Tripathi, R.K., Sokhi, R.K., & Tripathi, D.N. (2006). Mental Health: The Indian Perception. Paper Presented at National Seminar on Psycho-Physiology of well-being, M.D. Unversity, Rohtak, 28th-29th March, 2006, Abstract, 42.

Vaughan, F. (2002). What is spiritual intelligence? Journal of Humanistic Psychology, 42 (2), 16-33.

West, W. (2004). Spiritual issues in therapy: Relating experience to practice. Palgrave Macmillan: Basingstoke.

WHO (2001). Mental health: New understanding, new hope, the world health report, 1211, Geneva, Switzerland, p. 30. http://www.emental-health.ca/.

WHO Expert Committee (1959). Mental Illness in the world feature series, 7 April.

Wigglesworth, C.S.G. (2002). Spiritual intelligence and why it matters. http://www.consciouspursuits.com/Articles/SIWhyItMatters.pdf. (Accessed on 16 December 2010). Publisher – Google Scholar.

Wolman, R. (2001). Thinking with your soul: Spiritual intelligence and why it matters. New York: Harmony. Retrieved January 25, 2010, from http://www.yosiamram.net/papers.

Zohar, D., & Marshall, I. (2000). SQ: Connecting with our spiritual intelligence. New York: Bloomsbury.

■■■

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

'कबीर के ज्ञानोपदे ा में कवित्व'

डॉ. गणे ा भांकर पाण्डेय
सहायक प्रध्यापक हिन्दी
दुर्गा महाविद्यायल रायपुर

कबीर की वाणी के तीन भाग किए जा सकते हैं– (1) रमैनी (2) साखी और (3) पद। इनका वर्ण्य–विषय प्रायः समाज ही है– ज्ञानोपदो ा कबीर की वाणी में सामान्यतः वेदान्त, प्रेम साधना, संसार, अनितयता माया की प्रबलता, ह्रदय की भाुद्धि की आव यकता, धर्म के बाह्माचारों का विरोध सामाजिक एकता का प्रतिपादन आदि की चर्चा की गई है।

डॉ. रामकुमार वर्मा ने कबीर की ग्रन्थ–रचना का विवेचन करते हुए उनके वर्ण्य–विषय को इस प्रकार स्पश्ट किया है–

''इन ग्रन्थों का वर्ण्य–विषय प्रायः एक ही है। वह है ज्ञानोपदे ा, कुछ परिवर्तन कर यही विषय प्रत्येक ग्रन्थ में प्रतिपादित किया गया है। विस्तार में उनके वण्र्य विषय ये है–''

योगाभ्यास, भक्त की दिन चर्या, सत्य वचन, विनय और प्रार्थना, आरती उतारने की रीति, नाम महिमा, सन्तों का वर्णन, सत्य रूप निरूपण, माया विशयक सिद्धन्त, गुरू महिमा, सत्संगति आदि ये सब विषय उपदे ाक की भाँति प्रतिपादित किए गए हैं अथवा धर्मदास के उपदे ा के रूप में परन्तु विषय वही है। घूम–फिर कर निर्गुण ई वर का निरूपण हो जाता है। अनेक सीलों पर सिद्धान्त और विचारों में अवर्तन भी हो जाता है।

कबीर की कविता की रसानुभूति का आनन्द पग–पग पर प्राप्त होता है। उपदे ात्मक सूक्तियाँ और योग सम्बन्धी कथनों को छोड़कर हमको कबीर का काव्य पूर्णतः रससिक्त दिखाई देता है। हमें उनकी कविता में यथास्थान भाान्त अद्‌भुत एवं श्रृंगार रसों की छटा परिव्याप्त दिखाई देती है। जहाँ कबीर अपने मानसिक विकारों से संघर्ष करते हैं, वहाँ हमें वीर रस की मनोहारी व्यंजना दिखाई देती है।

कबीर के काव्य में भक्ति–भावना की सफल अनुभूति हुई है। कबीर ने आत्मा–परमात्मा सदृ ा, अगोचर पदार्थो को प्रतीकों और उपरोक्त उपमानों के द्वारा गोचर रूप में प्रस्तुत किया है। आत्मा को प्रेयसी और परमात्मा को प्रियतम मानकर उन्होंने बड़ी ही सरस काव्यमयी सृष्टि की है। आत्मा को दुलहिन और परमात्मा (राम) को दूल्हा मानकर उन्होंने जिस सहज ढंग से उनके सम्बन्ध की अभिव्यक्ति की है वह देखते ही बनती है–

दुलहिनी गावहु मंगलचार।
आजु घर आए हो राजा राम भरतार।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

तन रत करि मैं मन रति करिहुँ पंच तत्व बरात।
रामदेव मोहि बयाइन आए, मैं जोवन मदमाती।

परमात्मा के वियोग में आत्मा विकल है। ''विरह कौं अंग'' के अन्तर्गत कबीर ने इस व्याकुलता का बड़ा ही मार्मिक वर्णन किया है। यथा–

नैनां अन्तर आव नैन झाँपि तोहि लेउँ।
ना मैं देखौं और कों ना तोहिं देखन देउँ।

कबीर ने आत्मा और परमात्मा को दात्पत्य प्रेम का आलम्बन बनाकर श्रंगार रस का निरूपण किया हैं। और श्रृंगार रस के उभय पक्षों–संयोग श्रृंगार और वियोग श्रृंगार की मार्मिक व्यंजना की है। कबीर के श्रृंगार रस वर्णन की वि ोषता यह है कि अध्यात्मपरक होते हुए भी नीरस नहीं हो पाया है। उदाहरणार्थ–

जाग पियारी अब का सोबै।
रैन गई दिन काहे को खोबे।
जाग देखि पिय सेज न तेरे।
तोहि छाँड़ि उठ गये सबेरे।।

स्वामी रामानन्द जी ने वैष्णव भक्ति के मार्ग को बहुत कुछ उदार बना दिया था। उन्होंने जाति–पाँति के बन्धनों को समाप्त कर भक्ति का द्वार सबके लिए खोल दिया था। कबीरदास ने स्वामी रामान्द जी के ि ाष्य रूप में राम–नाम की दीक्षा प्राप्त की और उसे अपने क्रान्तिकारी व्यक्तित्व के अनुकूल पाया। रामानन्द जी के धनुर्धर राम कबीर के निर्गुण ब्रम्हा बन गए। साथ ही रामानन्द जी द्वारा प्राप्त अद्वैतवाद का सामान्य ज्ञान ज्यौं का त्यों बना रहा। कबीर कहते हैं।

द ारथ सुत तिहूँ लोक बखाना।
राम नाम का मरम है आना।।

स्वामी रामानन्द जी के उपदे ों द्वारा कबीर को नि चय ही हिन्दू भाास्त्रों द्वारा प्रतिपादित ज्ञान मार्ग की अनेक बातें मालूम हो गई होगी। उपनिषद् की ब्रह्म विद्या तथा वेदान्तियों के ''कनक कुण्डल न्याय' आदि की चर्चा इसका प्रमाण है। यथा–

तथा– गहना एक कनक तें गहना, इन महँ भाव न दूजा।
कहन–सुनन को दुई करि थापे इक नमाज एक पूजा।।

रामानन्द जी के ि ाष्य के रूप में कबीरदास वैष्णव सम्प्रदाय मतावलम्बियों के निकट सम्पर्क में भी आए होंगे। वहीं उन्होंने उनके अहिंसा और माधुर्य भाव को ग्रहण किया। सूफियों में ब्रह्म को

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

सर्वव्यापी मा ाूक मानकर भावभिव्यक्ति की परम्परा थी। वैश्णवों का माधुर्य भाव इस भावात्मक रहस्यवाद की सर्वधा अनुकूल था। कबीर की वाणी में अनेक सिलों पर ब्रह्म को पति या स्वामी मानकर अन्योक्तियाँ लिखी गई हैं।

कबीर कविता में नपाद बिन्दू, इडा पिंगला, औंधा कुआँ आदि की चर्चा मिलती है। अतः यह स्पस्ट है कि साधनात्मक रहस्यवाद सम्बन्धी अनेक भाब्द कबीर ने हठयोगियों से ग्रहण किए थे।

कबीरदास मुसलमान माता—पिता द्वारा लालित—पालित थे। इस कारण वह मुसलमान फकीरों तथा हठयोगियों के सम्पर्क में खूब आए थे। फलतः कबीरदास का ब्रह्म ज्ञानियों के निरूपण का विषय न रहकर सूफियो के ढग की उपासना का विषय बन गया। इस प्रकार कबीर का ब्रह्म निर्गुण एवं सोपाधि दोनों ही रूपों में दिखाई देता है। क्योकि उपासना के क्षेत्र में ब्रह्म निगुर्ण नहीं बना रह सकता। सेवक सेवा—भाव में कृपा, क्षमा, सौन्दर्य आदि गुणों का आरोप हो ही जाता है।

—आचार्य पं. रामचन्द्र
भाुक्ल

सारां ा यह है कि कबीरदास ने रामानन्द जी से हिन्दू भाास्त्रों की बातें ग्रहण की, साधु—संन्यासियों से ज्ञान—मार्ग की अनेक बातें ग्रहण की और सूफियों के सम्पर्क द्वारा उन्होंने प्रेम तत्व ग्रहण किया। इस प्रकार अपनी सार ग्रहिणी प्रवृत्ति द्वारा कबीर ने विविध स्थलों से विविध बातें ग्रहण की। उनकी वाणी में इन विविध तत्वों की अभिव्यक्ति यथास्थान दिखाई देती है। अतः पं. रामचन्द्र भाुक्त का यह कथन कबीर के भाव—पक्ष को एकदम स्पष्ट कर देता है, कबीरदास के भारतीय ब्रह्म के साथ सूफियों के भावात्मक रहस्यवाद, हठयोगियों के साघनात्मक रहस्यवाद और वैष्णवों के अहिंसावाद तथा प्रतत्तिवाद का मेल करके अपना पंथ खड़ा किया। उनकी बाणि में ये सब अवयव स्पष्टतः लक्षित होते हैं।
विद्वानों ने कवि के लिए तीन गुण अनिवार्य माने हैं— प्रतिभा, ि ाक्षा, (ाास्त्र ज्ञान) और अभ्यास। कबीर में प्रखर प्रतिया तो नि ि चत रूप में थी, भाासत्र ज्ञान का उनमें अभाव था। उनके कथन 'मसि कागज छुओ नहिं, कलम गही नहिं हाथ' वाले कथन को यदि उनकी विनम्रता एवं भाालीनता का द्योतक माना जाए तब भी उनकी कविता में काव्योचित गुणों का अभाव तो है ही। उनके ज्ञान का स्त्रोत केवल सत्संग ही था।
अभ्यास की मात्रा कबीर में पर्याप्त रूप से पाई जाती है।

एक धर्म सुधारक के रूप में कबीर ने खण्डनात्मक पद्धति को अपनाया। उसके दो परिणाम

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

हुए– (1) उनकी वाणी एकदम भाुष्क एवं कर्क ा हो गई तथा (2) उनके काव्य में सुन्दर प्रतीकों का सहज सौन्दर्य आ गया। कहने की आव यकता नहीं है कि कबीर के प्रतीक और उलट बासियाँ हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि है।

कबीर की भक्तिपरक उक्तियाँ उत्यन्त अनुभूतिपरक एवं सरस है। उनकी यह सरसता उन स्थलों पर बहुत ही मार्मिक एवं प्रभाव ााली बन गई जहाँ वह संसार से नाता तोड़कर वि व चेतना का साक्षात्कार करते हुए अपनी व्यथा और अपने विरह का वर्णन करते हैं। ऐसे स्थलों पर हमें उनकी वाणी की अतिक्ति उनकी भाक्ति ााली आत्मा के भी द र्ान हो जाते हैं। उनकी अनुभूति की तीव्रता अद्विता अद्वितीय है। ऐसे स्थलों पर कबीर की उक्तियों के सम्मुख अन्य कवियों की उक्तियाँ हतप्रभ सी दिखाई देती हैं। हम भले ही मान लें कि कविता करना कबीर का लक्ष्य नहीं था परन्तु इतना तो नि चत हैं कि इन अनुभूतिपूर्ण और प्रभाव ााली उक्तियों के कारण ही समालोचना के क्षेत्र में यह लोकोक्ति चल पड़ी–''तत्व तत्व कबिरा कही।''

कबीर में प्रतिभा या बुद्धि थी, परन्तु ज्ञान का अभाव था। यही कारण है कि बौद्धिक क्षेत्र में सिद्धान्त प्रतिपादित एवं खण्डन–मण्डन के क्षेत्र में काव्य भाक्ति उनका साथ छोड़ती दिखाई देती हैं और उनकी वाणी नीरस–प्रतीत होने लगती है। परन्तु भक्ति और प्रेम के क्षेत्र में उनकी भावना मुखर हो उठती हैं और उसी अनुपात में उनकी कवित्व भाक्ति थी।

कबीर को जीवन और अगत का व्यापक अनुभव था और यह अनुभव उनके आत्मा का अभिन्न अंग बन गया था। फलतः उनकी वाणी में सूर्य की किरणों जैसा तेज और अन्धकार–भेदन की भाक्ति के द र्ान होते है। कबीर ने अक्षर ज्ञान में मण्डित पण्डित वर्ग को इस आत्म–वि वास के साथ ललकार कर रहा हैं तभी था कि ''तू कहता कागज की लेखी मैं, कहता आँखिन की देखी।''

कबीर के अनेक पद बहुत ही मार्मिक और मार्के के है। इनमें सूर मीरा आदि भक्त कवियों की तन्मयता एवं सरसता के द र्ान होते हैं। जहाँ कहीं भी कबीर अपने प्रियतम का ध्यान करके आत्म–विभोर होकर अपनी विरह–भावना को व्यक्त करते हैं, वहाँ राग तत्व अपनी चरम सीमा को स्प र्ा करता हुआ दिखाई देता है। यही कारण हैं कि अलंकार और पिंगल से ज्ञान भाून्य से अट–पटी भाषा लिखने वाले कबीर ह्रदय पर इतना गम्भीर प्रभाव डालने में समर्थ होते हैं। कबीर की कविता में उनकी आत्मा की पुकार है। साथ ही उनके पास देने के लिए एक महान सन्दे ा–

ऋतु वंसत जाचंक भया हरशि दिया द्रुमपात।
तते नव पल्लव भया दि या दूर नहिं जात।।

कबीर ने यद्यपि अति ायोक्तियाँ और अत्युक्तियाँ लिखने की दृश्टि से कल्पना की ऊँची उड़ान नहीं भरी हैं तथापि अलक्ष्य और अगोचर ब्रह्म के निरूपण में उन्होंने कल्पना का पर्याप्त सहारा

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

लिया है। कबीर द्वारा समायोजित मनोरम कल्पना का एक सुन्दर चित्र देखिए–

पिया ऊँची रे अटरिया तोरी देखन चली।
खिरकी पैति मेरी चितवन लागी, ऊपरी आप धोपरिया।

तथा–

सुनि सखि सुपनै की ऐसी, हरि आयो हम पास।
सोबत ही जगाइया, जागत भये उदास।।

कबीर व्याकरण और पिंगल की खराद पर भले ही खरे न उतरें, परन्तु जीवन के रहस्य को अकृत्रिम और निर्मल ढंग से व्यक्त करने तथा अप्रस्तुत को प्रस्तुत के सहारे गोचर बनाने की कला में तो कबीर को कोई जोड़ भाायद ही मिले। कबीर के काव्य की प्रेरणा सामाजिक है अथवा धार्मिक?कबीर न तो मत प्रचार के लिए ही कवि–कर्म में प्रवृत्ति हुए थे और साहित्य–संबर्धना के उद्दे य से ही उन्होंने भावाभिव्यक्ति की थी। उनका उद्दे य अपने ब्रह्म–विचार की वाणी को रूप प्रदान करना था–

तुम्ह जिलि जानौ गीत हैं, यह निज ब्रह्म विचार।
केवल कहि समझाइ, आतम साधन सार।।
(02)

कबीर का उद्दे य था विषय पीड़ित लोगों को भव सागर से पार जाने का रास्ता बताया–

चरन कमल चित लाइए, रामनाथ गुन गाइ।
कहै कबीर संसार नहीं भगति मुकति गति पाई।

इसके अतिरिक्त किसी अन्य उद्दे य से की जाने वाली कविता को वह व्यर्थ का कवि–कर्म समझते थे ओर उसमें व्यस्त कवियों को वह व्यर्थ ही मर जाने वाला मानते थे–''कवि ने कविता मूर्य।'' सारां ा यह है कि कबीर ने भारतवर्ष के जन–जीवन में नव–स्फूर्ति का संचार करने के उद्दे य से ही सरस्वती का आह्वान किया था। उनकी काव्य–रचना का उद्दे य बस इतना ही था, न कम न ज्यादा।

मध्य युग की राजनीतिक, धार्मिक तथा सामाजिक सभी परिस्थितियाँ अत्यन्त भाोचनीय थी। इन परिस्थितियों में सन्त मत का प्रवर्तन हुआ थ। डॉ. गोविन्द त्रिगुणायत के भाब्दों में, उन परिस्थितियों से त्रस्त और पथभ्रष्ट सामान्य जनता त्राण के लिए पुकार रही थी। इस पुकार को सुनकर हिन्दू और मुसलमान सन्त मिलकर एक ऐसा मार्ग ढूढ़ँने लगे जिससे किसी का विरोध न हो और जिसमें कोई दोष न हो तथा साथ ही सहज सरल स्वाभाविक और अकृत्रिम भी हो। उनके इस प्रसार के फलस्वरूप ही सन्त मत का प्रवर्तन हुआ था।

अन्य सन्तों की भाँति कबीर की दो वि ोशताएँ हमारे सामने आती हैं–

(1) यह स्वभाव से क्रान्तियम एवं बुद्धिवादी महात्मा थे

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

(2) वह पाखंडपूर्ण अन्ध–वि वास प्रधान रूढ़ियों के प्रबल विरोधी थे। उनका रूढ़ि विरोध थे। उनका रूढ़ि विरोध क्रान्ति की सीमा तक पहुँच गया था।

उन्होंने मुल्लाओं और पंडितों को रूढ़ियों का प्रवर्तन माना और दोनों को बहिश्कृत करने की आवाज उठाई–

पंडित मुल्ला जो लिख दिया।
छाँड़ि चले हा कुछ न लिया।

कबीर का रूढ़ि–विरोध प्रायः धर्म के क्षेत्र तक ही सीमित था, क्योंकि हिन्दू समाज की व्यवस्था धर्म–ग्रन्थों के अनुसार ही मान्य थी और मुसलमानी भाासन की प्रथा धर्म के द्वारा समर्थित राजनीति चला रही थी। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि कबीर का मुख्य प्रेरक भाव प्रचलित धर्म–व्यवस्था का विरोध का था।

अनेक इस प्रेरक भाग पर अन्य दृष्टि से भी विचार किया जा सकता है। कबीर ने ब्रह्म–विचार निरूपण के लिए कविता की थी। उन्होंने ''आप ही आप विचारिए, तब केता होइ अनन्दरे'' कहकर ब्रह्म विचार के स्पश्ट कर दिया है। कबीर के इस कथन से भी यही ध्वनि निकलती है कि दा िनक अनुभूति की अभिव्यक्ति के लिए ही कबीर ने अपनी वाणी को अभिव्यक्ति प्रदान की थी। दा िनक चिन्तन भक्ति की एक भूमिका विवरण कहा गया है। इस प्रकार दा िनक चिन्तन धर्म भावना का ही एक पक्ष है। अतएव यह सर्वथा स्पष्ट ही है कि काव्य की प्ररणा मुख्यतः धार्मिक ही थी।

जहाँ कवि की कल्पना ऊँची किन्तु स्पष्ट और सरल होती है अर्थात् उसमें कवि की स्वाभाविक भाक्ति ओत–प्रोत रहती है, जहाँ कवि का माधुर्य और लालित्य आस्वादन करने योग्य होता है। परम सिद्ध कवियों की भाँति कबीर अपने काव्य में इसी प्रकार की छटा दिखलाते हैं। जिसमें सहृदय पाठक और मनस्वी चिन्तक एक साथ रसमग्न हो जाते हैं–

लाली मेरे लाल की जित देखो तित लाल।
लाली देखने हौं गई, मैं भी ह्वै गई लाल।।

यही साखी उनके इसी प्रकार के कवित्व इसी प्रकार की माधुरी और इसी प्रकार की छटा में पाठक को डुबो देती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

(1) हिन्दी साहित्य का इतिहास – आचार्य राम चंद्र भाुक्ल
(2) हिन्दी साहित्य का आदिकाल – हजारी प्रसाद द्विवेदी

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

(3) आदिकालीन हिन्दी साहित्य सांस्कृतिक पीठिका – डॉ. राम मूर्ती त्रिपाठी
(4) कबीर – हजारी प्रसाद द्विवेदी
(5) कबीर का रहस्यवाद – डॉ. राम कुमार वर्मा
(6) कबीर – डॉ. महावीर अग्रवाल

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

RISK AND ITS MANAGEMENT

Prof. Anand Mishra
Asst. Prof. Durga College
Prof. Rama Kant Mishra
Principal, FOM, DIMAT

Introduction:

It is said “no risk no gain”. This means that if we want to earn, we must have to take risk also. The moment money passes from one hand to another, the risk starts. Hence, risk is inevitable and so risk management has become a prime concern for every business in this global competitive business world. Companies like Lehman Brothers, Enron, WorldCom, etc. have all burnt their fingers owing to faulty risk management practices. Risk management helps an organisation to achieve profitability targets and prevent loss. It also ensures effective reporting and compliances with laws and helps to avoid damage to the organisation's reputation and related consequences. Risk is nothing but an exposure of uncertainty of outcome, whether positive opportunity or negative threat of events and action involved therein. It refers to the uncertainty that surrounds the future events and outcomes. Uncertainty, however, is the lack of complete certainty. Risks always carry cost. The greater the risk, the greater will be cost. Cost of risk includes the components namely, expected losses, cost of loss control, cost of loss financing, cost of internal risk reduction, etc.

Types of Risks:

Risk may be categorised as under:

1. **Systematic Risk:** It refers to risk which is uncontrollable in nature. It effects the entire business environment. Interest rates, change in potential scenario, recession, change in government policy, etc. form systematic risk and affect the entire market. This type of risk is non- diversifiable.
2. **Unsystematic Risk:** It is known as diversifiable risk or specific risk. This risk affects an enterprise only and can well be managed.
3. **Financial Risk:** This risk is in the form of uncertainty relating to financial element of the business entirely. It may be in the shape of Liquidity Risk wherein there is mismatch between assets and liabilities. Owing to this mismatch, the problem of liquidity arises. Another form of financial risk is Credit Risk. “A sale is only a gift until it is paid for.” It is payment that creates profit and not sale. This risk arises owing to default in payment by the customers. The exposure to this risk is a common phenomenon for financial institutions providing loans subject to risk of defaulter by the borrower. Besides, there is another form of financial risk known as Currency Risk. This happens owing to the fluctuations in the exchange rates. There

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

is immediate impact of this risk on transactions. For example, an Indian firm has contracted to buy machinery worth $200,000. The exchange rate is presently Rs 60.50/$. Suppose it changes to Rs 61.50/$ at the time of payment, the firm will have to pay Rs. 200,000 extra unless exchange rate is contracted for.

4. **Market Risk:** It is also known as undiversifying risk. It is owing to day to day fluctuation in a stock's price. This risk cannot be avoided. It is mainly stocks and options. Thus this risk arises when the value of an investment will increase or decrease due to change in market factors.
5. **Business Risk:** It primarily refers to situation of uncertainty relating to operating cash flows of a business. It is of two types- external risk and internal risk. External business risk is due to the result of operating conditions which are imposed upon the firm by the circumstances beyond its control. On the other hand, internal business risk is related with the way the firm conducts its operations. The major business risks giving rise to variation in cash flows and business value are price risk, pure risk and credit risk.
6. **Purchasing Power Risk:** It is another type of risk which is due to impact of inflation and deflation in the economy on an investment. In this situation there is inflation or deflation in the economy on an investment. In this situation there is uncertainty of purchasing power of the amounts to be received.
7. **Operational Risk:** This type of risk is broadly associated to the company's organisation and management namely, planning, monitoring and reporting systems in the day-to-day management process. Important forms of operational risks are process risks, people risks, technology risks, etc.
8. **Interest Rate Risk:** This risk arises when the value of an investment changes owing to a change in interest rates. More precisely it is the exposure to adverse movement in interest rates.
9. **Disaster Risk:** These risks relate to disasters whether natural or man-made. Natural disaster includes fires, floods, earthquakes, etc. on the other hand man-made disasters arise owing to the accidents under the Factories Act, Mines Act, etc.
10. **Political Risk:** These risks are associated to political uncertainties which may include war risks, election risk, country risk, fiscal policy risks, monetary policy risks, etc. These are also beyond the control of a firm.

Besides, there are some other risks such as default risk, investment risk, inflation risk, systems risk, legal risk, etc.

Risk Management:

Risk management has its origins from the field of corporate insurance. It refers to identification of opportunities and avoiding or mitigating losses. It is a logical and systematic process of

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

establishing the context, identifying, analyzing, evaluating, monitoring and communicating risks associated with any activity, function or process in a way that helps an organisation to minimise losses and maximise opportunities.

Characteristics of Risk Management:

The main characteristics of risk management may be enumerated as below;

i. It is a systematic discipline for dealing with the problem of uncertainty.
ii. It provides a system of making choices.
iii. It shows the way for better understanding of potential liability.
iv. It is a guide for responding to undesirable events.

Objectives of Risk Management:

The main objectives of risk management may be given as under:

i. To give a structured framework for effective strategic planning.
ii. To help in maximizing opportunities and minimizing losses.
iii. To use resources in optimum manner
iv. To increase the level of accountability in the organisation.
v. To analyse and report identified risk events.
vi. To identify and evaluate risk.
vii. To improve organizational efficiency and effectiveness.
viii. To provide effective and systematic approach enabling the management to focus on areas of risk.
ix. To promote strategies and plans for risk management in a better way.
x. To provide a framework for ensuring that unavoidable risks are adequately insured.
xi. To develop greater openness in decision making and improve communication.

Hence, the objective of risk management is to reduce different risks related to a pre selected domain to the level accepted by the society. Effective risk management can bring far-reaching benefits to all organisations whether large, small or medium or public sector or private sector.

Significance of Risk Management:

Risk management is not just about preventing risks, but also managing it properly. For effective risk management it is necessary to develop risk management culture. The risk management culture supports the overall vision, mission and objectives of the organisation. Risk management today is no longer discretionary but essential for managing business organisations in this dynamic and competitive corporate world environment. All companies have express or implied objectives ultimately contributing to the maximization of shareholders

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

value. Risk management can be seen as a tool for creating opportunities for the business as they develop during the risk management process. It simply provides a framework to:-

a. help in ensuring that all the foreseeable risk involved are well understood and accepted before taking any important decision;

b. monitor new projects and ongoing operations and ensure satisfactory development without giving a chance to new risks to emerge.

Benefits of risk management:

The benefits of implementing risk management are as under:

1. **Flexibility and responsiveness to market fluctuations:** It helps in making the company more flexible and responsive to market fluctuations and enabling to satisfy consumers' ever-changing needs in a continually changing business environment.
2. **Enhances competitive power:** it also enhances competitive power of the organisations practising risk management. These companies can gain an early-mover advantage by adapting to new circumstances faster than their rivals.
3. **Better external perceptions of a company:** Companies adopting risk management can have better external perceptions and hence can manage risk in a better way.
4. **More awareness:** Risk management also enhances awareness as to changing markets, service delivery and morale.
5. **Improves credit rating:** it improves a company's credit rating and ability to raise finance in near future. It is because such a company can manage change easily at all levels.

Besides, saving of resources, public image and stability are other benefits of risk management.

Risk Management Process:

The process of risk management broadly consists of the following steps:

1. **Risk Identification:** Firstly, risks are identified and then they can be managed. As soon as the business is defined, the identification of risks associated there with must be done. This process should be quite systematic and comprehensive enough to ensure that no risk is excluded unwittingly. For the purpose, right methodology and right people should be involved.
2. **Risk Assessment:** Every organisation is continuously exposed to an endless number of new threats which affect its operation in fulfilling its objectives. The only way to understand and measure the impact of risks involved is identification, analysis and evaluation of these threats.
3. **Risk Measurement and Analysis:** The next step is the proper management and analysis of the risks associated with the business. Risk management will consider the probability or chance of the losses, the impact of the losses upon the financial affairs of the organisation and the ability

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

to predict the losses. On the other hand risk analysis helps in estimating the impact of different risks. The important elements of risk analysis include – i) intensive examination of the sources of risk; ii) identification of existing strategies; iii) determining the consequences of a negative impact or an opportunity; iv) estimation of level of risk; and v) consideration of any uncertainty in the estimates. Risk analysis techniques include qualitative, quantitative and semi-quantitative analysis.

4. **Risk Evaluation:** It implies ranking in terms of importance. It involves comparing the level of risk found during analysis process and deciding whether these risks require treatment. The result of risk evaluation is prioritized list of risks that requires further action.
5. **Risk Treatment:** It is mainly concerned with identifying options for controlling risk, in order to reduce or eliminate negative impact and reduce the likelihood of an adverse occurrence. It also aims at enhancing positive outcomes.
6. **Risk Monitoring and Review:** Risk monitoring and review is an essential step in the risk management process. This must be done periodically to ensure that changing situation do not affect the risk priorities. It must be done on a regular basis.

Strategies for Risk Mitigation:

Once risks are identified and assessed, the strategies to manage them can be any one or more of the following:

1. **Transfer Risk:** This is the normal practice to mitigate risk. As far as possible and practicable, the efforts should be taken to transfer risk from one area to another area where the agency involved is better equipped to take care of it.
2. **Tolerate Risk:** It is a strategy to retain the risk. It is accepting the loss when it occurs. These risks either cannot be insured or associated premiums would be infeasible. Hence, they are retained by default.
3. **Reduce Risk:** greater number of risk lie in this category. Effort should be made to reduce losses arising from risks as far as possible outsourcing is a good example of reduction if the outsourcer can show higher capability of managing risks.
4. **Avoid Risk:** Another strategy is to avoid the risk. This result in complete elimination of exposure to loss due to specific risk. It means no risky projects are undertaken.
5. **Combine Risk:** When more than one risk is there, it is better to combine risk. This is mainly suitable in the areas of financial risk. By taking a single portfolio instead of having different shares and debentures, the risk can be reduced.
6. **Sharing Risk:** Sharing risk by insuring them against a consideration is another form of strategy to mitigate risk. In this case the risk is shared by the insurer.

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

7. **Hedging Risk:** Exposure to funds to fluctuations in foreign exchange rates, prices, etc. brings about financial risks resulting in losses. Hedging helps in reducing the loss very well.

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

विडियो के लिए You Tube ही क्यो ?

Prof Monika Patel
Asst. Professor
Deptt. of Computer Science,
Durga Mahavidyalaya, Raipur(C.G.)
Mr. Akhilesh Patel

विडियो देखना हो या अपलोड करना ज्यादातर लोग **You Tube** तक ही सिमटे रहते है। जबकि ऐसे कई साइटस है, जहां अच्छी क्वालिटि के विडियो देखे और अपलोड किये जा सकते है। यहां तक कि इंटरनेट के लिए बनाये गए शोज भी देखे सकते है । उनमे से कुछ प्रमुख वेब साइटस है।

ऑनलाइन विडियो देखना अधिकतर लोगो को पसंद होता है। लेकिन ऑनलाइन कुछ भी देखना आसान नही होता इसका सबसे बड़ा कारण होता है सर्चिंग और बफरिंग । हम ज्यादातर विडियो देखने के लिये गूगल सर्च की मदद लेना चाहते है, लेकिन फ्री विडियो देखने के लिए कड़ी मेहनत करनी पड़ती है। साथ ही कई बार पसंद कि विडियो मिल भी नही पाती है । कई बार फ्री विडियो के साईड पर कुछ भी वेबसाइड खुल जाती है या फिर साईट मे देखने के लिए पैसे मांगे जाते है । इसलिए ज्यादातर लोग सिर्फ **You Tube** के भरोसे रहते है जबकि आज कल **You Tube** जैसे कई लोकप्रिय विडियो साईट है। आज हम आपको कुछ ऐसी साईट के बारे मे बताएंगे जहॉ आप न्यूज, फिल्म, गाने , कार्टून , विडियो और जो चाहे देख सकते है वो भी एकदम फ्री! इन साइट्स कि विडियो क्वालिटी जहा बहुत अच्छी है वही बफरिंग कि आम समस्या से भी छुटकारा मिलता है।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

Blip.tv

इस साईट को आप इंटरनेट का टीवी कह सकते है। इस साईट पर इंटरनेट के लिए बनाये गए शोज देखने को मिलते है। यदि आप इंटरनेट के लिए कोई मनोरंजक या सामाजिक शो बनाना चाहते है तो उसे यहां शेयर भी कर सकते है। यहां एक विडियो के साथ विडियो कि सीरीज भी शेयर कि जा सकती है । खास बात यह है कि यदि आापको विडियो के विज्ञापनो से होने वाली कमाई का 50 प्रतिशत यह वेबसाइट आपके साथ शेयर करेगी पर यहां हम सिंफ 1 जीबी तक के साइज का ही विडियो अपलोड कर सकते है।

blip

Type	Private
Founded	May 5, 2005
Headquarters	New York City, United States
Area served	Worldwide
Owner(s)	Bain Capital Ventures Canaan Partners Ambient Sound Investments[1]
Parent	Maker Studios
Website	blip.tv

Bigflix.com

Bigflix.com इंटरनेट कि वर्ल्ड मे विडियो मशहूर वेबसाईट है। यह एक पहली ऐसी वेबसाइट है। जहां आप आने वाले किसी भी Bollywood या Hollywood फिल्मो के ट्रेलर एकदम free मे देख सकते है। इतना ही नही पसंदीदा फिल्म कि टिकट कि एडवांस बुकिंग भी कर सकते है। बिगफलिक्स आपको एक अनोखा मौका भी देता है । जब आप अपने मनपसंद स्टार को रेटिंग भी दे सकते है । शौपिंग कि लिहाजा से भी यह साइट काफी अच्छी है।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

Oneindia.in

वन इंडिया भारत की पहली एकमात्र वेबसाइट है जो हिन्दी व अंग्रेजी के अलावा तमिल,मलायलम और कन्नड़ का विकल्प भी प्रदान करती है। साइट मे आप अपनी पसंद की लैग्वेज चुन सकते है ।और किसी भी विडियो का free मे लुत्फ उठा सकते है ।

oneindia™
India's #1 Language Portal

Dailymotion.com

यह वेबसाइट आपको दो तरह एकांउन्ट बनाने की अनुमति देती है। एक अकाउण्ट से आप 1 जीबी के साइज तक के विडियो आसानी से अपलोड कर सकते है। अगर आप अपना बनाया हुआ असली विडियो शेयर कर रहे है तो आप दुसरे एकांउट से लॉग इन करके उस विडियो को क्रिएटिव विडियो के प्लेट फार्म पर शेयर कर सकते है। जहां आसानी से दूसरे लोग आपके विडियो देख सकते है। खास बात यह है कि आप हाई डेफिनेशन पर अपनी विडियो शेयर कर सकते है ।आप चाहे तो दुसरे के असली विडियो भी देख सकते है। ये वेबसाइट अच्छे विडियो का खूब प्रचार करती है, जिससे वे आसानी से लोकप्रिय हो जाते है।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

Dailymotion

Type	Subsidiary
Foundation date	March 15, 2005
Headquarters	Paris, 140 boulevard Malesherbes, 17th arrondissement, France
Key people	Cédric Tournay, CEO Benjamin Bejbaum, Co-founder Olivier Poitrey, Co-Founder & CTO Martin Rogard, EVP Global Content Giuseppe de Martino, SVP & General Counsel
Owner	Orange
Employees	165 (November 2012)
Slogan(s)	*Regarder, publier, partager* (Watch, publish, share)
Website	dailymotion.com

Indianvedio.org

Indianvedio.org एक ऐसी वेबसाईट है, जिसकी चर्चा हाल ही में बहुत हो रही है । इस वेबसाइट में जाकर आप पर्यटन, संगीत, कृषि,ब्यूटी के कई विडियो तो देख ही सकते है । साथ ही आप इस वेबसाईट से ब्लैकबेरी , एप्पल **और** एंडाइड एप्लीके ान भी डाउनलोड कर सकते है । **Indianvedio.org** एक एसी वेबसाइड है जहॉ **Application film** के अलावा आप गेम भी डाउनलोड कर सकते है ।

References:
Websites:
1. www.blip.tv
2. www.dailymotion.com
3. www.google.co.in
4. www.indianvedio.org
5. www.oneindia.in

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

Echoes of Naturalism in Yann Martel's *Life of Pi*

Yogita Lonare
Deptt. of English
Durga Mahavidyalaya,Raipur(C.G.)
Yogita_lonare@yahoo.com

The objective of magic realism is to bring us fresh presentation of the everyday world we live in. Theorists may choose unusual point of view, mysterious juxtapositions or common objects presented in an uncanny ways. Magic realists view the world in universal, recognizable images rather than through introspection and self analysis. Everything we see or read in magic realism is within the realm of the possible; although sometimes unlikely the magic realism requires that the imagery be fresh and inventive.

In literature magic realism points to a reality that hovers on the edges of our own, a recognizable world, familiar in most details but operating under a different set of rules. The unsetting of realities because the readers examine their own expectations and principles regarding the world that they inhabit. In the hands of the inept magic realism descends into the merely fantastical. But in the hands of a master artist or storyteller, a work imbued with elements of magic realism hovers on the borders of our conscious mind and impacts the way we see the world. It has been widely considered a literary and visual art genre; creative fields that exhibit less significant signs of magic realism include film and reality. Magic realism writers depict the ordinary as miraculous and the miraculous as ordinary. Gabriel Garcia Marquez is considered the greatest living exponent of magic realism and earned Nobel Prize in literature.

Canadian writer Yann Martel's *Life of Pi* is set against the tumultuous period of Indian history known as Emergency. In 1975, Prime Minister Indira Gandhi was found guilty of charges related to her 1971 election campaign and was ordered to resign. The Emergency lasted for 18 months. In *Life of Pi*, Piscine Molitor Patel's father, a zookeeper in Pondicherry, India grows nervous about the current political situations, Pi's father decides to sell off his zoo animals and move his family to Canada, thus setting the main action of the novel into motion

Yann Martel's *Life of Pi* tells the story of an Indian boy named Pi Patel who is ship- wrecked in Pacific and survives 227 days at sea. One can believe in the following scenario in *Life of Pi*. A sixteen years old boy has been cast overboard from a sinking ship. The ship had a cargo of zoo animals and the boy finds himself in a lifeboat with a hyena, a zebra, an orangutan and a Bengal tiger under a tarpaulin. The orangutan is looking distinctly seasick; the boy tries to catch a flying fish.

Martel's *Life of Pi* uses meticulously researched details about zoological abolition such as the eating and sleeping habits of sloths and tigers to lull readers into believing that the world Pi inhabits is rational. Pi's survival for 227 days in a boat on the Pacific stretches credulity, but Martel is so detailed about the ordinariness of this ordeal that our belief is suspended. Magic realism depicts a world of people whose reality is different from ours. It endeavors to show us the world through others' eyes. It merges the realism of fantastic and reality. It is different from pure reality because it is set in the authentic world with actual description and human beings and society. It asks one believe the possibility of existence of supernatural element in our life.

{ Magic realism is a literary style or genre originated in Latin America that combines fantastic or dreamlike elements with reality. (Alberto Rios, *Magic Realism: Definition*, 1999) }

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

. After the tragic sinking of a cargo ship, one, solitary lifeboat remain bobbling on the wind blue Pacific. The crew of the survival vessel consists a hyena, a zebra (with a broken leg), a female orangutan, a 450 pound Royal Bengal tiger and Pi, a 16 years old Indian boy. The scene is set for one of the most extraordinary pieces of literary fiction of recent years.

Marvell puzzles his readers with his prose and challenges them to believe his story. He makes us surprised of the power of imagination. Whenever he goes we can expect the unexpected. In this regard in a review in India Today, Geeta Doctor says:

Just when you thought the age of enchantment is over… Yaan Matel Has conjured up a marvelous tale. (Life of Pi, Penguine bookindia.com)

Life of Pi is a delicious treat. It leaves you with a better understanding of animals, including man and much to powder and question. It is an extraordinary book that actually has something to say about life.

Pi's interpretation of the tale is exactly like the realistic seeming version, only more interesting and has symbolism in the characters. He didn't want his adventure to seem as a "dry and yeast less" (302) as the reporters expected because his experience was far from that. It was full of emotion and changing experiences. Pi needed to tell the story with Richard Parker, not only because it was the truth, but also that tiger kept him alive and taught him many things.

Martel uses magic realism so well that you trust him while he gives vivid details of the "dense mass vegetation, as sparkling green as the leaves" (P 257) "delicious….sweet" and "sugary" (P 259) algae that he thrived on for weeks. But as everything in life, if it's too good to be true, it isn't. He realized "the island was carnivorous" (281) and fled the next day, realizing he'd disintegrate if he stayed out after dark. This entire idea of man eating island sounds completely false but Martel illustrate it in such way that we were much more likely to conceive it to be true. This is the direct effect of magical realism.

Martel uses the technique of magic realism to describe the carnivorous island that Pi lands on. The description is considered magical realism because if it were not for the "carnivorous" trees and other odd characteristics the island would be practical. Also with the island being in the middle of the ocean, it is more believable. Magic realism is an effective tool for conveying Pi's experience because it adds magic to the story that readers can believe since it is tied with realistic characteristics. None of Pi's experiences are very practical, but using these element help make it believable.

Why do people move ? What makes them uproot ad leave everything they've known for a great unknown beyond the horizon ? Why climb this Mount Everest of formalities that makes you feel like a beggar ? Why enter this jungle of foreignness where everything is new, strange and difficult ? (77)

At first, the investigators did not believe Pi's story of his journey at sea. They said that there was no way possible that he was amongst those animals, especially Bengal Tiger, through that majority of his journey, "Now about the tiger, were not sure about it either" (P 372)

Pi had a great relationship with Richard Parker during his journey and showed him a great deal of respect. That is why, in his alternate story, Pi symbolized Richard Parker as himself.

Through the use of magic realism Yann Martel is able to produce a vivid and interesting story. Martel uses this technique mainly when describing Pi's stay on the island. It is first described as a heavenly island with pools of fresh water, abundance of sweet algae for food and loads of innocent meerkats for Richard. As Pi's stay progresses he grows suspicious of the island and "horror came slowly" as he discovered that island is carnivorous. After being at sea for so long, the reader and Pi somewhat lose a sense of reality.

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

They may (disbelieve (their) eyes" at first but by placing it in the middle of the uncertain ocean. Also by reasoning the occurrences on the island (algae = acid = dead fish= set of truth) you want to believe the events as true because it makes the story more interesting. By embedding some magical elements into the realistic fiction, the reader, while reading believes them to be and because the magic grips them.

Works Cited

Penguin books India
<http:www.penguinbookindia.com/category/Fiction/Life_Of_Pi_9780143028482.aspx>
Rios,Alberto.Magic Realism: Definitions
<http://www.public.asu.edu.com>

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

Technology Shift Paradigm

Vallari Chandrakar
Department of Computer Science
Durga Mahavidyalay, Raipur

Whenever the new technologies have to be introducing that time so many things are done for resisting that. But after so many threads technologies are launched and have their successful career and Boom the world. Technologies are always useful for us and it always takes the world in the new height of future facilities. Many times ago so many legend persons said some stupid things about huge technologies. These paradigms are:

1) President and Founder of Digital Corporation In 1977
"There is no reason for any individual to have a computer in their home."

But:

In today era everywhere like railway station, airport, hospitals, organizations, institutes etc computer is the main thing to do the every work in our pocket also. This machine which is known as computer which reduces the man work stresses, and it perform their work in more efficient, effective and accurate manner. Before 15 years so many thinks that "why we need computer?" Against it we can engage a person in just for 500 Rs. For any work, but the present scenario is that a computer is good to perform as compare to 100 persons. And the use of computer is so chipper than the human.

2) French military strategies and future world war commander in 1911
"Airplanes are interesting toys but of not military value."

But:

When Wright brothers invent hot air balloon that time these paradigm is said. But now we can say that it is exactly 180 degree change in the technology right now we use aeroplane for our personal use even also it is used for military purpose. In medical use today for long shift or journey for patients airplane is used as air ambulance. So we can say airplane is not a simple toy but it is a useful and beneficial invent of a new technology. In airplane technology the biggest invention is rocket, by using these man can go to the moon and even also to the other planets.

3) Inventor of Audion tube and father of radio- Dr. Lee de Forest in 1957
"Man will never reach the moon regardless of all feature scientific advances."

But:

Many times ago it is said that after using all the technology of science man can never reach to the moon but after the invention of radio, by using its technology i.e. satellite is launched and it is now

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

used for many purpose like communication, medical science, military. Satellite is now launched to the orbit of earth and it gives much information like weather broadcasting, television broadcasting etc. By knowing this information many of nature disasters can be handle in sufficient manner that means people are aware previously and get protection by that and save their lives.

4) 20th century fox movies head Darryl F Zanuck in 1946
"Television won't be able to hold on to any market it captures after the first 6th months people will get soon get tired of staring at a plywood box every night."

But:

Sometimes television is said an Idiot Box. But now television is used as source of information by that we can entertain, gather more knowledge. By this we can connect to the whole world information and even we can know about business strategies which are presently known as sensex there up-downs, predict about their own business strategy etc.

5) The dump network paradigm David Isenberg's concussive essay
"The rise of the stupid network."

But:

Today's the biggest resolution in the field of computer science in Internet. Now these days every human being uses it and gets benefits in their field. Internet is simply defined as the network in which all the information and the knowledge about any field can be searched. If we see to the medical science then there it is also used for example in any operation there is no compulsion to have physically presence of that particular doctor he can use video conferencing technology and assist his juniors.
By use of internet the search engine which is known as Google search is invented and now this is the biggest resolution of this field that means by using this everything about any field we can search and use that knowledge.

Evolution

When we learn to survive that time the richest persons whom are having huge amount of land that means landlords. After some time, time has changed and that time the industrialists became rich they used to give job and earn money by the production or by productivity.

But now the current scenario is that the person who has information is the richest man in the world like Bill Gates (Chairman of Microsoft), Azim Premji (Chairman of Wipro). According to that we can say that Information Technology is in height of the world.

Information Technology is also used to develop a strong economy system for example: In previous time everything is done in to the paper and all the official work is done only in the particular time, but now after the use of Information Technology everything can be done through the computer and it facilitate us to do the things at anywhere and at anytime i.e. known as E-commerce. Due to use of E-

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

commerce now VAT(value added tax) is directly deposited to the government account and by use of this money many of development can be done in sufficient manner. Previously Tax will paid by the persons but not all the money will reach to the government due to this our economy is so week.

Sometimes it is said that the development which is not done in the 300 years is now done in 30 years and the development which is not done in the 30 years is now done in the 5 years and all this things are possible only by the help of Information Technology.

Reference

www.google.com

■■■

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

"CLOUD COMPUTING"

Vikas Vaishnav
Asst. Professor.Deptt of Computer Science,
Durga Mahavidayalaya, Raipur (C.G.)

Abstract:

Cloud computing is basically an Internet-based network made up of large numbers of servers – mostly based on open standards, modular and inexpensive. Clouds contain vast amounts of information and provide a variety of services to large numbers of people. The benefits of cloud computing are Reduced Data leakage, Decrease evidence acquisition time, they eliminate or reduce service downtime, they Forensic readiness, they Decrease evidence transfer time .The Main Factor to be discussed is security of cloud computing, which is a risk factor involved in major computing fields.

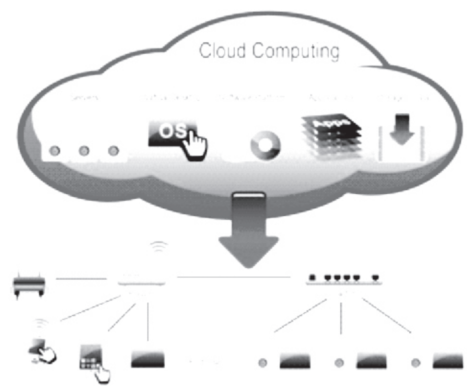

Introduction:

Cloud computing is the delivery of computing services over the Internet. Cloud services allow individuals and businesses to use software and hardware that are

managed by third parties at remote locations. Examples of cloud services include online file storage, social networking sites, webmail, and online business applications. The cloud computing model allows access to information and computer resources from anywhere that a network connection is available. Cloud computing provides a shared pool of resources, including data storage space, networks, computer processing power, and specialized corporate and user applications.

Characteristics:

The characteristics of cloud computing include on-demand self service, broad network access, resource pooling, rapid elasticity and measured service. On-demand self service means that customers (usually organizations) can request and manage their own computing resources. Broad network access allows services to be offered over the Internet or private networks. Pooled resources means that customers draw from a pool of computing resources, usually in remote data centres. Services can be scaled larger or smaller; and use of a service is measured and customers are billed accordingly.

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

Service models:

The cloud computing service models are Software as a Service (SaaS), Platform as a Service (PaaS) and Infrastructure as a Service (IaaS).

In a Software as a Service model, a pre-made application, along with any required software, operating system, hardware, and network are provided. In PaaS, an operating system, hardware, and network are provided, and the customer installs or develops its own software and applications. The IaaS model provides just the hardware and network; the customer installs or develops its own operating systems, software and applications.

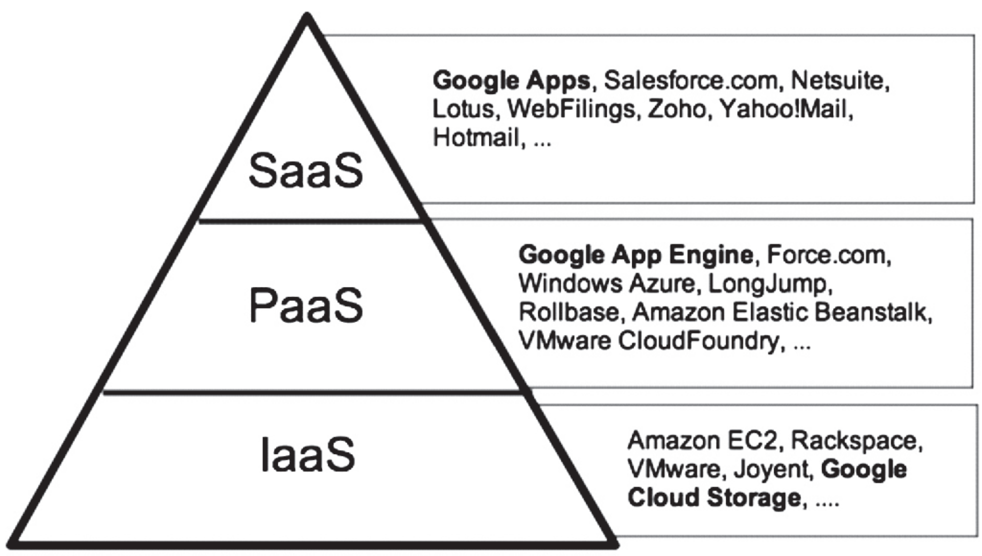

Types By Visibility:

Cloud services are typically made available via a private cloud, community cloud, public cloud or hybrid cloud.

In a private cloud, the cloud infrastructure is operated solely for a specific organization, and is managed by the organization or a third party.

In a community cloud, the service is shared by several organizations and made available only to those groups. The infrastructure may be owned and operated by the organizations or by a cloud service provider.

A hybrid cloud is a combination of different methods of resource pooling (for example, combining public and community clouds).

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

Why cloud services are popular

Cloud services are popular because they can reduce the cost and complexity of owning and operating computers and networks. Since cloud users do not have to invest in information technology infrastructure, purchase hardware, or buy software licences, the benefits are low up-front costs, rapid

return on investment, rapid deployment, customization, flexible use, and solutions that can make use of new innovations. In addition, cloud providers that have specialized in a particular area (such as e-mail) can bring advanced services that a single company might not be able to afford or develop.

Some other benefits to users include scalability, reliability, and efficiency. Scalability means that cloud computing offers unlimited processing and storage capacity. The cloud is reliable in that it enables access to applications and documents anywhere in the world via the Internet. Cloud computing is often considered efficient because it allows organizations to free up resources to focus on innovation and product development.

Another potential benefit is that personal information may be better protected in the cloud. Specifically, cloud computing may improve efforts to build privacy protection into technology from the start and the use of better security mechanisms. Cloud computing will enable more flexible IT acquisition and improvements, which may permit adjustments to procedures based on the sensitivity of the data. Widespread use of the cloud may also encourage open standards for cloud computing that will establish baseline data security features common across different services and providers. Cloud computing may also allow for better audit trails. In addition, information in the cloud is not as easily lost (for example when compared to the paper documents or hard drives).

Conclusion:

Cloud computing offers benefits for organizations and individuals. There are also privacy and security concerns. If you are considering a cloud service, you should think about how your personal information, and that of your customers, can best be protected. Carefully review the terms of service or contracts, and challenge the provider to meet your needs.

References:

Websites:

1. www.scribd.com
2. www.priv.gc.ca

■■■

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

गिरता रूपया, चढ़ता डालर

डॉ. पी.सी. अग्रवाल, प्राचार्य,
शासकीय संस्कृत महाविद्यालय रायपुर (छ.ग.)
डॉ. **श्रीमती मधु अग्रवाल**–सहायक प्राध्यापक
दुर्गा महाविद्यालय रायपुर (छ.ग.)

भारत में मई 2013 के पश्चात् रूपये के बाह्य मूल्य में लगातार हो रही गिरावट के चलते अर्थव्यवस्था संकट में आ गई है। रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया ने एड़ी–चोटी का जोर लगाया, फिर भी रूपया का गिरता हुआ विनिमय–मूल्य नहीं थमा और गिरता ही जा रहा है। इन महिनों में डॉलर की तुलना में रूपए का मूल्य जिस तरह से दिन प्रतिदिन लगातार गिरा है, इससे लगभग 23 से 25 प्रतिशत की गिरावट इसके मूल्य में इन चार–पॉच महीनों में आई है, लेकिन ऐसा सिर्फ भारत में ही नहीं हो रहा है। ब्राजील, इंडोनेशिया, रूस, तुर्की और दक्षिण अफ्रीका जैसे उभरते बाजारों में भी मुद्रा का मूल्य अनिश्चितता के दौर में है।

मई 2013 को भारतीय मुद्रा बाजार में डॉलर का मूल्य 54.73 रूपए था, जो 2013 अगस्त के अंतिम सप्ताह में 68.80 रूपए प्रति डॉलर तक जा पहुॅचा था, बाद में कुछ सुधार के कारण अगस्त, 2013 के अंत में यह 65.70 रूपए प्रति डॉलर हो गया था। चालू खाते के घाटे में भारी वृद्धि के साथ–साथ अन्य अनेक कारणों से रूपए के बाह्य मूल्य में गिरावट आयी। गिरावट के निम्न लिखित कारण रहे हैं –

1. रूपये में गिरावट का एक प्रमुख कारण स्वर्ण का आयात है। स्वर्ण आयात घटाने के लिये सोने पर एक्सपोर्ट ड्यूटी बढ़ाई गई, इससे सोना महंगा हो गया। भारतीयों का सोने के प्रति लगाव के कारण आयात कम नहीं हुआ, बल्कि बढ़ गया। स्वर्ण आयात बढ़ने से भुगतान के लिए डॉलर की मॉग बढ़ती जा रही है।

2. रूपए में गिरावट मई 2013 में शुरू हुई थी, उस समय अमेरिकी फेड रिजर्व ने कहा था कि जल्द ही बॉन्ड खरीदी योजना में कटौती करेंगे। इससे विदेशी निवेशकों ने भारत सहित सभी उभरती अर्थव्यवस्थाओं से डॉलर निकालना शुरू कर दिया। इससे डॉलर की मॉग बढ़ गई। इससे रूपए की हालत और बिगड़ी। इसके बाद ही मुद्रा बाजार में अनिश्चितता का दौर शुरू हुआ। सरकार और रिजर्व बैंक के मौद्रिक उपाय भी असरदार सिद्ध नहीं हुए।

3. निर्यात कम और आयात ज्यादा होने के कारण भारत का भुगतान संतुलन संदैव प्रतिकूल बना रहता है। भुगतान हेतु डॉलर की मॉग बने रहती हैं। इससे डॉलर का मूल्य बढ़ता है। भारत का आयात बढ़ते जा रहा हैं और

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

निर्यात घटते जा रहा है। चीन द्वारा डम्पिंग (लागत से भी कम मूल्य पर आपूर्ति कर बाजार पर कब्जा करना) नीति अपनाकर भारतीय उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पैदा किया गया, जिससे भारतीय उत्पादकता सूचकांक गिर रहा है। चालू खाते का घाटा 4.8 प्रतिशत है जो चिंता का विषय है।

4. खाद्य सुरक्षा बिल के क्रियान्वयन के लिये वार्षिक 1.80 लाख करोड़ रूपए चाहिए। इससे राजकोषीय घाटा और बढ़ने की आशंका व्यक्त की गयी। इस आशंका से रूपया प्रभावित हुआ, और मूल्य में गिरावट आयी।

5. भारत अपनी वार्षिक आवश्यकता का लगभग 30 प्रतिशत पेट्रोलियम पदार्थ ही अपने दम पर प्राप्त कर पाता है, शेष 70 प्रतिशत पेट्रोलियम पदार्थ उसे आयात करना पड़ता है। आयात किये गये पेट्रोलियम के भुगतान के लिये निर्यातक देश सर्वमान्य मुद्रा डॉलर में भुगतान मांगते हैं, इससे भी डॉलर की मॉग बढ़ने से रूपये की वेल्यू गिरती है।

6. डॉलर की बड़ी मात्रा भारत के द्वारा विदेशी कर्ज एवं ब्याज का भुगतान करने में चुकायी जाती है। 2011–12 में 31.5 अरब डॉलर मूलधन एवं ब्याज के रूप में पटाए गए। इससे भी डॉलर का मूल्य बढ़ता है और रूपए का गिरता है।

7. विदेशी ऋण लेने के कारण डॉलर की मॉग बढ़ने लगती है। मॉग बढ़ने की बजह से डॉलर की कीमत बढ़ रही है, इसके विपरीत घाटे का बजट लगातार बनते रहने से और नोट–निर्गमन के कारण रूपये की कीमत घट रही है।

8. विदेशी निवेशक भारतीय शेयर बाजार में व्यक्तिगत और संस्थागत रूप से निवेश करते हैं। ऐसा निवेश सट्टेबाजी को बढ़ाता है, और ऐसा निवेश अल्पकालिक व खतरनाक होता है। विदेशी निवेशक कभी – कभी अचानक शेयर बाजार से निवेश हटाकर भारतीय बाजार में दहशत का वातावरण बना देते हैं। इससे भी रूपया गिरता है।

9. पिछले कुछ समय से अमेरिकी अर्थव्यवस्था में आया क्रमशः सुधार व विकास ने भी डॉलर की वेल्यू को मजबूती प्रदान की हैं।

10. वर्ष 1991 में LPG (उदारीकरण, निजीकरण, वैश्वीकरण) अपनाने के बाद 2008–09 से प्रगति (विकास) का पहिया तुलनात्मक रूप से धीमा होने लगा, जो 2010–11 के बाद असर दिखाने लगा और 2011–12 और 2012–13 में देश की विकास दर हर क्षेत्र में गिर गई। सत्रह–अठारह वर्षो की यात्रा के बाद भारत की विकास यात्रा में परिपक्वता और समझदारी के तत्व दिखाई देने के

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

स्थान पर गिरावट सामने आयी। इस घटक ने भी अपना असर दिखाया और रूपये की वेल्यू गिरी।

11. भारत प्रतिवर्ष मशीनरी युध्द सामग्री, टेक्नोलॉजी और पूँजीगत सामान, भी बड़ी यात्रा में दूसरे देशों से क्रय करता है, जिसके कारण आयात–बिल तेजी से बढ़ रहा है। चुकारे (भुगतान) हेतु डॉलर की मॉग बनी रहती है बल्कि कई बार बढ़ जाती है।

12. विदेश–यात्रा के लिये युवा छात्रों द्वारा विदेश में उच्च–शिक्षा प्राप्त करने के लिये विदेशी मुद्रा की मॉग (विशेषकर डॉलर की मॉग) बने रहने से भी रूपये में गिरावट दर्ज की गई।

डॉलर के मुकाबले रूपये का लगातार कमजोर होना भारतीय अर्थव्यवस्था के भविष्य को संकट में डाल सकता है। सारी एशियाई मुद्राओं में भारतीय रूपया ही सबसे ज्यादा कमजोर हुआ है।

आर्थिक सुधारों में कमी, महत्वपूर्ण कानूनों का न बन पाना, भ्रष्टाचार के मुद्दों का बार–बार सामने आना, महंगाई, महंगे कर्ज, सरकार में प्रबल इच्छा शक्ति की कमी आदि कारणों से भारत का विकास एवं स्पर्धा क्षमता गिर गई है।

इस संकट का वास्तविक निदान तो यह है कि हमारे देश में निवेशकों के लिए आकर्षक अर्थव्यवस्था एवं हालात बनाने होंगे। सभी सम्बन्धित पक्षों का विश्वास अर्जित करना होगा।

<u>इसके लिए कुछ महत्वपूर्ण कदम उठाने की आवश्यकता है:–</u>

1. चालू खाते के घाटे को कम करने का सार्थक एवं परिणाम दायक प्रयास करना होगा। प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने आशा व्यक्त की है कि व्यापार के चालू खाते के घाटे को जी.डी.पी. के 4.8% से घटाकर 2.5% तक लाने में हम सफल होंगे।

2. हमें प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की बाधाओं को कम करना होगा, हमें सेवा क्षेत्र की विकास दर को बनाए रखते हुए निर्माण एवं उत्पादन क्षेत्र की स्पर्द्धा बढ़ाने पर जोर देना होगा। विभिन्न क्षेत्रों में विदेशी निवेश की ऊपरी सीमा हटाकर ही हम पर्याप्त निवेश आमंत्रित कर सकते हैं।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

3. देश की जनता को देशहित को ध्यान में रखकर सोने के प्रति मोह कम करना होगा। केन्द्रीय वित्त मंत्री ने भी देश की जनता से अपेक्षा करते हुए कहा कि '' देश के लिए लोगों से मेरी एक ही अपेक्षा है, कि सोना नहीं खरीदे। '' एक जानकारी के अनुसार इस वर्ष भारत में 20,000 टन से ज्यादा सोना इकट्ठा हो गया है। अर्थशास्त्री हमारे इस अनुत्पादक सोने का उत्पादक निवेश में इस्तेमाल चाहते हैं। गोल्ड लोन, बांड और गोल्ड डिपॉजिट स्कीम ये सब इसी दिशा में उठाए गए कदम हैं। सरकार ने सोने, चांदी व प्लेटिनम के आयात पर आयात शुल्क को बढ़ाकर 10% कर दिया । सरकार की जनभावनाओं को बिना आघात पहुंचाए इसी दिशा में और अधिक कारगर उपाय उठाने होंगे, ताकि हमें स्वर्ण आयात के लिये डॉलर न देना पड़े, जिससे रूपये की वैल्यू ना गिरे।

4. भारत में बुनियादी क्षेत्रों में विकास की गति बेहद धीमी है। बुनियादी क्षेत्रों में से कई क्षेत्र या तो घोटाले के शिकार हुए हैं, जैसे कोयला और इस्पात और कई गलत सरकारी नीतियों से प्रभावित हुएं है, जैसे बिजली और रासायनिक खाद। आर्थिक विकास प्रकिया को पटरी पर लाने के लिए भारत को बुनियादी क्षेत्रों और सरकारी नीतियों में व्यापक सुधार करने होंगे, व्यावसायिक गतिविधियों में आ रही रूकावटों को दूर करना भी बेहद जरूरी है।

5. देश की आवश्यकता का 70% पेट्रोलियम आयात होने से डॉलर की माँग बढ़ने पर डॉलर का मूल्य बढ़ता है अतः एक ओर पेट्रोलियम पदार्थों के मितव्यियतापूर्ण उपयोग पर सार्थक पहल करनी होगी, तो दूसरी ओर उर्जा के अन्य वैकल्पिक स्त्रोतों का विकास करना होगा।

6. व्यापार एवं उद्योग के माहौल को सुधारना होगा एवं निवेशकों को प्रोत्साहित करना होगा। सरकार को सभी स्तरों पर कारोबार के रास्ते में आने वाली बाधाओं को दूर करना चाहिए। इसके लिए प्रकियाओं को इस तरह परिभाषित करना होगा ताकि लालफीताशाही और प्रशासनिक नियंत्रण कम हो।

7. औद्योगिक उत्पादन विगत दो वर्षों से बहुत गिर गया है, अतः अर्थव्यवस्था में एवं इन्फास्ट्रक्चर में कुछ ऐसे ठोस कदम उठाए जाएँ जिससे औद्योगिक उत्पादन बढ़े, जिससे आयात कम हो, और निर्यात ज्यादा हो। आयात कम होने से भुगतान संतुलन अनुकूल स्थिति को प्राप्त कर सकता है।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

8. भ्रष्टाचार पर लगाम लगानी होगी, और कानून को कड़ाई से लागू करना होगा।

9. टैक्नोलॉजी का विकास करके भारत में ही युद्ध से संबंधित सामग्री, वाहन, जहाज, तोप आदि यदि भारत में ही बनाये जाएँ, तो करोड़ों–अरबों डॉलर का भुगतान बंद जायेगा, जिससे रूपये की स्थिति में सुधार आयेगा।

■■■

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

STRESS RESILIENCE DURING OLD AGE AS THE FUNCTION OF NEED LEVEL AND SPIRITUAL INTELLIGENCE

DR. AJAWANI J.C.
HOD, Psychology
Arts and Commerce Girls' College,
Devendra Nagar, Raipur (C.G.)

ABSTRACT

Stress has been defined as events that place strong demands on us. These demanding or threatening situations are stressors which endanger our well-being and require us to adapt in some manner. A way of coping, along with others, is nurturance of certain characteristics and potentialities that might make a person stress resilient.

Recently the concepts of need level and spiritual intelligence have attracted attention of psychologists to enhance resiliency in people.

It was expected that male olds with high growth need level and with high spiritual intelligence would excel their counter parts in respect of their stress resiliency.

A final random sample of 400 olds, equally drawn from 8 sub-groups formed on the basis of 2 levels of need level (high growth needs and high deficiency needs), 2 levels of spiritual intelligence (high and low), and 2 gender groups i.e., males and females, were studied for their stress resilience.

The findings confirmed the research hypothesis pertaining to independent roles of need level, spiritual intelligence and gender in stress resilience of olds. However, none of the interaction effects are found significant.

KEYWORDS: Stress Resilience, Need Level, Spiritual Intelligence, Gender Difference

INTRODUCTION

The term stress appears regularly in our everyday discourse. It is also a leading topic of study in psychology.

Psychologists have viewed stress in three different ways : as a stimulus, as a response, and as an ongoing interaction between an organism and its environment.

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

form of coping with stresses includes the nurturance of certain characteristics and potentialities that might make a person stress-resilient. There are some factors in the lives of stress-resilient people, who rise far above what their stressful environments would predict for them. After reviewing many studies of unusually resilient children and adolescents, Masten (2001) concluded that such children are a monument to the ordinary adaptive processes that in the lives of most children, factors she termed "ordinary magic". Masten & Coatsworth (1998) found that these children had certain characteristics that contributed a positive outcome even in the face of stressful life events. These characteristics include adequate intellectual functioning, social skills, self-efficacy, and faith (optimism and hope), as well as environmental factors such as a relationship with at least one caring, prosocial adult (Masten & Coatsworth, 1998).

Recently the concepts of need level and spiritual intelligence have attracted attention of psychologists to enhance resiliency in people.

STATEMENT OF PROBLEM

The research aims at revealing the relationship of need level and spiritual intelligence with stress resilience at one hand and impact of intervention programme on stress resilience at the other hand.

For the purpose, the specific problems and relevant hypotheses are as below:

Problem 1

The first problem of the proposed research (Study I) pertains to role of need level in stress resilience. More specifically, the problem is whether people with high growth needs differ from those with high deficiency needs in regard to their stress resilience?

Hypothesis (i)

It is hypothesized that people with high growth needs would be more stress resilient than those with high deficiency needs.

Problem 2

The second problem of the research pertains to role of spiritual intelligence in stress resilience. More specifically, the problem is whether people with high and low spiritual intelligence differ in respect of their stress resilience?

Hypothesis (ii)

It is expected that people with high spiritual intelligence would be better stress resilient than those with low spiritual intelligence.

Problem 3

The third problem of the research pertains to role of gender in stress resilience?

Hypothesis (ii)

It is hypothesized that males would show higher stress resilience than females.

Problem 4

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

The last problem pertains to interaction effects of the three independent variables i.e., need level, spiritual intelligence, and gender, considered in the present research on stress resilience?

Hypothesis (iv)

It is expected that there would exist true joint effect of the three independent variables i.e., need level, spiritual intelligence, and gender, at first- and second-order levels on stress resilience of olds.

METHODOLOGY

Sample : A final random sample of 400 old agers was selected from a larger population (N = 2000) of Raipur city maintaining male-female ratio as 1:1. Care was taken to include only those who were living with their spouse.

On the basis of Q_1 and Q_3 statistics on need level test scores and spiritual intelligence test scores, the final sample comprised of following subgroups:

1. Male – High Spiritual Intelligence – High Growth Needs
2. Male – High Spiritual Intelligence – High Deficiency Needs
3. Male – Low Spiritual Intelligence – High Growth Needs
4. Male – Low Spiritual Intelligence – High Deficiency Needs
5. Female – High Spiritual Intelligence – High Growth Needs
6. Female – High Spiritual Intelligence – High Deficiency Needs
7. Female – Low Spiritual Intelligence – High Growth Needs
8. Female – Low Spiritual Intelligence – High Deficiency Needs

Fifty subjects were selected randomly in each subgroup (Table 1).

Tools : Following standardized psychological tests were used to assess different dispositional/behaviour dimensions:

(i) Determination of Need Level – Need Level Test (Ajawani, 2007) was used to determine the need level i.e., deficiency need level or growth need level of the subject.

(ii) Measurement of Spiritual Intelligence – Spiritual Intelligence Scale (Ajawani et al., 2009) was used to measure spiritual intelligence level of the subjects.

(iii) Assessment of Stress Resilience Ability : Stress Resistance Scale (Ajawani, 2010) was used to assess stress management ability of the subjects.

Research Design & Procedure

A 2x2x2 factorial design was used to study independent and joint effects of three independent variables i.e., need level, spiritual intelligence, and gender, on stress resilience of the subjects wherein 50 old agers were studied for their stress-resilience in each cell of 8-cell design.

Initially, spiritual intelligence test was administered on 2000 old agers maintaining male-female ratio as

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

1:1. On the basis of Q_1 and Q_3 statistics, these people were classified as 'high spiritual intelligence' (above Q_3), and 'low spiritual intelligence' (below Q_1) and further were administered need level test. Again on the basis of Q_1 and Q_3 statistics, they were classified as 'high growth need level' (above Q_3 on growth needs and below Q_1 on deficiency needs) and as 'high deficiency need level' (above Q_3 on deficiency needs and below Q_1 on growth needs).

Finally, 50 subjects were selected randomly from each of 8 sub-groups (described above) and were administered stress resistance scale.

RESULTS & DISCUSSION

Table # 1: Details of Final Sample

Gender	High Spiritual Intelligence		Low Spiritual Intelligence		Total
	High Growth Need Level	High Deficiency Need Level	High Growth Need Level	High Deficiency Need Level	
Male	n = 50	n = 50	n = 50	n = 50	200
Female	n = 50	n = 50	n = 50	n = 50	200
Total	100	100	100	100	400

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

Table # 2: Statistical Details Of Eight Sub-Groups For Stress Resilience

Gender	High Spiritual Intelligence		Low Spiritual Intelligence		Mean
	High Growth Need Level	High Deficiency Need Level	High Growth Need Level	High Deficiency Need Level	
Male	$n_1 = 50$	$n_2 = 50$	$n_3 = 50$	$n_4 = 50$	96.085
	$M_1 = 109.40$	$M_2 = 94.68$	$M_3 = 99.10$	$M_4 = 81.16$	
	?X_1^2=8690.52	?X_2^2=7554.16	?X_3^2=9931.26	?X_4^2=8499.10	
Female	$n_5 = 50$	$n_6 = 50$	$n_7 = 50$	$n_8 = 50$	91.465
	$M_5 = 101.54$	$M_6 = 89.18$	$M_7 = 94.94$	$M_8 = 80.20$	
	?X_5^2=9732.01	?X_6^2=9346.80	?X_7^2=8872.56	?X_8^2=9493.12	
M	105.47	91.93	97.02	80.68	93.775

$M_{HSPI} = 98.70$ $M_{HGN} = 101.245$

$M_{LSPI} = 88.85$ $M_{HDN} = 86.305$

Table # 3: Summary Of 3-Way ANOVA

S.N.	Sources	SS	df	V	F-ratio	Remarks
1.	Between 2 NL Groups	22320.36	1	22320.36	122.98	P<.01
2.	Between 2 S.I. Groups	9702.25	1	9702.25	53.46	P<.01
3.	Between 2 Gender Groups	2134.44	1	2134.44	11.76	P<.01
4	Interaction Effects					
(A)	First Order Interaction Effects					
(i)	NL x SI	225.00	1	225.00	1.24	NS
(ii)	NL x G	34.81	1	34.81	0.19	NS
(iii)	SI x G	424.36	1	424.36	2.34	NS
(B)	Second Order Interaction Effects					
(i)	NL x SI x G	685.98	1	685.98	9.77	NS
4.	Within Sets (Error Terms)	72419.53	392	181.50		
	Total		399			

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

(i) Role Of Need Level In Stress Resilience

It is clear from Table 2 that average stress resilience score (M = 101.245) of olds with high growth need level is higher than that of those with high deficiency need level (M = 86.305). The obtained significant F-ratio (F = 122.98, P<.01, df = 1,392, Table 3) provides sound statistical ground to believe that olds with high growth need level are truly more stress resilient than those with high deficiency need level, and thus research hypothesis is tenable.

Maslow (1971) asserts that as a person becomes more self-actualized and self-transcendent, he becomes more wise (develops wisdom) and automatically knows what to do in a wide variety of situations, which ultimately empowers him to deal with stressors in a resilient manner. Apart of it, the cognitive and aesthetic needs – which are included at growth need level, too seem to empower a person as stress resilient because satisfaction of this needs broadens a person's horizons with a systematic efforts while coping with stressors. All together, it can be said that growth needs enable a person to behave in a resilient manner while dealing with stressful situation.

(ii) Role Of Spiritual Intelligence In Stress Resilience

A perusal of Table 2 classifies that average stress resilience score of olds with high spiritual intelligence (M = 98.70) is higher than that of olds with low spiritual intelligence (M = 88.85). The obtained F-ratio for this difference (F = 53.46, Table 3) is significant at .01 level of significance for 1 and 392 degrees of freedom and provides empirical ground to conclude that spiritual intelligence plays true role in stress resilience of old people, that is, olds with high spiritual intelligence show genuinely higher stress resilience than those with low spiritual intelligence.

Masten & Coatsworth (1998) asserted that stress resilient children had adequate intellectual functioning, social skills, self-efficacy, and faith, the characteristics which in general are responsible for true wisdom in human, which in turn is one of the quality of spiritual intelligence.

Evaluation of three major aspects of spiritual intelligence i.e., identifying with one's higher self or spirit than with the ego, understanding universal law – cause and effect, and non-attachment (Diedrich, 2007), clearly reveals that nurturance of these aspects protects a person from negative stresses and also enables him to adopt effective stress-coping strategies leading to comfortable mental-physical state even during adverse moments. Apart of it, looking at some of the dimensions of spiritual intelligence i.e., self-awareness, self-actualization, self-acceptance, transcendental awareness, self-regard, spiritual practices, flexibility, forgiveness, gratitude, divinity, meaning and purpose, compassion, critical thinking, egolessness and equanimity, it seems reasonable to think that a person with such abilities is very near to state of 'just being' which helps him to feel unperturbed and transquilled even in severe stress situations and to adapt effectively, thus, proving oneself a good stress resilient person.

(iii) Role Of Gender in Stress Resilience

A perusal of Table 2 reveals that average stress resilience score of males (M = 96.085) is

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

higher than that of females (M = 91.465). The obtained significant F-ratio ($F=11.76$, $P<.01$, df = 1, 392, Table 3) provides empirical ground to conclude that males are genuinely more stress resilient than females.

Though, generally, it is believed that old men show lower stress-resiliency than women as they rebel against feeling useless, the controvert finding in the present research highlights new emerging scenario on gender difference. Now a days men don't' accept their retirement even after 60 years of their lives. The modern stimulating world continues to excite them in various ways physically, psychologically and even socially. More self-independence during old age of modern era, empowers them to remain stress-resilient instead of women who oftenly run under empty nest phenomenon. The modern nuclear family has reduced grand mothers role of women in old age and thus deprives them from their traditional duty of helping with the care of grand children and, thus they remain unhappy, which may be causing poorer level of stress resilience among old women.

(iv) Interaction Effects

None of the interaction effects have been found significant (Table 3) which provide sound statistical ground to conclude that the three independent variables i.e., need level, spiritual intelligence, and gender, are truly independent in regard to their roles in stress resilience. Thus, it can be concluded that the difference in stress resilience of male and female olds do not vary genuinely due to their differential level of need level and/or spiritual intelligence.

REFERENCES

Ajawani, J.C. (2007). Need Level Test. F.S. Management India Pvt. Ltd., Raipur, India.

Ajawani, J.C. (2010). Stress Resistance Scale. F.S. Management India Pvt. Ltd., Raipur, India.

Ajawani, J.C., Sethi, A., & Chhawchharia, K. (2009). Spiritual Intelligence Scale. F.S. Management India Pvt. Ltd., Raipur, India.

Diedrich, W.F. (2007). Beyond Blaming. Transformative Press, East Lansing, Michigan, USA.

Maslow, A. (1971). The farther reaches of human nature. New York : The Viking Press.

Masten, A.S. (2001). Ordinary magic : Resilience processes in development. American Psychologist, 56, 227-238.

Masten, A.S., & Coatsworth, J.D. (1998). The development of competence in favourable and unfavourable environments : Lessons from research on successful children. American Psychologist, 53, 205-220.

DMV Journal
Annual Journal of Durga Mahavidyalaya, Raipur (C.G.)
ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

वैश्वीकृत अर्थव्यवस्था में मानव संसाधन
(वि वव्यापी मंदी के वि ोश संदर्भ में)

डॉ. आर.के.देवांगन,
सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य)
डॉ. ए. करीम ,
सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य)
भाास.महाप्रभु वल्लभाचार्य स्नातकोत्तर
महाविद्यालय, महासमुन्द (छ.ग.)

आधुनिक युग में विदे ी व्यापार में वृध्दि एवं बढ़ते विनियोग के फलस्वरूप वै वीकरण की अवधारणा का प्रादुर्भाव हुआ। वै वीकरण के अंतर्गत वि व की विभिन्न अर्थव्यवस्थाओं का समन्वय किया जाता है ताकि वस्तुओं व सेवाओं, टेक्नालॉजी, पूंजी और श्रम (मानवीय संसाधन) का निर्बाध प्रवाह हो सके। विकसित राष्ट्रों ने वै वीकरण में केवल निर्बाध व्यापार प्रवाह, पूंजी प्रवाह, और टेक्नालॉजी प्रवाह को ही महत्वपूर्ण माना है जबकि विकास ील राष्ट्रों के अनुसार संसार को 'सार्वभौम ग्राम' (Globle Villege) की धारणा तभी फलीभूत होगी जब उपरोक्त प्रवाहों के साथ ही श्रम (मानवीय संसाधन) का भी निर्बाध प्रवाह हो।

उपक्रमों के सुचारू रूप सें संचालन में विभिन्न संसाधनों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। इन संसाधनों को मुख्य रूप से तीन श्रेणियों में विभजित किया जा सकता है:–

(i) भौतिक संसाधन –इनमें यंत्र, म ीनें, उपकरण, भूमि, भवन, संयंत्र आदि भाामिल हैं।
(ii) वित्तीय संसाधन –इनमें पूंजी, मुद्रा, धन सम्पत्ति, माल, अर्ध्दनिर्मित वस्तुएं आदि भाामिल हैं।
(iii) मानव संसाधन –मानव संसाधनों में संगठन में नियुक्त समस्त श्रणियों के कर्मचारियों, श्रमिक, फौरमेन,इंजीनियर्स, तकनीि ायन, कार्यालय कर्मचारी व प्रबंधकों को भाामिल किया जाता है।

इनमें मानव संसाधन सबसे महत्वपूर्ण व मूल्यवान संसाधन होते हैं। इसके बिना कोई भी संस्था कार्य नहीं कर सकती। **रेन्सिस लिकर्ट** का मत है कि –'किसी भी उपक्रम की समस्त क्रियायें उस संस्था में कार्य ील व्यक्तियों व्दारा ही प्रारंभ व निर्धारित की जाती है। मानवीय प्रयास व निर्दे ान के अतिरिक्त समस्त संसाधन यथा –संयंत्र, कार्यालय, कम्प्यूटर्स, स्वचालित यंत्र आदि जो आधुनिक उपक्रमों में प्रयोग में लायी जाती है, अनुत्पादक होते हैं।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

मानव ही यंत्र को बनाता व चलाता है, वही निर्धारित करता है कि कम्प्यूटर्स को कहां और कैसे प्रयोग में लाना है। मानव ही प्रयुक्त टेक्नालॉजी को आधुनिक बनाता है, वांछित पूंजी का प्रबंध तथा लेखांकन व कार्य–पध्दति का निर्धारण करता है। उपक्रम की क्रियाओं का प्रत्येक पहलू उसके मानवीय संगठन की योग्यता, अभिप्रेरणा व कार्य दक्षता के द्वारा निर्धारित होता है।'[1]

वै वीकृत अर्थव्यवस्था में प्रत्येक राष्ट्र की आर्थिक व सामाजिक परिस्थितियां तेजी से परिवर्तित हो रही है। अनेक राष्ट्र बेकारी, गरीबी व निम्न उत्पादकता के भयावह जाल में फंसे हुए हैं, तो कुछ राष्ट्र अपने विपुल मानव भाक्ति का कु ाल व विवेकपूर्ण विदोहन नहीं कर पा रहे हैं। मानव भाक्ति के उचित नियोजन पर ही उपक्रम व राष्ट्र की सफलता निर्भर करती है। उपक्रम में मानव भाक्ति की आव यकताओं का अनुमान लगाकर वांछित मानव भाक्ति की प्राप्ति, उपयोग व विकास की प्रक्रिया मानव भाक्ति नियोजन के व्दारा ही संभव है। **स्ट्रास व साइल्स** के अनुसार –'युक्तिसंगत दृष्टि से किसी फर्म के कर्मचारियों संबंधी क्रियाओं के विकास का प्रथम चरण– संगठन संचालन के लिए कर्मचारियों की अधिप्राप्ति है, जो व्यवसाय की स्थापना एवं विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। योग्य कर्मचारियों की पूर्ति, व्यवसाय की सफलता के अन्य साधनों (धन, सामग्री अथवा बाजार) की भांति प्रभावित करते है।[2] इस प्रकार मानव भाक्ति नियोजन भावी आव यकताओं का पूर्वानुमान करते हुए उसके प्राप्ति, उपयोग, विकास एव अनुरक्षण की कार्ययोजना को विकसित व क्रियान्वित करने की प्रकिया है। मानव भाक्ति के प्राप्ति की प्रक्रिया न केवल रोजगार के नये अवसरों को जन्म देती है बल्कि प्रि ाक्षण एवं विकास के नये आयाम भी प्रस्तुत करता है ।

वैश्वीकरण में रोजगार परिदृष्य :

वै वीकरण के अंतर्गत राष्ट्र के विकास के लिए टेक्नालॉजी प्रगति ,उत्पादकता वृध्दि के साथ ही रोजगार के विस्तार को महत्वपूर्ण घटक माना जाता है। वै वीकरण के सामाजिक आयाम पर **विश्व आयोग** ने उल्लेख किया है –'समग्र वि व के लिए उपलब्ध अनुमानों से पता चलता है कि पिछले द ाक के दौरान खुली बेरोजगारी में वृध्दि हुई है।[3] यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि वि व में 1990 के प चात् बेरोजगारी की दरें बढ़ी है, जो अग्र तालिका में स्पष्ट है :–

1. मानव संसाधन प्रबन्ध – जी.एस.सुधा, नेशनल पब्लिसिंग हाऊस, नई दिल्ली (2006) पृ. क्र. 28-31 ।
2. मानव संसाधन प्रबन्ध – जी.डी. शर्मा एवं अन्य, रमेश बुक डिपो, जयपुर (1992) पृ. 86 ।
3. भारतीय अर्थव्यवस्था – रुद्रदत्त एवं सुन्दरम, एस. चन्द एण्ड कम्पनी लि., नई दिल्ली (2007) पृ. 251 ।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

तालिका 1 : वि व के विभिन्न क्षेत्रों में खुली बेरोजगारी की दरें(1990–2002)

(श्रम भाक्ति प्रति ात में)

दे ा	1990	1995	2000	2002
लातीन अमेरिका एवं कैरिब्बियन	6.9	8.3	9.7	9.9
पूर्वीय एि ाया	–	3.1	3.2	4.0
दक्षिण पूर्वीय–एि ाया	3.6	4.1	6.0	6.5
दक्षिण एि ाया	3.6	2.9	3.4	3.4
यूरोपीय संघ	8.1	10.5	7.8	7.6
यू. एस. ए.	5.6	5.6	4.0	5.6
जापान	2.1	3.1	4.7	5.8
सब–सहारण अफ्रीका	–	–	13.7	14.4
मध्य–पूर्व एवं उत्तरी अफ्रीका	–	–	17.9	18.0

स्त्रोतः आई. एल. ओ. वै वीकरण के सामाजिक आयाम पर वि व आयोग की रिपोर्ट (2004) पृ. 41

उक्त तालिका से स्पष्ट है कि लातीन अमेरिका व कैरिब्बियन जहां 1990 में 6.9 प्रति ात खुली बेरोजगारी थी वह बढ़कर 2002 में 9.9 प्रति ात हो गई है। इसी प्रकार दक्षिण–पूर्वी एि ाया में 1990 में 3.6 प्रति ात खुली बेरोजगारी थी वह बढ़कर 2002 में 6.5 प्रति ात हो चुकी है। यही स्थिति जापान में भी द्श्टव्य है, जहां 1990 में 2.1 प्रति ात खुली बेरोजगारी थी वह बढ़ कर 2002 में 5.8 प्रति ात हो गयी है ।

वै वीकरण ने श्रम की परोलतारीकरण (Proletarianization)की प्रक्रिया त्वरित कर दी है। इससे बेरोजगारी, अनियतिकरण, निम्न मजदूरी, अं ाकालिन नौकरियां, कम या सुरक्षाविहिन नौकरियों की समस्याओं में निरन्तर वृध्दि हुई है। श्रम संघों के व्दारा श्रम विवादों का समाधान करते समय 'सामूहिक सौदेबाजी' का स्थान 'रियायती सौदेबाजी ' ने ले लिया है। श्रमिकों के रोजगार बचाने के लिए श्रम संघों को मजबूरन –मजदूरी व वेतन में कटौती , रोजगार में अनियत श्रम का अधिक अनुपात स्वीकारना या वि ाष्ट समय हेतु मजदूर अधिकारों को स्थगित करना पड़ रहा है ।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

वैश्वीकरण का भारत के रोजगार पर प्रभाव –

भारत में आर्थिक उदारीकरण , वै वीकरण व निजीकरण के युग में निजी क्षेत्र व्दारा अतिरिक्त रोजगार सृजन किये जाने की संभावनाऐं व्यक्त की गई थी, किन्तु वह अपेक्षाओं की कसौटी पर खरी नहीं उतरी है। बहुराष्ट्रीय कंपनियों का उद्दे य भारतीय बाजार पर अपना वर्चस्व कायम करना था, न कि रोजगार के अवसरों का सृजन करना । वर्तमान स्थिति यह हैं कि उच्च तकनीकी ि क्षा प्राप्त युवाओं को आकर्षक वेतन व सुविधाओं का प्रलोभन देकर बहुराष्ट्रीय कम्पनियां ले गई थी , वे भी अब वि वव्यापी मंदी के नाम पर उन्हें निकाल रही है । इस प्रकार वै वीकरण अर्थव्यवस्था में भारत में रोजगार वृध्दि दरों में गिरावट आयी है जो निम्नांकित तालिका से स्पष्ट है :–

तालिका 2 : क्षेत्रों के आधार पर रोजगार वृध्दि की दरें

(प्रति त में)

क्षेत्र	1983 – 94	1994 – 2000
कृशि	1.51	–0.34
खनन एवं खदान	4.16	–2.85
विनिर्माण	2.14	2.05
बिजली, गैस एवं जल–पूर्ति	4.50	–0.88
निर्माण	5.32	7.09
व्यापार	3.57	5.04
परिवहन, संग्रहण एवं संचार	3.24	6.04
वित्तीय सेवाऐं	7.18	6.20
सामुदायिक एवं वैयक्तिक सेवाऐं	2.90	0.55
कुल	**2.04**	**0.98**

स्त्रोतः योजना आयोग (2001), रोजगार के अवसरो पर कार्यदल की रिपोर्ट

उपरोक्त तालिका में द्ष्टव्य है कि रोजगार वृध्दि दर जो 1983–94 में 2.04 प्रति ात प्रतिवर्ष थी वह घटकर 1994–2000 के दौरान 0.98 प्रति ात हो गई। इसका मुख्य कारण कृषि–रोजगार में वृध्दि दर का नकारात्मक होना था, जो कुल श्रमिकों के लगभग 65 प्रति ात रोजगार उपलब्ध कराता था। इसी प्रकार सामुदायिक, सामाजिक एवं वैयक्तिक सेवाओं के वृध्दि दर में भी तीव्र गिरावट आयी है, यह 1983–94 में 2.90 प्रति ात थी जो 1994–2000 में 0.55

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

प्रति ात हो गयी, इसका मुख्य कारण कृषि की उपेक्षा और सार्वजनिक क्षेत्र में रोजगार के अवसरों को कम करना था, इसके लिए सार्वजनिक क्षेत्रों में नई भर्ती पर लगातार पाबंदी के साथ ही रिक्त पदों पर नयी नियुक्तियों का नहीं होना था।

वै वीकरण के फलस्वरूप भारत के संगठित क्षेत्र में पर्याप्त मात्रा में रोजगार की उपलब्धता नही हो पायी परिणामतः संगठित क्षेत्र की तुलना में असंगठित क्षेत्र में श्रमिकों की संख्या में वृहद पैमाने पर वृध्दि हुई यह सर्वविदित है कि असंगठित क्षेत्र में श्रमिकों को वेतन व मजदूरी, संगठित क्षेत्र की तुलना में कम प्राप्त होती है। वै वीकृत अर्थव्यवस्था ने अनौपचारीकरण (Informalisation) की प्रक्रिया को बढ़ावा दिया है, इससे श्रम की अनियतीकरण (Casualisation) की प्रक्रिया बढ़ी है । राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण के अनुसार अनियत श्रम 1983 में 28.7 प्रति ात था जो बढ़कर 1999–2000में 33.2 प्रति ात हो गया है।

रोजगार पर विश्वव्यापी मंदी का प्रभाव –

वै वीकरण के दौर में नवीनतम टेक्नालॉजी के निर्बाध प्रवाह होने के फलस्वरूप मानवीय संसाधनों हेतु रोजगार के उपलब्ध अवसर जहां प्रभावित हुए है, वहीं वि वयापी मंदी ने इसमें आग में घी की तरह काम किया है। वर्ष 2008 के उत्तरार्ध में प्रारंभ हुई, वै वक आर्थिक मंदी का सर्वाधिक असर अमेरिकी अर्थव्यवस्था पर पड़ा है। इसका मूल कारण अमेरिकी बैकों व्दारा आवास सहित उपभोक्तागत वस्तुओं और सेवाओं के लिए असुरक्षापूर्ण ढ़ंग से ऋण सुविधा प्रदान करना था। अर्थजगत में इसे 'निन्जा' (**N**o **I**ncome **N**o **J**ob **N**o **A**ssets) का नाम दिया गया अर्थात् ''आपके पास आय नही, काम नहीं, सम्पत्ति नहीं है, फिर भी आईये हम आपको ऋण[4]प्रदान करेंगें।'' विभिन्न दे ों में भी वै वक मंदी के कारण वित्तीय संकट गहराने लगा है, परिणामस्वरूप कर्मचारियों की छंटनी का सिलसिला प्रारंभ हो गया है। ज्यादातर छंटनियां अमेरिकी कम्पनियों में हो रही है तथापि अन्य दे ा भी इसके प्रभाव से बच नहीं पायें हैं। निम्नांकित आंकडे इस तथ्य को प्रमाणित करते हैं –

तालिका 3 : वैश्विक मंदी में कर्मचारियों की छंटनी की संख्या

(इकाईयों में)

क्र	दे ा/संस्था का नाम	रोजगारकी समाप्ति /छंटनी
1.	अमेरिका –	
	1. सिटी ग्रुप	75000 कर्मचारी
	2. वा िंगटन म्यूचुअल (वामू)	9200 कर्मचारी (4000 कर्मचारी जनवरी 09 एवं 5200 कर्मचारी वर्श 2009 के अंत तक)
	3. फिडेलिटी	1300 कर्मचारियों की सेवाऐं समाप्त एवं 1700 कर्मचारियो ंकी छंटनी प्रस्तावित

4. नई दुनिया, रायपुर (दैनिक समाचार पत्र) दिनांक 02 जनवरी 2009, 'दूर होगा आर्थिक संकट'–लेख–कैलाश विजय वर्गीय ।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

2.	ब्रिटेन —	
	1. एच. एस. बी. पी.	500 कर्मचारियों की छंटनी
	2. क्रेडिट सूसी इन्वेस्टमेंट	650 कर्मचारियों की छंटनी
	3. रॉयल बैंक आफ स्कॉटलैंड	3000 कर्मचारियों की छंटनी
3.	जापान —	
	1. टोयटा	मध्यम व निचली श्रेणी के कर्मचारियों के बोनस में 10 फिसदी कटौती प्रस्तावित
4.	भारत—	
	1. किंग फि ार एयर लाइन्स	300 कर्मचारियों की छंटनी
	2. जेट एयरवेज	1900 कर्मचारियों की छंटनी
	3. एयर इंडिया	15000 कर्मचारियों को 3 से 5 साल तक अवैतनिक अवका ा पर भेजने की योजना प्रस्तावित
	4. बी.पी.ओ.(बिजनेसप्रोसेस आउटसोर्सिंग)	2500 कर्मचारियों के बेरोजगार होने की आ ांका

स्त्रोतः दैनिक भास्कर, रायपुर (दैनिक समाचार पत्र) दिनॉक—15अक्टू.08, 17अक्टू.08, एवं 04दिस.08

उक्त तालिका में यह तथ्य स्पष्ट रूप से प्रदर्ि ात है कि अमेरिका के सिटीग्रुप में 75000 कर्मचारी, वाि ांगटन म्यूचुअल में 9200 कर्मचारी एवं फिडेलिटी में 1300 कर्मचारीयों की छंटनी तथा इसी क्रम में ब्रिटेन में एच.एस.बी.पी. में 500 कर्मचारी ,रायल बैंक ऑफ स्काटलैण्ड में 3000 कर्मचारियों की छंटनी से वहां कार्यरत् कर्मचारियों के समक्ष रोजगार की समस्या उत्पन्न कर दी है। इस वैि वक मंदी के चलते भारत का विमानन उद्योग भी प्रभावित हुआ है , जहां किंगफि ार एयर लाइन्स के 300 कर्मचारी ,जेट एयरवेज के 1900 कर्मचारी एवं एयर इंडिया के 15000 कर्मचारी छंटनी के प्रस्तावित योजना से प्रभावित है। इस संदर्भ में उल्लेखनीय है कि वित्तीय संकट से ग्रसित जेट एयरवेज के भीर्ष प्रबंधकीय अधिकारियों से जनवरी, 2009 से उनके वेतन से 25 फिसदी कटौती की स्वीकृति प्राप्त[5] की गयी है।

भारत में रोजगार की संभावनाऐं :—

भारतीय अर्थ ाास्त्रियों के अनुसार वैि वक मंदी से भारत के केवल वही क्षेत्र प्रभावित होंगे जहॉ अमेरिकी निवे ा है, इन क्षेत्रों में आवास ,आटोमोबाइल्स व सेवा क्षेत्र प्रमुख हैं। भारत के बीमा कंपनियां व राष्ट्रीकृत बैंकों में मंदी निष्प्रभावी रहेंगी ,परिणामतः न ही कर्मचारियों को छंटनी का सामना करना पड़ेगा और न ही रोजगार के अवसरों की कमी होगी। वैसे भी भारत में नौकरी छुटना (छंटनी), पि चमी दे ाों की तरह आम नहीं है क्योकि भारत में

5. दैनिक भास्कर, रायपुर-(दैनिक समाचार पत्र) दिनांक 4 दिसम्बर, 2008 ।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

लागू श्रम कानूनों के प्रभाव को कैसा भी उदारीकरण हो, कम नहीं कर सकता। अमेरिका में एक घंटे की नोटिस पर सेवाऐं समाप्त हो सकती है किन्तु भारत में कंपनियों को अपने कर्मचारियों को हटाने के लिए काफी श्रम कानूनों का सामना करना पड़ेगा।[6]

वर्तमान स्थिति में भारतीय अर्थव्यवस्था की गति भले ही अल्प समय के लिए धीमी पड़ गई हो, किन्तु भावी रोजगार की व्यापक संभावना बनी हुई है, दे ा–विदे ा की वि ोषज्ञ एजेंसियों के अनुसार भारतीय रोजगार परिदृ य पर वि व में व्याप्त आर्थिक संकट का खास असर नहीं पड़ेगा। बोस्टन कंसल्टिंग ग्रुप के अध्ययन के अनुसार वर्ष 2009 में दे ा के आई टी, आउटसोर्सिंग, बैंकिंग, बीमा, रिटेल व हेल्थ केयर जैसे क्षेत्र रोजगार सृजन की दृष्टि से महत्वपूर्ण होंगें। इन्हें व अन्य क्षेत्रों को मिलाकर भारत में करीब 8.5 से 9 करोड़ कार्मिकों की मांग होगी। **एच आर कंसल्टेंसी फर्म मैनपावर प्रोजेक्ट** के अनुसार भारतीय कंपनियों में नियुक्ति की प्रक्रिया वर्ष 2009 की पहली तिमाही से 18 फिसदी की दर से बढ़ना ुरू हो जाएगी।[7] वर्तमान वित्तीय संकट के बीच जहां विभिन्न दे ों के तमाम सेक्टरों में रोजगार घट रहें है, वहीं भारतीय रोजगार परिदृ य में कर्मचारियों की भर्ती की व्यापक संभावनाऐं है। इस क्रम में राष्ट्रीकृत बैकों की भूमिका महत्वपूर्ण है, इसके अतिरिक्त बीमा कंपनियां एवं निजी व बहुराष्ट्रीय कंपनियों में रोजगार की व्यापक संभावनाऐं निम्नांनुसार है –

तालिका 4 : **भारत के विभिन्न क्षेत्रों मे रोजगार की संभावनाऐं**

(इकाईयों में)

क्र.	संस्थाऐं	रोजगार के अवसर / संभावनाऐं
1.	बैंक –	
	1. भारतीय स्टेट बेंक ऑफ इंडिया (प्रमुख ऋण प्रदाता बैंक) एवं पंजाब ने ानल बैंक, यूनियन बैंक, इंडियन बैंक व ओवरसीज बैंक	25000 नौकरियां प्रस्तावित
2.	बीमा –	
	1. भारतीय जीवन बीमा निगम	45000 कर्मचारियों एवं एजेन्टों की भर्ती प्रस्तावित (इनमें 10000 की नियुक्तियां मार्च 2009 तक)
	2. मैक्स न्यूयार्क लाईफ	9000 कर्मचारी एवं 70000 एजेन्टों की भर्ती प्रस्तावित
	3. मैट लाइफ	2000 बिक्री प्रबंधक एवं 30000 एजेन्टों की भर्ती प्रस्तावित
	4. भारतीय एक्सा	1400 कर्मचारियों की भर्ती प्रस्तावित

6. दैनिक भास्कर, रायपुर (दैनिक समाचार पत्र) दिनांक 05 जनवरी, 2009 ।
7. हरिभूमि, रायपुर (दैनिक समाचार पत्र) दिनांक 19 जनवरी, 2001 ।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

3.	आई. टी. – 1. टाटा कंसल्टेन्सी सर्विस 2. इंफोसिस	 30000 से 35000 कर्मचारियों की भर्ती प्रस्तावित (इनमें 22000 तकनीकी पदों पर कैंपस भर्ती) 25000 कर्मचारियों की भर्ती प्रस्तावित (इनमें 18000 तकनीकी पदों पर कैंपस भर्ती)
4.	इन्फ्रास्ट्रकचर – 1. एल. एण्ड टी.	 आगामी 3 वर्शो में 10000 कर्मचारियों की भर्ती प्रस्तावित
5.	बी. पी. ओ. – 1. एजिस बी पी ओ सर्विस	 प्रतिमाह 1000 कर्मचारियों की भर्ती प्रस्तावित

स्त्रोतः दैनिक भास्कर, रायपुर – (दैनिक समाचार पत्र) दिनांक– 18 नव. 08 एवं 31दिस. 08

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि वैि वक मंदी के कारण भले ही चहुं ओर छंटनी का खौफ है लेकिन भारत में रोजगार के अवसरों में वृध्दि की संभावना है।

निश्कर्ष :–

वै वीकृत अर्थव्यवस्था में मानवीय संसाधनों के बेहतर प्रयोग की महती आव यकता है। मानव संसाधनों के बिना वै वीकरण में सुदृढ़ इकाइयों की स्थापना कोरी कल्पना मात्र होगी,क्योंकि कोई भी वृहद उद्योग उसके मानवीय संसाधनों के बिना निस्सार है। केवल वृहद उत्पादन या व्यापक बाजार क्षेत्र की प्राप्ति से ही वै वीकरण के लक्ष्यों को प्राप्त नही किया जा सकता है। इसी प्रकार वि वव्यापी मंदी के कारण कर्मचारियों की छंटनी से मानवीय संसाधनों की उपेक्षा हुई है , वह पानी के बुलबुले के समान है जिसे सुदृढ़ आर्थिक नीति एवं व्यापक आर्थिक सुधारों के माध्यम से दूर करके रोजगार के नये अवसरों या संभावनाओं को निर्मित किया जाना आव यक होगा ,ताकि वै वीकरण की गति ील प्रक्रिया में मानव संसाधनों का बेहतर प्रयोग संभव हो पायेगा।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

संदर्भ सूची –

(1) भारतीय अर्थव्यवस्था – रूद्रदत्त एवं के. पी. सुन्दरम, एस. चन्द कम्पनी एण्ड लि., नई दिल्ली (2007)

(2) मानव संसाधन प्रबंध – जी. एस. सुधा, ने   ानल पब्लिि ंग हाउस, नई दिल्ली (2006)

(3) नवीन आर्थिक नीति व नियोजन – सुभाष गंगवाल, मंगलदीप पब्लिके   ान, जयपुर (2006)

(4) मानव संसाधन प्रबंध – डॉ. जी. डी. भार्मा, डॉ के. के. भार्मा व प्रो. जी. सी. सुराना, रमे   ा बुक डिपो,जयपुर (2002)

(5) दैनिक भास्कर, रायपुर – (दैनिक समाचार पत्र)दिनांक– 16 व 17 अक्टूबर, 18 नवम्बर, 04 व 31 दिसम्बर, 2008 एवम् 19 जनवरी, 2009

(6) नई दुनिया,रायपुर – (दैनिक समाचार पत्र), दिनांक– 02 जनवरी, 2009, 'दूर होगा आर्थिक संकट' : लेख–कैला   ा विजयवर्गीय

(7) हरि भूमि, रायपुर – (दैनिक समाचार पत्र), दिनांक– 19 जनवरी, 2009

■■■

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

लघु उद्योगों के वित्त प्रबंधन में वाणिज्यिक बैंको का योगदान ''राजनांदगांव जिले के वि ोश संदर्भ में''

डॉ. हरजीत सिंह भाटिया
प्राध्यापक (वाण्ज्यि)
भास. दिग्विजय महाविद्यालय
राजनांदगांव (छ.ग)

(डॉ.जी.डी.एस.बग्गा)
सहा.प्राध्यापक (वाण्ज्यि)
भास.कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय
धमधा जिला – दुर्ग (छ.ग.)

सूक्ष्म, लघु एवं मंझोले उद्योग जिन्हें हम MSME कहते हैं, का दे ा की आर्थिक प्रगति में महत्वपूर्ण स्थान हैं। पिछले 65 वर्शों में इस क्षेत्र ने दे ा की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। आज MSME दे ा के औद्योगिक प्रतिष्ठानों के 95% के बराबर हैं और कुल औद्योगिक उत्पाद का 45% इसी क्षेत्र में होता है। दे ा के होने वाले निर्यात का 40% भाग MSME में बनाया जाता है। MSME की यह प्रगति इसलिए संभव हो सकी हैं क्योंकि इनकी सर्वाधिक महत्वपूर्ण आव यकता यानि 'वित्त' का प्रवाह इन क्षेत्रों में बढ़ा है। उद्यमी स्वयं अपने स्तर पर पूंजी लगाकर इन क्षेत्रों में पदार्पण कर रहें हैं व आव यकता पड़ने पर इन्हे वित्तीय सहायता (ऋण) भी उपलब्ध करवाया जा रहा हैं।

इन उद्योगों को वित्त की पूर्ति प्रायः बैंको द्वारा की जाती हैं। दे ा में औद्योगिक वित्त प्रदान करने वाली मुख्य रूप से 3 बैंकिग संस्थाएं है :– 1.वाणिज्यिक बैंक 2. औद्योगिक बैंक व 3. दे ी बैंकर। इनमें से लद्यु उद्योगों को वित्त की पूर्ति प्रायः वाणिज्यिक बैकों द्वारा की जाती है। रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया द्वारा वाणिज्यिक बैंकों को यह स्पष्ट निर्दे ा है कि वे ऋण संबंधी आव यकताओं को पूर्ण करने में लघु उद्योगों की ओर वि ोश ध्यान दें। प्रस्तुत भाोध पत्र में लघु उद्योगों के वित्त प्रबंधन में वाणिज्यिक बैंको के योगदान की समीक्षा छत्तीसगढ़ राज्य के राजनांदगांव जिले के संदर्भ में की गयी है :–

उद्दे य

जिले के वाणिज्यिक बैंको द्वारा लघु उद्योगों को वित्तीय सुविधाएं उपलब्ध करवाने के फलस्वरूप इनका विकास किस सीमा तक हुआ है इनके मार्ग में आने वाली बाधाएं (समस्याएं) क्या है, उन्हे ज्ञात कर उनके समाधान हेतु सुझाव प्रस्तुत करना इस भाोध का उद्दे य है।

भाोध प्रविधि

इस अध्ययन में प्रारंभिक व द्वितीयक दोनो प्रकार के समंको का प्रयोग किया गया है जिले के चुनिंदा उद्यमियों से साक्षात्कार के माध्यम से प्राथमिक समंक एकत्र किये गये है वहीं जिला उद्योग केन्द्र, जिले के वाणिज्यिक बैंको, लीड बैंक, पत्र–पत्रिकाओं से आंकड़ो का संग्रहण कर उन्हे वर्गीकृत व वि लेशित कर निश्कर्श ज्ञात किए गये हैं।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

तलिका क्रमांक – 1
राजनांदगांव जिले के वाणिज्यिक बैंको द्वारा लघु उद्योगों को प्रदत्त ऋणों का विवरण

क्रं.	बैंक का नाम	शाखाओं की संख्या	वितरित ऋण (लाख रू.)			योग (लाख रू.)
			2010	2011	2012	
1	स्टेट बैंक ऑफ इंडिया	12	400.4	436.9	398.76	1236.06
2	देना बैंक	7	37.32	38.63	110.32	186.27
3	पंजाब नेशनल बैंक	7	28.15	95.6	15.37	139.12
4	इलाहाबाद बैंक	3	13.43	10.41	32.7	56.54
5	बैंक ऑफ महाराष्ट्र	5	19	6.8	27.79	53.59
6	बैंक ऑफ इंडिया	1	11.73	10.23	17.89	39.85
7	केन्द्रीय सहकारी बैंक	20	22.96	12.41	3.25	38.62
8	दुर्ग राजनांदगांव ग्रामीण बैंक	42	16.63	16.37	1.44	34.44
9	यूनियन बैंक	3	9.43	10.21	6.86	26.5
10	यूनाइटेड वेस्टर्न बैंक	1	1.75	7.41	9.1	18.26
11	सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया	3	2.72	1.19	4.71	8.62
12	बैंक ऑफ बड़ौदा	1	2.93	4.07	0.68	7.68
		योग	566.45	650.23	628.87	1845.55

स्त्रोतः– एनुअल क्रेडिट प्लान देना बैंक राजनांदगांव (वर्ष 2010–2012) से आगणित

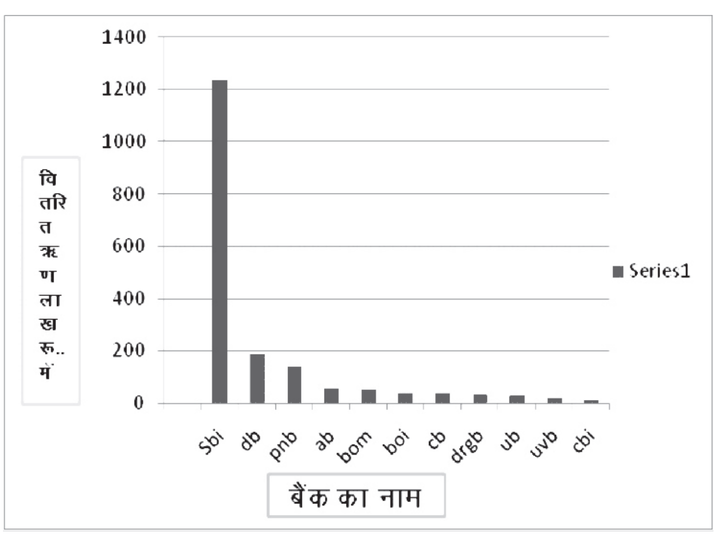

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

उपरोक्त तालिका से यह स्पश्ट हो रहा है कि राजनांदगांव जिले में स्थित सभी वाणिज्यिक बैंकों ने लघु उद्योगो को निरंतर ऋण सुविधाएं उपलब्ध कराई है जहां एक ओर भारतीय स्टेट बैंक ने विगत 3 वर्शों में अपनी 12 भााखाओं के माध्यम से लघु उद्योगों को सर्वाधिक 1236.06 लाख रू. के ऋण वितरित किए जो कि कुल वितरित ऋणों का 66.975% है। वहीं अपनी 7 भााखाओं के माध्यम से देना बैंक ने इसी अवधि में 186.27 लाख रू. के ऋण वितरित किए जो कि कुल वितरित ऋणों का 10.092% है। पंजाब ने ानल बैंक ने अपनी 7 भााखाओं के माध्यम से इन 3 वर्शों में कुल 139.12 लाख रू. के ऋण वितरित किए जो कि कुल वितरित ऋणों का 7.538% है। चौथे कम पर इलाहाबाद बैंक है जिसने अपनी 3 भााखाओं के माध्यम से इस अवधि में कुल 56.54 लाख रू. के ऋण वितरित किए जो कि कुल वितरित ऋणों का 3.063% है।

पांचवे कम पर बैंक ऑफ महाराश्ट्र है जिसने अपनी 5 भााखाओं के माध्यम से लधु उद्योगों को 53.59 लाख रू. के ऋण वितरित किए जो कि कुल वितरित ऋणों का 2.903% हैं। छठवें कम पर बैंक ऑफ इंडिया है जिसने अपनी एकमात्र भााखा द्वारा लघु उद्योगों को 39.85 लाख रू. ऋणों के रूप में वितरित किए जो कि कुल वितरित ऋणों का 2.159% हैं।

जिले की केन्द्रीय सहकारी बैंक ने भी अपनी 20 भााखाओं के माध्यम से लघु उद्योगों को कुल 38.62 लाख रू. के ऋण वितरित किए जो कि कुल प्रदत्त ऋणों का 2.092%है।

दुर्ग राजनांदगांव ग्रामीण बैंक ने अपनी सर्वाधिक 42 भााखाओं के माध्यम से 34.44 लाख रू. के ऋण लघु उद्योगों को वितरित किए जो कि कुल प्रदत्त ऋणों का 1.866% है। यूनियन बैंक ऑफ इंडिया द्वारा अपनी 3 भााखाओं के माध्यम से 26.5 लाख रू. का ऋण वितरण लघु उद्योगों को किया जो कि कुल प्रदत्त ऋणों का 1.44% है। यूनाइटेड वेस्टर्न बैंक राजनांदगांव ने अपनी एक मात्र भााखा द्वारा 18.26 लाख रू. के ऋण लघु उद्योगों को वितरित किए जो कि कुल ऋण रा ि ा 0.989% है।

सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया ने अपनी 3 भााखाओं के माध्यम से लघु उद्योगों को इन 3 वर्शों में 8.62 लाख रू. के ऋण वितरित किए जो कि कुल वितरित रा ि ा का 0.467% है। और अंत में बैंक ऑफ बड़ौदा राजनांदगांव ने अपनी एक मात्र भााखा द्वारा लघु उघोगों को इन 3 वर्शों में 7.68 लाख रू. के ऋण वितरित किए जो कि कुल प्रदत्त ऋणों का 0.416% है।

वित्त प्रबंधन सुविधाओं का लघु उद्योगों के विकास एवं रोजगार में योगदान

वाणिज्यिक बैंको द्वारा दी गयी वित्तीय सुविधाओं के कारण जिले में ट्रंक, गोदरेज, आलमारी, फर्नीचर, कूलर, खाद्य सामग्री का निर्माण, कागज, ज्वेलरी संबंधी उत्पादन से लघु उद्योगों को बढ़ावा मिला साथ ही जिले में तेल मिल, पोहा उद्योग आदि से संबंधित कच्ची सामग्री का अत्यधिक उत्पादन होने के कारण इन उद्योगों का काफी विकास हुआ हैं।

जिले में वर्श 2010 में 2791 उद्योग स्थापित हुए, जिनमें 10004 लोगों को रोजगार मिला वहीं 2011 में इनकी संख्या 2777 थी जिनसे 9477 लोगों को रोजगार मिला व 2012 में 2935 उद्योग स्थापित थे जिसमें 10083 लोगों को रोजगार मिला।

वाणिज्यिक बैंको की पूरे जिले में भााखाएं है इनके द्वारा प्रदत्त वित्तीय सुविधाएं से पूरे जिले में उद्योगों का विस्तार हुआ है निम्नांकित तालिका से यह स्पश्ट है –

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

तालिका कं. 2

जिले में स्थापित उद्योगों का विवरण

कं.	जिला / तहसील	कुल उद्योगों की संख्या			कृषि उद्यम	गैर कृषि उद्यम	परिसर वाले	बिना परिसर वाले
		ग्रामीण	नगरीय	योग				
1	2	3	4	5	6	7	8	9
1	जिला–राजनांदगांव	24724	14613	39337	1939	37398	30024	9313
तहसील								
1	छुईखदान	471	1295	1766	60	1706	1155	611
2	खैरागढ़	3277	1183	4460	178	4282	3485	975
3	डोंगरगढ़	3845	2879	6724	356	6368	5047	1677
4	राजनांदगांव	8551	7739	16290	861	15429	12382	3908
5	डोंगरगांव	2702	875	3577	187	3390	2778	799
6	अं. चौकी	2228	642	2870	107	2763	2311	559
7	मोहला	1826	0	1826	85	1741	1386	440
8	मानपुर	1824	0	1824	105	1719	1480	344

स्त्रोत : जिला सांख्यिकी पुस्तिका 2012 जिला राजनांदगांव

समस्याएं

अध्ययन के दौरान लघु उद्योगों के वित्त प्रबंधन संबंधी निम्नांकित समस्याएं ज्ञात हुई :–

1. लघु उद्योगों के वित्त प्रबंधन के संबंध में सबसे प्रमुख समस्या यह है कि उद्योगों को वित्तीय सहायता प्रदान करने में वित्तीय स्त्रोतों द्वारा अनाव यक विलंब किया जाता है जिससे लघु उद्योगों के हाथ से अनेक लाभकारी अवसर निकल जाते है। फलस्वरूप इन उद्योगों को हानि भी उठानी पड़ती है।
2. वित्तीय सहायता समय पर उपलब्ध न होने के कारण लघु उद्योगों को कच्चा माल, अच्छे औजार, म ीनरी आदि खरीदने में अनाव यक विलंब होता हैं। इस प्रकार वित्त की कमी के कारण लघु उद्योगों को अन्य प्रतिस्पर्धी उद्योगों से मात खानी पड़ती हैं। इस प्रकार एक वित्त की समस्या के कारण लघु उद्योगों को कई समस्याओं का सामना करना पड़ता हैं।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

3. लघु उद्योगों को स्थापित करने के लिए जितनी मात्रा में कार्य ीील पूूजी की मांग की जाती है। वित्तीय स्त्रोत उन्हें प्रायः मांग के अनुरूप वित्त उपलब्ध नहीं करवाते, जिससे आव यक कार्य ीील पूंजी की अनुपलब्धता के कारण लघु उद्योगों को अनेक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता हैं। वर्तमान में लघु उद्योग कार्य ीील पूूजी के रूप में जितनी सहायता की मांग करते हैं उसकी केवल 75% सहायता ही लघु उद्योगों को प्रदान की जाती हैं। और यह सहायता भी लघु उद्योगों को उनके मांगे गये समय में नही दी जाती हैं। जिससे वित्तीय सहायता उपलब्ध होने के बावजूद भी विलंब के कारण लघु उद्योगों को लाभ के अवसरों से हाथ धोना पड़ता है।
4. लघु उद्योगो को वित्तीय सुविधाओं की प्राप्ति हेतु एक अन्य गंभीर समस्या का सामना करना पड़ता हैं। और वह है–'भ्रश्टाचार'। यदि लघु उद्यमियों को सही समय पर वित्तीय सहायता प्राप्त करनी हो तो उन्हें उसकी कीमत चुकानी पड़ती है बिना कीमत चुकाए अपना काम करवाने हेतु उन्हें ऐड़ी–चोटी का जोर लगाना पड़ता हैं। और कई बार तो स्थिति यहां तक पंहुच जाती है कि हितग्राही लघु उद्योग की स्थापना का विचार ही त्याग देता है।
5. लघु उद्यमियों को अपने उद्योग को स्थापित करने के लिए वित्तीय सहायता प्राप्ति हेतु जिला उद्योग केन्द्र में पंजीयन कराना होता हैं एवं उद्योग केंद्र द्वारा ही वित्तीय राि ा स्वीकृत कर वित्तीय स्त्रोतों के पास जानकारी भेजी जाती हैं वास्तविकता तो यह है कि जिला उद्योग केंद्र द्वारा जितनी राि ा की अनु ंसा की जाती हैं उतनी राि ा बैंक उस उद्योग के लिए स्वीकृत नहीं करते, ऐसी द ाा में उद्यमियों के समक्ष यह प्र न उठ खड़ा होता है कि वह उद्योग की स्थापना करें या न करें।
6. वित्तीय स्त्रोतों के माध्यम से लघु उद्योग स्थापित करने हेत म ीीन एवं औजार खरीदने बिल्डिंग आदि हेतु वित्तीय सहायता तो प्रदान की जाती हैं परंतु यह सहायता प्रारंभ में उपलब्ध न होकर कार्य समाप्त होने के प चात् वो भी किस्तों में प्रदान की जाती है जिसके कारण उद्यमियों को साहूकारों एवं निजी स्त्रोतों से ऊंची ब्याज दर पर ऋण लेना पड़ता हैं। जिससे लघु उद्योगों की स्थापना करने की लागत बढ़ जाती हैं।

जिले के वाणिज्यिक बैकों द्वारा लघु स्तरीय उद्योगों को वित्तीय सुविधाएं तो दी गयी है, पर इन ऋणों की वसूली बैंको की सबसे बड़ी समस्या हैं, बैंकों की ऋणों की वसूली हमे ाा ही अर्पाप्त व असंतोशजनक रही हैं। निम्न तालिका से यह स्पश्ट है :–

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

तालिका 3

बैंको के ऋणों की वसूली की स्थिति का विवरण

(राशि लाख रू. में)

क्रं.	बैंक का नाम	दर्ज वसूली प्रकरण		वसूली		लंबित	
		संख्या	राशि	संख्या	राशि	संख्या	राशि
1	इलाहाबाद बैंक	133	11.63	5	0.9	128	10.73
2	बैंक ऑफ बड़ौदा	96	57.4	32	13.68	64	43.72
3	बैंक ऑफ इंडिया	461	82.48	5	3.21	456	89.28
4	बैंक ऑफ महाराष्ट्र	125	38.58	18	1.52	107	37.07
5	सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया	153	88.88	53	3.97	100	84.91
6	देना बैंक	1115	443.45	97	62.82	1018	380.6
7	ओरियेन्टल बैंक ऑफ कॉमर्स	185	49.17	11	5.19	174	43.98
8	स्टेट बैंक ऑफ इंडिया	2880	425.97	396	55.85	2484	370.1
9	यूनियन बैंक	258	28.27	7	0.79	251	27.48
10	पंजाब नेशनल बैंक	3715	128.15	29	3.98	3686	124.2
11	जिला केन्द्रीय सहकारी बैंक	361	363.05	195	110.89	166	252.2
12	दुर्ग राजनांदगांव ग्रामीण बैंक	2720	413.8	13	3.16	2707	410.6
		12202	2130.83	861	265.96	11341	1874.9

स्त्रोतः– अग्रणी बैंक (देना बैंक) राजनांदगांव जिला स्तरीय समीक्षा समिति की बैठक दिनांक 16.7.2013 पृष्ठ क्रं. 11

सुझाव

1. लघु उद्योगों को वित्तीय सहायता पर्याप्त मात्रा में बिना विलंब के बैंकों द्वारा प्रदान की जानी चाहिए।
2. जिले में जो लघु उद्योग हैं उनके द्वारा निर्मित वस्तुओं के विपणन की व्यवस्था उसी क्षेत्र में होने से उनके विक्रय से राि ा भीघ्र प्राप्त हो जाने से उनकी वित्तीय आव यकताओं की पूर्ति हो सकती हैं।
3. वाणिज्यिक बैंकों द्वारा लघु उद्योगों को उनकी मांग के अनुरूप ही कार्य ील पूंजी उपलब्ध करायी जानी चाहिए।
4. लघु उघमियों को वित्तीय सुविधाओं की प्राप्ति हेतु 'भ्रश्टाचार' रूपी जिस समस्या को

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

सामना करना पड़ता है उन पर कड़ाई से रोक लगायी जानी चाहिए इस पर रोक लगाकर ही लघु उद्योगों का समुचित विकास किया जाना संभव हो सकेगा।

5. जिला उद्योग केन्द्र यह सुनि चत किया करें कि उनके द्वारा प्रेशित प्रकरणों पर वित्तीय संस्थाओं द्वारा भात–प्रति ात रा ि उपलब्ध करवायी गयी है या नहीं। यदि नहीं, तो उनके कारणों का पता लगाकर उपस्थित बाधाओं को दूर करने की व्यवस्था की जानी चाहिए।
6. जिले के सभी वाणिज्यिक बैंको द्वारा लघु उद्योगों के वित्त प्रबंधन हेतु प्रतिवर्श जो लक्ष्य निर्धारित किए जाते है उनकी पूर्ति भात–प्रति ात हो, यदि बैंक ऐसा नि चय कर ले तो जिले में इन उद्योगों का विकास और भी तीव्र गति से होगा।
7. ऋण वितरण करते समय बैंक ध्यान रखे कि जिन व्यक्तियों/संस्थाओं से ऋणों की वापसी की उम्मीद न हो ऐसे लोगों को ऋण प्रदान नही किया जाना चाहिए चाहे वह कितना भी प्रभाव ाली क्यों न हो। उसी प्रकार एक बार जिन्हे ऋण दे दिया गया है तो उससे ऋणों की वसूली नियमानुसार अनिवार्यतः की जानी चाहिए चाहे वह कितना भी प्रभाव ाली क्यों न हो।

इस प्रकार अध्ययन से ज्ञात समस्याओं व उसके निराकरण हेतु प्रस्तुत सुझावों पर यदि गंभीरता से अमल किया जाय तो राजनांदगांव जिले के वाणिज्यिक बैंको के माध्यम से लघु उद्योगों का विकास और भी तीव्र गति से होने लगेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. एनुअल क्रेडिट प्लान देना बैंक, राजनांदगांव 2010–2012
2. जिला सांख्यिकी पुस्तिका राजनांदगांव–2012
3. बैंक ऋण वसूली प्रबंध विविध आयाम – भयामलाल गोंड, डॉ.यादव (समाचार पत्र) दैनिक भास्कर रायपुर

■■■

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

राज्य की अर्थव्यवस्था : प्राथमिक क्षेत्र एवं कृषि की भागीदारी – (सन् 2004–05 से 2010–11 तक)

डॉ. एच.एस. भाटिया(सहा.प्राध्या.वाणिज्य डोंगरगढ़)
श्रीमति अनामिका तिवारी बिलासपुर

हमारे देश एवं प्रदेश की अर्थव्यवस्था कृषि पर आधारित है। 70% जनसंख्या का मुख्य व्यवसाय कृषि है। भारत के प्राण ग्रामों में बसते है, देश की आत्मा कृषि में है। कृषि हमारे देश में केवल जीविकोपार्जन का साधन या उद्योग धंधा ही नही है बल्कि अर्थव्यवस्था की रीढ़ की हड्डी है। देश के सकल घरेलू उत्पाद का 16.5% हिस्सा कृषि से प्राप्त होता है। छ.ग. राज्य में कुल घरेलू उत्पाद में कृषि की भागीदारी 13.35% है। कुल घरेलू उत्पाद में कृषि की भागीदारी में लगातार गिरावट निश्चित रूप से चिंता का विषय है। इसी उद्देश्य को मंथन करते हुए सन् 1926 में देश की कृषि एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था का अध्ययन करने हेतु रॉयल कमीशन का गठन किया गया। इस आयोग ने कृषि अनुसंधान, फसलोत्पादन, पशुपालन, वनविभाग, मछलीपालन, सहकारिता, ग्राम विकास, कृषि साख (विल), संचार व्यवस्था, कृषि बाजार व्यवस्था, शिक्षा एवं जन स्वास्थ्य से संबंधित थे।

राज्य की कृषि विकास दर में अत्यधिक उतार–चढ़ाव है। राज्य के कुल सकल घरेलू उत्पाद में भी कृषि की हिस्सेदारी निरंतर घटते जा रही है, राज्य के सकल घरेलू उत्पाद में वर्ष 2010–11 में प्रचलित भाव पर 13.35%की भागीदारी रही।

प्राथमिक क्षेत्र का राज्य सकल घरेलू उत्पाद में हिस्साः

सकल घरेलू उत्पाद में स्थिर भावों(2004–05) के आधार पर हिस्सेदारी :

क्रं.	वर्ष	प्राथमिक क्षेत्र	द्वितीयक क्षेत्र	तृतीयक क्षेत्र	कुल योग
1	2004 & 05	32-43%	33-12%	34-43%	100%
2	2005 & 06	34-75%	29-74%	35-49%	100%
3	2006 & 07	31-34%	35-31%	33-33%	100%
4	2007 & 08	31-11%	35-15%	33-72%	100%
5	2008 & 09	28-11%	37-41%	34-47%	100%
6	2009 & 10	26-94%	37-82%	35-22%	100%
7	2010 & 11	25-33%	38-87%	35-91%	100%

आर्थिक सर्वेक्षण वर्ष 2010–11, आर्थिक एवं साख्यिकीय संचालनालय, छ.ग. शासन

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

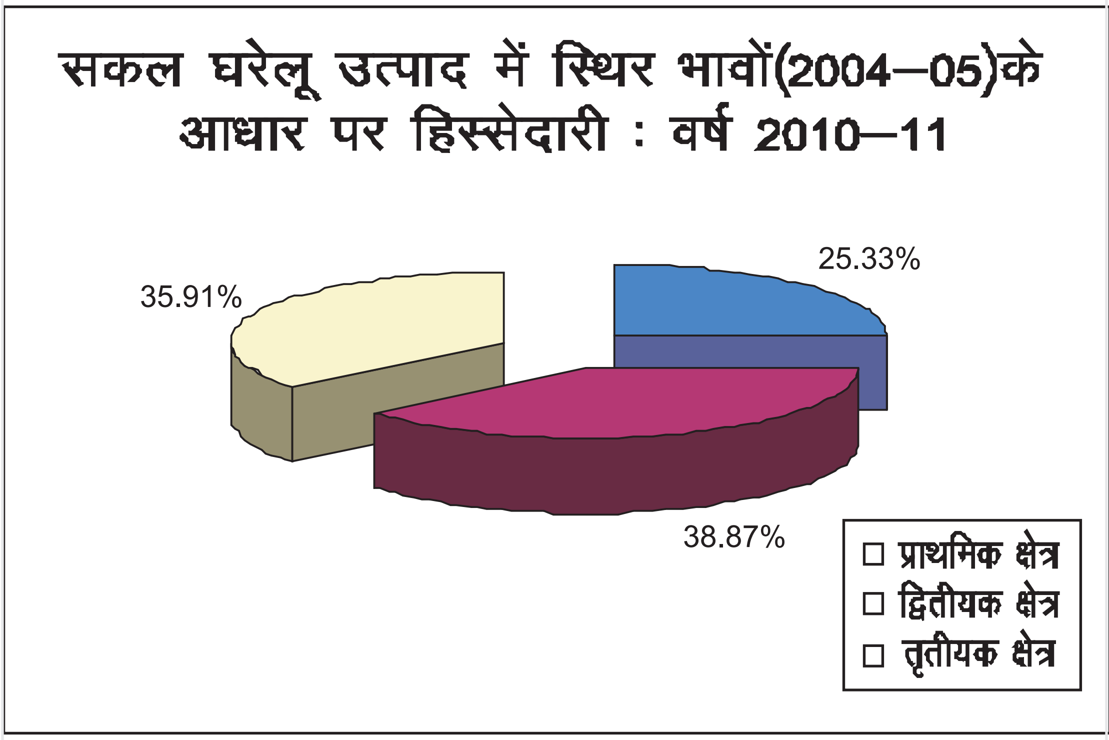

छत्तीसगढ़ का सकल राज्य घरेलू उत्पाद प्रचलित भावों के आधार पर हिस्सेदारी प्रतिशत में।

क्रं.	वर्ष	प्राथमिक क्षेत्र	द्वितीयक क्षेत्र	तृतीयक क्षेत्र	कुल योग
1	2004&05	32-43%	33-312%	34-43%	100%
2	2005&06	35-44%	29-24%	35-30%	100%
3	2006&07	32-02%	35-44%	32-53%	100%
4	2007&08	33-12%	34-45%	32-42%	100%
5	2008&09	28-87%	38-32%	32-79%	100%
6	2009&10	26-95%	38-22%	34-81%	100%
7	2010&11	25-13%	38-94%	35-91%	100%

आर्थिक सर्वेक्षण वर्ष 2010–11, आर्थिक एवं सांख्यिकीय संचालनालय, छ.ग. शासन,

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

सकल घरेलू उत्पाद में स्थिर भावों(2004–05)के आधार पर हिस्सेदारी : वर्ष 2010–11

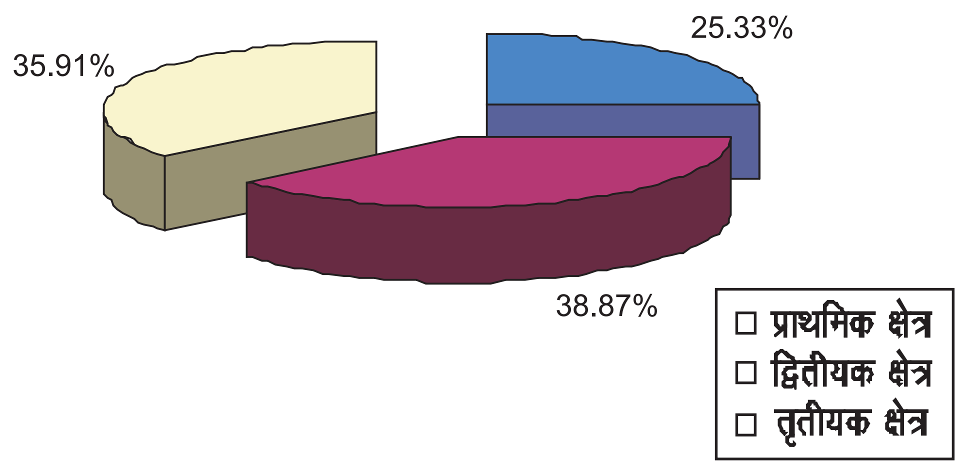

सकल घरेलू उत्पाद में कृषि, पशुपालन एवं मत्स्यपालन की भागीदारी :

छत्तीसगढ़ कृषि प्रधान प्रदेश है, हमेशा से कृषि राज्य की प्राथमिकता में रही है, आगे भी रहेगी। कृषि क्षेत्र की गिरती भागीदारी नीतिकारकों के लिये चिन्ता का विषय है।

कृषि (पशुपालन सहित) एवं मत्स्यपालन की सकल घरेलू उत्पाद में प्रचलित भाव पर एवं स्थिर (2004–05) भाव पर भागीदारी :

क्रं.	वर्ष	प्रचलित भाव पर कृषि (पशुपालन एवं मत्स्यपालन सहित)	स्थिर(2004–05) भाव पर
1	2004&05	15-84%	15-84%
2	2005&06	7-80%	18-01%
3	2006&07	15-50%	15-93%
4	2007&08	17-08%	15-23%
5	2008&09	16-86%	13-25%
6	2009&10	14-40%	13-06%
7	2010&11	13-03%	12-30%

आर्थिक सर्वेक्षण वर्ष 2010–11, आर्थिक एवं सांख्यिकीय संचालनालय, छ.ग. शासन,

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

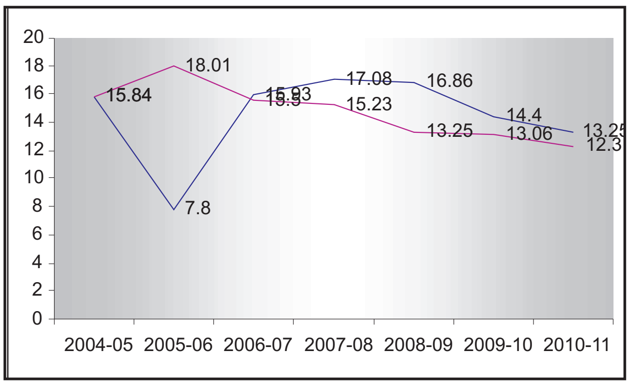

प्रचलित भाव पर कृषि (पशुपालन एवं मत्स्यपालन सहित) स्थिर (2004–2005) भाव पर

उपरोक्त ग्राफ से स्पष्ट होता है कि कृषि क्षेत्र की भागीदारी में वर्ष प्रतिवर्ष में उतार–चढ़ाव है। कृषि का विकास प्रतिवर्ष समान नहीं है।

उपरोक्त चित्र से निम्न तथ्य दृष्टिगत होते है।

कृषि क्षेत्र की भागीदारी में वर्ष प्रतिवर्ष में उतार–चढ़ाव है।कृषि का विकास प्रतिवर्ष समान नहीं है। कृषि क्षेत्र वर्षा आधारित होने के फलस्वरूप किये गये प्रयासों का प्रतिफल अपेक्षा अनुरूप प्राप्त होता/नहीं होता है।

प्रचलित भावों पर कृषि क्षेत्र में वृद्धि :

वर्ष 2009–10 में प्रचलित भावों पर राज्य का सकल घरेलू उत्पाद 1,09,82,343 लाख रू. था, जिसमें 18.11% वृद्धि के साथ वर्ष 2010–11 में 1,29,71,754 लाख रू. का अनुमान है। कृषि, पशुपालन एवं मत्स्यपालन सम्मिलित में वृद्धि 2009–10 की तुलना वर्ष 2010–11 में 9.49% अनुमानित है।

प्रचलित भावों पर वर्षवार कृषि क्षेत्र की गतवष की तुलना में वृद्धि प्रतिशत निम्नानुसार रही :

क्रं.	वर्ष	कृषि (पशुपालन सहित)	मत्स्यपालन	कृषि (पशुपालन एवं मत्स्यपालन सम्मिलित रूप में)
1	2005–06 (वर्ष 2004–05 की तुलना में)	26-2%	14-02%	25-37%
2	2006–07 (वर्ष 2005–06 की तुलना में)	8-68%	21-25%	9-44%
3	2007–08 (वर्ष 2006–07 की तुलना में)	33-85%	3-70%	31-75%
4	2008–09 (वर्ष 2007–08 की तुलना में)	14-75%	15-66%	14-63%
5	2009–10 (वर्ष 2008–09 की तुलना में)	0-30%	6-52%	0-65%
6	2010–11 (वर्ष 2009–10 की तुलना में)	9-54%	8-60%	9-49%

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

आर्थिक सर्वेक्षण वर्ष 2010–11, आर्थिक एवं सांख्यिकीय संचालनालय, छ.ग. शासन,

कृषि विकास के कुल उत्पादकता कारक :

कृषि विकास में 12 विभाग एवं 6 संस्थाएँ संलग्न है। इन विभागों एवं संस्थाओं के आपसी समन्वय से ही कुल उत्पादकता कारक को गतिशील किया जा सकता है।

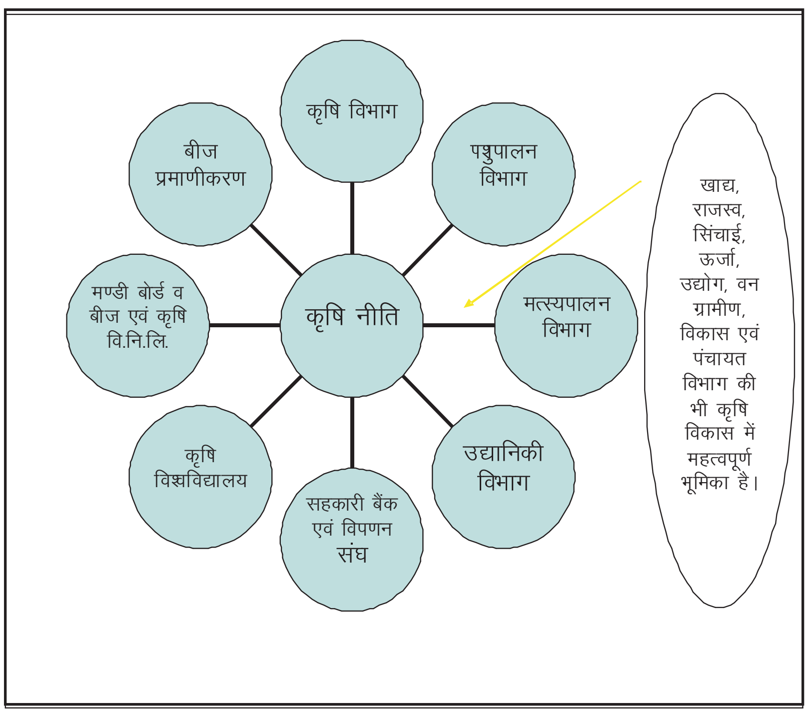

कृषि अनुसंधान, कृषि विस्तार सेवाएं, भूमि, जल, पोषक तत्व, जैव विविधता, सिंचाई, ऊर्जा, विपणन, सुदृढ़ अधोसंरचना आदि ही कुल उत्पादकता कारक (TFP) का मुख्य आधार हैं

अतः कुल उत्पादकता कारक (TFP) का विकास ही कृषि विकास का एक महत्वपूर्ण चरण है। कृषक को केन्द्र में रखते हुए कृषि विकास को गतिशील बनाने के लिये Total Factor Productivity का कुशल प्रबंधन एवं इस पर निवेश का विस्तार इस नीति का मुख्य आधार हैं

■■■

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

बस्तर में कोसा उद्योग के विकास की संभावनाएँ

डॉ. श्रीमती मोना चौहान
सहायक प्राध्यापक
हीरालाल काव्योपाध्याय
महाविद्यालय अभनपुर

श्वेता तिवारी
सहायक प्राध्यापक महाराजा अग्रसेन
इंटरनेशल महाविद्यालय रायपुर

कोसा उद्योग प्राचीन परम्परागत उद्योग है। इसमें कम पूंजी निवेश, सरल उत्पादन तकनीक, श्रम एवं प्रबंधन के सही समन्वय से बड़े स्तर पर रोजगार उपलब्ध करा पाने की क्षमता है। यह उद्योग न केवल लोगों की वस्त्र की आवश्यकता की पूर्ति कर वृहद पैमाने पर रोजगार उपलब्ध कराता है, बल्कि भारतीय कला, संस्कृति और विरासत की भी अभिव्यक्त करती है। इसी कारण देश के विभिन्न प्रान्तो के कोसा उद्योग अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति अर्जित कर रहे हैं।

छत्तीसगढ़ का बस्तर क्षेत्र आदिवासी बहुल सघन वन क्षेत्र है, जो आज भी आधुनिक शिक्षा, संस्कृति, रहन सहन से दूर है। यह क्षेत्र खनिज संपदा से परिपूर्ण होने के कारण यहाँ उसके दोहन में होड़ लगी है। आदि काल से चले आ रहे लोगो के रोजगार छिनते जा रहे है बेकारी, गरीबी और स्थानीय जनता प्रभावशाली लोगों के प्रभुत्व के नीचे दबती हुई विद्रोही हो गई है।

बस्तर संभाग में जिला जगदलपुर मुख्यालय में रेशम उद्योग वर्ष 1962 से प्रारम्भ किया गया। इनके अंतर्गत एक कोसा प्रक्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र व 1967 में कोसा केन्द्र की स्थापना की गई। वर्ष 1984—85 में जिलों में 19 तसर एवं 31 शहतूत पर आधारित केन्द्रो की स्थापना की गई साथ ही योजनानुसार रेशम उत्पादन एवं विकास के लिये जिलों में क्षेत्रीय उपसंचालक, सहायक संचालकों की स्थापना की गई।

छत्तीसगढ़ प्रदेश में टसर रेशम ककून एवं वस्त्र निर्माण का कार्य परम्परागत रुप से सदियों से चला आ रहा है। वर्तमान में प्रदेश में टसर, मलबरी, ईरी एवं धागाकरण का कार्य संपादित किया जाता है। प्रदेश में रेशम गतिविधियों से ग्रामीण अंचल में निवास करने वाले अनुसूचित जाति, जनजाति एवं पिछड़ा वर्ग तथा गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वाले हितग्राही अंश कालिक रोजगार के साधन स्थानीय स्तर पर प्राप्त कर अपनी आय में वृध्दि कर रहे है प्रदेश में रेशम योजनाओं के माध्यम से लगभग 75000 हितग्राही जीविकोर्पाजन के कार्य से जुड़े हुए हैं ।

छत्तीसगढ़ में रायगढ़, चांपा, जांजगीर एवं बिलासपुर तथा बस्तर जिले के वनों में कोसाफल प्राकृतिक रुप से बहुतायत में उपलब्ध है। प्रदेश में टसर कृमि पालन का

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

कार्य परंपरागत है। राज्य सरकार द्वारा वन आधारित ग्रामोद्योग को बढावा देने के निर्णय के अनुरुप संचालित योजनाओ के माध्यम से अनुसूचित जाति, जनजाति एवं अन्य गरीब वर्ग के हितग्राहियो को रोजगार उपलब्ध कराया जा रहा है। भारत में पाई जाने वाली चार प्रकार के रेशम प्रजातियों में से छत्तीसगढ में तीन प्रकार की रेशम प्रजातियो टसर, मलबरी, ईरी के उत्पादन का गौरव हासिल है।

बस्तर संभाग वनांच्छादित क्षेत्र है यहॉ पर्याप्त मात्रा में प्राकृतिक रुप से टसर कीट प्रजातियॉ एवं इसके खाद्य पौधे जैसे साल, साजा, धौवड़ा, बेर, सिन्हा इत्यादि उपलब्ध है बस्तर संभाग में रैली कोसा नैसर्गिक रुप से विकसित होता है साथ ही प्राकृतिक रुप से पाया जाने वाला रैली कोसा, टसर कोसा को संकर विधि द्वारा प्रजातियॉ तैयार कर पालतू बनाने का प्रयास किया जा रहा हैं। टसर कोसा के कीट को बीजागार केन्द्र में इल्ली के रुप में विकसित कर पुनः साल वृक्षों पर रखा जाता है। यह इल्ली जंगल में अपना कोसा तैयार करती है।

बस्तर संभाग में रेशम उत्पादन कार्य को दो भागो में बांटा गया है :–

1. प्राकृतिक रेशम उत्पादन (टसर)
2. शहतूत पर आधारित रेशम उत्पादन

नैसर्गिक कोसा उत्पादन (जिलेवार)

क्र.	नैसर्गिक कोसा का नाम	जिला	क्षेत्र	उत्पादन संख्या लाख में
1	रैली	बस्तर	नानगुर,दरभा,पखनार,चिंगपाल,करपावंड, कोलावल, माचकोट, कोंडागांव, मर्दापाल, माकड़ी, अमरावती, फरसगांव, लंजोड़ा,ओरछा,छोटेडोगर, धौड़ाई, नारायणपुर, कुरुसनार, बेनूर, बड़ेडोगर, कोकोड़ी	600.00
		दन्तेवाड़ा	बारसूर, दंतेवाड़ा, तोंगपाल, छिन्दगढ़	75.00
		कांकेर	तोड़ोकी, अंतागढ़, कोयलीबेड़ा, आमाबेड़ा	25.00

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

2	लरिया	रायपुर	गरियाबंद, धवलपुर, मैनपुर, तौरेंगा, छुरा	30.00
		धमतरी	नगरी,सिहावा, सांकरा, हुगली, गटासिल्ली,	35.00
		राजनांदगांव	साल्हेवारा क्षेत्र	5.00
		कबीरधाम	चिल्फीघाटी क्षेत्र	5.00
		कोरिया	जनकपुर क्षेत्र	5.00
		जशपुर	जशपुर क्षेत्र	2.00
		सरगुजा	अंबिकापुर क्षेत्र	2.00
3	बरफ	रायपुर	तिल्दा, धरसीवां, बलौदाबाजार, आरंग, एवं निमोरा क्षेत्र,	40.00
		धमतरी	कुरुद एवं धमतरी, विकास खंड के अर्जुन, बाहुल्य क्षेत्र एवं केरेगांव(नगरी) के साजा बाहुल क्षेत्र	50.00
		दुर्ग	पाटन, गुडंरदेही, बालोद एवं गुरुर विकास खंडो में	40.00
		राजनांदगांव	डोगरगढ़, डोंगरगांव, छुरिया, छुईखदान, विकास खंडो में	2.00
		महासमुंद	बागबाहरा विकास खंड	5.00
		बिलासपुर	मरवाही,पेंन्ड्रारोड क्षेत्र	2.00
		जांजगीर	जांजगीर क्षेत्र	2.00

विकासशील छत्तीसगढ़ राज्य में कोसा उद्योग के संवर्धन के लिये पर्याप्त श्रमशक्ति, वनक्षेत्र, उपयुक्त खाद्य, पौधें उपलब्ध है। कोसा उत्पादन एक रोज़गार प्रधान, कृषि एवं वन आधारित ग्रामीण कुटीर उद्योग है। छत्तीसगढ़ में कोसा कृषिपालन एवं धागाकरण तथा वस्त्र निमार्ण कार्य परंपरागत रूप से एक कुटीर उद्योग के रूप में चल रहा है। आवश्यकताओं के अनुरूप प्रौद्योगिकी के विकास व हस्तांतरण के साथ संभावनाओं को पहचानते हुए, कोसा उद्योग व इससे जुड़े जनजातियों एवं कमजोर वर्ग का सामाजिक व आर्थिक उत्थान को नई दिशा देना संभव हो सकेगा। छत्तीसगढ़ प्रदेश में विभागीय कोसा केन्द्रो में 4556 हेक्टेयर कोसा कृमि के खाद्य पौधे उपलब्ध है केन्द्रों के समीपस्थ वन खण्डों में लगभग 1500 हेक्टेयर कोसा कृमिपालन हेतु चिन्हित किया गया है जहाँ से वर्तमान में लगभग 4.38 करोड़ पालित कोसा का उत्पादन

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

ग्रामीणो द्वारा किया जा रहा है। उसी प्रकार नैसर्गिक रैली कोसा के खाद्य वृक्ष साल क्षेत्र के 9844 हेक्टेयर मे विभागीय गतिविधियाँ चल रही है जहाँ से वनवासियों के द्वारा प्रतिवर्ष लगभग 8.09 करोड़ कोसा का संग्रहण कर निकट के हाट बाजारों में बेचा जा रहा है। जिससे उन्हे कृषि के अलावा अतिरिक्त आमदनी प्राप्त हो रही है। प्रदेश में बस्तर, कवर्धा, धमतरी, रायपुर, बिलासपुर, सरगुजा, कोरबा एवं जशपुर जिलों मे साल वनखण्ड प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। एवं इस योजना में 38802 हितग्राही संलग्न है। इस प्रकार इस योजना से कृषि के अलावा रू. 5212 प्रति व्यक्ति औसत आय होती है।

उत्पादन एवं ग्रामीणों को अतिरिक्त आय प्रदान करने हेतु वर्ष 2015–16 तक की कार्ययोजना :–

छत्तीसगढ़ शासन ग्रामोद्योग विभाग (रेशम प्रभाग) ने कोसा उत्पादन एवं लाभांन्वित हितग्राहियों की संख्या में आशाजनक वृद्धि हेतु ग्रामस्तरीय सुलभ नियोजन कर कार्य योजना बनाई है। कार्ययोजना का लक्ष्य वर्ष 2015–16 तक प्राप्त किया जाना है। कोसा उत्पादन की योजना अनुसार तुलनात्मक स्थिति निम्नानुसार है–

कोसा योजना	वर्तमान स्थिति			वर्ष 2015–16 की स्थिति		
	उत्पादन	राशि रू.	हितग्राही	उत्पादन	राशि रू.	हितग्राही
डाबा कोसा योजना	4.38 करोड़	4.00 करोड़	20596	24.78 करोड़	24 करोड	1,16,000
रैली कोस योजना	8.09 करोड़	20.23 करोड़	38802	39.35 करोड़	98.37 करोड़	188734
योग	12.47	24.23	59398	64.13	122.37	304734

स्त्रोत : खादी एवं ग्रामोद्योग बोर्ड रेशम प्रभाग, रायपुर छ.ग.

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

संभाग में उत्पादित रैली एवं डाबा कोसाफलों के प्रसंस्करण से अतिरिक्त रोजगार सृजन हो सकता है। (2015 तक का उत्पादन आकलन के अनुसार) वर्तमान स्थिति में बस्तर संभाग से 98% रैली कोसा उत्पादन सीधे बाहर चला जाता है। यदि धागाकरण एवं वस्त्र निर्माण का कार्य यही हो तो संभाग को वर्ष 2015 तक 66.5 करोड़ वार्षिक आय प्राप्त होने की संभावना है।

विकास में आने वाली समस्याएं :–

1. रैली कोसा के अधिकतम संग्रहण की लालसा से वंशवृद्धि हेतु साल वृक्षों मे बीज कोसा फल नहीं छूट पाने के कारण प्रगुणन सकारात्मक नहीं हो पा रहा है।
2. रैली कोसा के विपणन पर शासकीय नियंत्रण न हो पाने के कारण संग्रहणकर्ता वनवासियों को व्यापक लाभ नहीं मिल पा रहा है। विपणन पूर्णतः व्यापारियों के द्वारा नियंत्रित होता है।
3. सभाग में संग्रहित समस्त कोसाफल बिना प्रसंस्करण के प्रदेश एवं प्रदेश के बाहर निर्यात हो रहा है। अतः प्रसंस्करण से होने वाले रोजगार सृजन का लाभ नहीं मिल पा रहा है।
4. ग्रामों में अन्य कल्याणकारी योजनाएं सरल सुलभ हो जाने के कारण कोसा कृमिपालन एवं संग्रहण जैसे पारंपरिक कठिन कार्य में वनवासियों की रुचि कम हो गई है।
5. कोसा उत्पादन एवं संग्रहण वनखण्डों में ही होता है। जहाँ वनक्षेत्र होने के कारण परिवहन व्यवस्था भी प्रतिकूल प्रभाव डालती है।
6. कोसा संग्रहण एवं कृमिपालन पारंपरिक उद्यम रहा है। प्राचीन काल से इसके उत्पादन, संग्रहण एवं विपणन का उल्लेख इतिहास में दर्ज है। नई पीढ़ी के द्वारा पुराने पारंपरिक कार्य की ओर ध्यान न देने के कारण भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। पुराने कोसा कृमिपालक एवं संग्रहणकर्ताओं की संख्या भी कम होती जा रही है। एवं पीढ़ी अंतराल के कारण नई पीढ़ी इस कार्य हेतु रूचि का आभाव प्रदर्शित करती है।

सुझाव एवं समीक्षात्मक निष्कर्ष :–

1. रैली कोसा के व्यापक उत्पादन हेतु गांव–गांव में जनजागरण अभियान चलाना आवश्यक है जिसमें ग्रामीणों का जानकारी दी जाएं कि वृक्ष के समस्त कोसे ना तोड़े बल्कि, अग्रिम वंश वृद्धि हेतु कम से कम 30 से 40% कोसाफल

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

वृक्षो मे ही छोड़ दे। रेशम विभाग को भी प्रतिवर्ष ज्यादा से ज्यादा संख्या में नैसर्गिक रैली कोसा का प्रगुणन केम्प लगाना चाहिए। इस हेतु विभाग द्वारा सघन विकास कार्यक्रम के तहत साल वन खण्डों में नर मादा तितलियाँ एवं निषेचित अण्ड़े छोड़े जाते है।

2. रैली कोसा के सदृढ़ विपणन हेतु एक विधिक व्यवस्था कायम करना आवश्यक है जिससे वनवासी व्यापारियों के शोषण से मुक्त भी हो सकेंगे। कोसा को राष्ट्रीकृत वनोपज की सूची में शामिल करना अनिवार्य है। राष्ट्रीकृत वनोपज हो जाने के कारण इसका विपणन संस्थागत होगा अर्थात लघुवनोपज सहकारी संघ या रेशम विभाग के अंतर्गत छत्तीसगढ़ खादी एवं ग्रामोद्योग बोर्ड (रेशम गतिविधि) द्वारा ही यह क्रय किया जा सकेगा। इस प्रक्रिया से व्यापारी अलग हो जाएंगें।

3. केन्द्र एवं राज्य सरकारों के द्वारा विभिन्न योजनाएं समूह आधारित चलाई जा रही है। स्थानीय समूह कोसा का क्रय करने के उपरान्त उसका प्रसंस्करण कर धागा एवं कपड़ा बनाये। जिससे संग्रहण, प्रसंस्करण एवं निर्मित माल से अलग–अलग स्थानीय रोजगार सुलभ हो सकेगा। अंतिम उत्पाद तक जाने पर उन्हे अत्यधिक लाभ मिलेगा जिसको वर्तमान स्थिति में व्यापारी–गण अर्जित कर रहे है।

4. रैली कोसा का प्रसंस्करण बस्तर में न होने के कारण वह प्रदेश के अन्य जिलों एवं प्रदेश के बाहर निर्यात हो जाता है यदि शासन समूह आधारित स्थानीय स्तर पर इन कोसाफलों का प्रसंस्करण कर धागा बनवाए तो वर्ष मे 3217 महिलाओं को 2,92,000 मानव दिवस रोजगार प्राप्त हो सकेगा। जिससे 5800 Kg धागा का बस्तर में ही निर्माण हो सकेगा। बस्तर के नए एवं पुराने बुनकरों को प्रारम्भिक एवं कौशल उन्नयन का प्रशिक्षण देकर वस्त्र भी बनाया जा सकता है।

5. डाबा कोसा के खाद्यवृक्षो की संख्या में निरन्तर गिरावट को दृष्टिगत करते हुए राजस्व व वनविभाग की भूमि पर महात्मा गांधी ग्रामीण रोजगार गारण्टी योजना BRGF, विभागीय मद से अर्जुना एवं साजा का सघन पौधरोपण किया जाना आवश्यक है।

6. कोसा उत्पादन में आ रही कमियो के कारकों के संबंध में प्राथमिकता के आधार पर जन जागरण किया जाना आवश्यक है।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

राष्ट्रीय स्तर पर टसर रॉ सिल्क की मांग 1200 मी. टन है। जबकि देश में मात्र 500 मी. टन रॉ सिल्क का उत्पादन हो रहा है। ऐसी स्थिति में आंतरिक मांग को पूरा करने में छत्तीसगढ़ कोसा उद्योग की भूमिका महत्वपूर्ण होगी। एस एल आर और वूल वर्थ जैसी प्रमुख कम्पनियों जो राज्य में (बस्तर में मुख्य रूप से) धागाकरण कार्य करने के इच्छुक है उनका पूर्ण सहयोग प्राप्त करना होगा।

औद्योगिकीरण के कारण बढ़ते पर्यावरण असंतुलन से विश्व में तापन का संकट बढ़ रहा है जैव विविधता विलुप्त होती जा रही है ऐसी स्थिति में छत्तीसगढ़ राज्य के आर्थिक विकास में पर्यावरण अनुकूल कोसा उद्योग का महत्वपूर्ण भूमिका है।

संदर्भित ग्रंथ सूची (BIBLIOGRAPHY)

1. साहू, डी.डी.– रायपुर जिले में हस्तकरघा उद्योग का विश्लेषणात्मक अध्ययन
2. छत्तीसगढ राज्य हाथकरघा विकास एवं विपणन वार्षिक सभा सहकारी संघ मर्यादित, रायपुर 2002–03
3. छत्तीसगढ़ राज्य हाथकरघा विकास एवं विपणन सहकारी संघ मर्या. रायपुर छत्तीसगढ़ पेज 30,31,32
4. प्रशासकीय प्रतिवेदन, ग्रामोद्योग विभाग, छत्तीसगढ़ शासन, रायपुर हाथकरघा बुनकर कल्याणकारी योजना ग्रामोद्योग संचालनालय (हाथकरघा प्रभाग) छत्तीसगढ़ रायपुर।
5. सार्वजनिक उपक्रमों में वस्त्र क्रय उपक्रम विभाग, छ.ग. शासन, रायपुर की नवीन व्यवस्था।

■■■

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

''छत्तीसगढ़ राज्य वन–विकास निगम लिमिटेड – एक अध्ययन''

डॉ. मधुलिका अग्रवाल
प्रो. दिव्या शुक्ला

छत्तीसगढ़ अंचल जिस प्रकार धान के अधिकाधिक उत्पादन के कारण ''धान का कटोरा'' कहा जाता है उसी प्रकार यह क्षेत्र वन संपदा की दृष्टि से भी पुरे देश में एक विशिष्ट एवं महत्वपूर्ण स्थान रखता है। वन किसी भी राष्ट्र की अति मूल्यवान संपदा होते हैं। अनेक महत्वपूर्ण उद्योगों के लिए कच्चे माल के स्त्रोत, इमारती तथा विभिन्न प्रकार की उपयोगी लकड़ीयॉं, औषधियॉं, जडी–बुटीयॉं तथा फलों की प्राप्ति वनों से ही होती है। वनों में संचित नमी अप्रत्यक्ष रूप से वर्षा कराने में सहायक होती है। वन पर्यावरण में व्याप्त प्रदूषकों को अवशोषित कर शुद्ध ऑक्सीजन प्रदान करते हैं। आज के औद्योगिक युग में बढ़ते पर्यावरण प्रदूषण एवं पारिस्थितिकी संकट में वनों का महत्व और भी अधिक बढ़ गया है। छत्तीसगढ़ राज्य में वन बहुलता एवं सघनता से विद्यमान है जिसके कारण यह प्रदेश अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पहचाना जाता है। कृषि खनन के पश्चात् वन राज्य शासन के राजस्व आय का प्रमुख स्त्रोत है।

छत्तीसगढ़ राज्य का भौगोलिक क्षेत्रफल 135,224 वर्ग किलोमीटर है प्रदेश का वन क्षेत्रफल लगभग 59772.389 वर्ग किमी. है जो कि प्रदेश के भौगोलिक क्षेत्रफल का 44.2% है। छत्तीसगढ़ राज्य वन क्षेत्रफल की दृष्टि से देश में तीसरे स्थान पर है। इस प्रकार प्रदेश का वन क्षेत्रफल देश के वन क्षेत्रफल का लगभग 12.26 % है।

छत्तीसगढ़ वनों की दृष्टि से सम्पन्न राज्य है। देश के अन्य राज्यों की तुलना में यहॉं वन–क्षेत्र अत्यधिक है। असम के बाद देश में सर्वाधिक वनक्षेत्र छत्तीसगढ़ में ही है। राज्य में संरक्षित वन, आरक्षित वन और अवर्गीकृत वन हैं।

स्वर्गीय पं. जवाहरलाल नेहरू का कथन है, ''उगता हुआ वृक्ष प्रगतिशील राष्ट्र का प्रतीक है।'' इसी संदर्भ में चटरबक लिखते हैं ''वन राष्ट्रीय संपदा है तथा किसी राष्ट्र के विकास के लिए वनों की नितान्त आवश्यकता होती है। यह केवल ईधन के लिये लकड़ी ही प्रदान नहीं करते वरन एक बड़ी संख्या में कच्चा माल तथा राष्ट्र की आय के स्त्रोत भी हैं।'' वनों से विभिन्न प्रकार के कन्दमूल, फल–फूल तथा बीज स्थानीय लोगों के भोज्य पदार्थ के रूप में उपयोग में आते हैं। वनों से उद्योगों के लिए कच्चे माल की प्राप्ति होती है। कागज, लाख, बीड़ी, कोसा, माचिस, अगरबत्ती आदि उद्योग वन पर ही आश्रित होते हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था में पशुओं का महत्वपूर्ण योगदान रहता है और पशुओं के लिए वनों से चारा प्राप्त होता है। वन आदिवासियों की आजीविका का महत्वपूर्ण साधन

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

है। पारिस्थितिक संतुलन बनाये रखने में वनों का होना अनिवार्य है। वनों का उपयोग करने से राजस्व एवं रॉयल्टी के रूप में प्रतिवर्ष सरकार को 50 करोड़ रूपये से अधिक की पूँजी प्राप्त होती है, वनों से विभिन्न प्रकार के वन्य–उत्पाद, इमारती लकड़ी, जलाऊ लकडी, बॉस, लाख, तेन्दूपत्ता, साल–बीज, फल, गोंद, कत्था, औषधियॉ, चमडा, रंगने के पदार्थ, शहद एवं मोम, तेल, रेशम, सुपाड़ी, चिरौंजी आदि प्राप्त होता है। पारिस्थितिक–संतुलन बनाये रखने में वनों का होना अनिवार्य है। वनों के संरक्षण के लिये ही राष्ट्रीय वन–नीति एवं राज्य की वन–नीति बनाई गई है।

छत्तीसगढ़ राज्य वन–विकास निगम लिमिटेड की स्थापना वनों का तेजी से ह्रास होने के कारण, वानिकी के क्षेत्र में क्रॉंति लाये जाने हेतु मूल्यवान प्रजाति के वृक्ष लगाने के सुझाव के लिये किया गया है। 24 (July) जुलाई 1975 को 20 करोड़ रूपये की अधिकृत पूँजी से मध्य–प्रदेश राज्य वन विकास निगम की स्थापना की गयी। मध्य–प्रदेश पुनर्गठन अधिनियम 2000 के प्रावधानों के अंतर्गत मध्य–प्रदेश राज्य वन विकास निगम को विभाजित कर छत्तीसगढ़ राज्य में अपना कार्य पूर्वानुसार जारी रखने के लिये छत्तीसगढ़ राज्य वन–विकास निगम लिमिटेड की स्थापना की गई।

छत्तीसगढ़ राज्य वन–विकास निगम लिमिटेड की पूँजीगत संरचना निम्न है –

अधिकृत – पूँजी 10 करोड़ रूपये है। चुकता – पूँजी में छत्तीसगढ़ शासन का हिस्सा – 5,62,09,600 और भारत शासन का हिस्सा – 9,2,40,000 है कुल चुकता पूँजी – 6,54,49,600 है ।

छत्तीसगढ़ शासन वन–विभाग की अधिसूचना कमांक / एफ – S – 2/वन/2001 दिनॉक 30 अप्रैल 2001 को निगम के गठन की अधिसूचना जारी की गयी उसके पश्चात् 1 मई 2001 से छत्तीसगढ़ वन–विकास निगम लिमिटेड का कार्य प्रारंभ हुआ। कंपनी एक्ट 1956 के प्रावधानों के अंतर्गत कम्पनियों का रजिस्ट्रार/म.प्र./छत्तीसगढ़ के द्वारा दिनॉक 22 मई 2001 को निगम का पंजीकरण किया गया तथा निगमन का प्रमाण – पत्र कमांक/UO1135 CT – 2001 SGC – 14669 जारी किया गया ।

छत्तीसगढ़ राज्य वन–विकास निगम लिमिटेड की स्थापना का मुख्य–उद्देश्य निम्नलिखित है –

1. पर्यावरण – सुधार हेतु मिश्रित प्रजातियों का रोपण करना।
2. वनों की उत्पादकता में वृद्धि हेतु बहुमूल्य वन प्रजातियों का रोपण करना।
3. गहन वन प्रबंधन द्वारा निम्न–कोटि के वनों को बहुमूल्य–प्रजातियों के वनों में परिवर्तित करना।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

4. वनों के तकनीकी प्रबंधन एवं सुधार हेतु वृहद स्तर पर सागौन का रोपण करना।
5. कम उत्पादन वाले वनों की उत्पादक क्षमता बढ़ाने हेतु सघन रोपण करना।
6. पर्यावरण के संपूर्ण विकास एवं सुधार में योगदान हेतु निगम द्वारा बिगड़े वन क्षेत्रों में सागौन, बॉस एवं अन्य मिश्रित प्रजाति के पौधों का रोपण किया जाता है।
7. प्रदेश के वन्य–प्राणी वर्ग का रख–रखाव संरक्षण एवं विकास करना।
8. वन–क्षेत्रों में जैव–विविधता बनाये रखना।
9. संस्थागत वित्त प्राप्त करने हेतु योजनाएँ बनाना।
10. जैव–विविधता एवं वित्तीय तौर पर वन–क्षेत्रों को उत्कृष्ट बनाने के उद्देश्य से मानव निर्मित वन तैयार करना।
11. खनिज – उत्पादकता अनुसार विभिन्न संस्थाओं से वित्तीय राशि प्राप्त कर उक्त खनन–क्षेत्रों में पर्यावरण सुधार हेतु वानिकीकरण करना।
12. अपेक्षाकृत कम गुणवत्ता एवं घनत्व वाले वन–क्षेत्रों की उत्पादकता एवं जैव विविधता को प्रोत्साहित करना।
13. खान–क्षेत्रों के पुनर्वास हेतु मिश्रित प्रजातियों का रोपण करना।
14. वन–क्षेत्रों को अधिकाधिक धनी समृद्ध एवं उपजाऊ बनाना जिससे कि आर्थिक स्थिति में सुधार हो।
15. उचित वन क्षेत्र में सघन प्रबंध प्रयोग नीति से वनों की उत्पादकता एवं गुणवत्ता को सुधारना, उपजाऊ बनाना एवं उनका विस्तार करना।

उपरोक्त उद्देश्यों के आधार पर छत्तीसगढ़ राज्य वन–विकास निगम निरंतर अपने उद्देश्य को प्राप्त करने की ओर बढ़ रहा है और उसकी निम्नलिखित परियोजनाएँ संचालित है।

1. सागौन एवं बॉस का व्यावसायिक रूप में वृक्षारोपण को बढ़ावा देना।
2. डिपॉजिट कार्य वृक्षारोपण करना।
3. सागौन वृक्षारोपण के क्षेत्र को जलीय करना है।
4. बॉस की उपज या पैदावार को बढ़ाना।
5. बिगड़े हुए साल–वनों का पुनर्वास करना।
6. बिगड़े बॉसों का पुनर्वास एवं सुधार करना।
7. राष्ट्रीय वनीकरण योजना का प्रारंभ।
8. सबई/सिसल का वृक्षारोपण करना।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

9. केन्द्रीय – रोपणियाँ स्थापित करना अच्छे किस्म के पौधे तैयार करने हेतु।

10. रोजगार – सृजन के अंतर्गत वानिकी कार्यों जैसे वृक्षारोपण, वृक्षों की कटाई, वन–मार्ग मरम्मत इत्यादि में स्थानीय ग्रामीणों को पर्याप्त रोजगार उपलब्ध कराया जाता है।

इसके अतिरिक्त वनों के विकास के संबंध में छत्तीसगढ़ – राज्य वन विकास निगम की विभिन्न प्रकार की परियोजनाएँ संचालित है। इसके अलावा वन–ग्राम विकास योजना, विशेष पिछड़ी जनजातियों का विकास, उच्च तकनीक रोपण, अनुसंधान एवं विस्तार कार्यक्रम, वनौषधियों का विकास, संयुक्त वन–प्रबंधन आदि योजनाएँ सम्मिलित हैं।

इसके अतिरिक्त छत्तीसगढ़ राज्य वन–विकास निगम लिमिटेड द्वारा प्रतिवर्ष लीज–रेन्ट राज्य–शासन को दिया जाता है, जिसमें लगातार वृद्धि हो रही है और आर्थिक–स्थिति में भी सुधार हो रहा है लाभ में निरंतर वृद्धि हो रही है। इस प्रकार छत्तीसगढ़ राज्य वन–विकास निगम लिमिटेड द्वारा गैर वानिकी क्षेत्रों में वनों का विस्तार किया जाना, पारिस्थितिक–तंत्र में संतुलन स्थापित करना, वनाश्रित समुदाय का उत्थान करना, उन्नत तकनीक से उन्नत गुण श्रेणी के बीज तथा पौधे तैयार करना, ''फारेस्ट – क्राइम–ब्यूरो'' का गठन करना, रतनजोत पौधों के रोपण हेतु कार्य करना, खदानी क्षेत्रों का पुनर्वास करना इत्यादि जिससे की राष्ट्र की वन–सम्पदा का उचित रूप में देखभाल हो सके।

छत्तीसगढ़ राज्य वन–विकास निगम द्वारा वनों को संरक्षित करने के लिये अनेक कार्य किये जा रहे हैं लेकिन निगम को हस्तांतरित वन–क्षेत्रों में रोपण सुरक्षा एवं रख–रखाव के अतिरिक्त अन्य कार्य जैसे भूमि एवं जल संरक्षण कार्य आदि वित्तीय संसाधनों के अभाव में नही कराये जा रहे हैं। बिगडे बाँस वनों के सुधार कार्य में व्यय निरंतर बढ़ते गये किन्तु उनमें सुधार उद्देश्य के अनुरूप नही हुआ है। वन–विकास निगम को बायो–डीजल प्राधिकरण के अंतर्गत पर्याप्त राशि उपलब्ध नही हो पाया है। वनों की कमी का प्रमुख कारण वनों को राजस्व प्राप्ति का साधन मानना है। इसके अतिरिक्त लघु–वनोपजों पर आधारित उद्योग – सरकारी सहायता के बिना एवं वित्त के अभाव मे विकास नही कर पा रहे हैं। बहुमूल्य इमारती लकड़ियों एवं वनोपज के अवैध व्यापार पर शासकीय प्रतिबंधात्मक नीतियाँ कुशलतापूर्वक लागू नहीं हो पा रही हैं।

''राज्य की वन–संपदा एव जैव–विविधता को'' वर्तमान एवं भावी पीढ़ी के बहुआयामी उपयोग हेतु संरक्षित रखना एवं सवंर्धित करना आवश्यक है। इसके लिये गैर–वानिकी क्षेत्रों में वनों का विस्तार करना, वनाश्रित समुदायों के आर्थिक–उत्थान के लिये कार्य करना, वन्य–प्राणियों की सुरक्षा एवं संवर्धन हेतु संरक्षित क्षेत्रों का सर्वांगीण विकास करना, केन्द्र या राज्य या बैंक से प्राप्त राशि को विभिन्न प्रकार की समितियों को कार्य हेतु आबंटित करना, राज्य की समृद्ध जैव–सांस्कृतिक विविधता एवं विरासतों का संरक्षण करना, पारिस्थितिकीय संतुलन बनाये रखना।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

इको–टुरिज्म और वन–संरक्षण के प्रति लोगों में जागरूकता लाना। विशेष प्रकार की पिछड़ी जनजातियों का विकास करना तथा इन्हें मूलभूत सुविधा उपलब्ध कराना। वानिकी में इलेक्ट्रॉनिक – प्रशासन एवं सूचना प्रौद्योगिकी का विशेष महत्व है। इस प्रकार हम यदि अपने राज्य छत्तीसगढ़ को विकास की ओर आगे ले जाना चाहते हैं तो हमें वनों के संबंध में लोगों में जागरूकता लाना होगा तथा लोगों को अधिक से अधिक वन लगाने के लिये प्रेरित करना हैं ।

संदर्भ ग्रंथ सूची

अ) पुस्तकें

१. डॉ. कमलेश संतराम – छत्तीसगढ़ की भौगोलिक समीक्षा वसुन्धरा प्रकाशन (गोरखपुर)

२. श्री सुरजन ललित – संदर्भ छत्तीसगढ़ – देशबन्धु प्रकाशन विभाग

३. श्री सुरजन ललित – भूगोल तृतीय वर्ष – राम प्रसाद एण्ड संस

ब) प्रशासनिक प्रतिवेदन :–

१. छत्तीसगढ़ शासन वन – विभाग, वार्षिक प्रशासनिक प्रतिवेदन।

२. छत्तीसगढ़ विकास का मुक्तांकाश।

स) इंटरनेट वेबसाइट्स –

1. www.cgrvvn.nic.in

2. www.cgforest.nic.in

■■■

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

छ0ग0 राज्य सहकारी विपणन संघ मर्या0 रायपुर एक अध्ययन (धान उपार्जन के सन्दर्भ में)

डॉ. एच. पी. सिंह सलुजा
धर्मेंद्र सिंग
डॉ0 रवि ा सोनी

परिचय :–

छ0ग0 राज्य सहकारी विपणन संघ मर्या0 रायपुर एक भीर्ष संस्था है। सहकारी सोसायटी अधिनियम 1960 के अधीन छ0ग0 राज्य सहकारी विपणन संघ मर्यादित रायपुर दिनॉक 01 नवम्बर 2001 को अस्तित्व में आया। छ0ग0 राज्य सहकारी विपणन संघ का मुख्यालय वर्तमान में 880 सिविल लाइन्स रायपुर है तथा इसका कार्यक्षेत्र सम्पूर्ण छ0ग0 प्रदे ा में है। छ0ग0 में सहकारिता आंदोलन को सफलतापूर्वक संचालित करने के लिए, अपनी सदस्य समितियों को कृषि उपज के विपणन, कृषि आदानों की उपलब्धता एवं विपणन समितियों को मार्गद र्न प्रदान करने के उद्दे य से मार्कफेड की स्थापना की गई ळें

विपणन संघ के उद्दे य :–

01 सहकारी समितियों को संगठित करना
02 कृषिउपज को समर्थन मूल्य पर उपार्जित कर कृषकों को उनकी उपज का सही मूल्य दिलाना
03 कृषि आदान (खाद, बीज) आदि समय पर उपलब्ध कराना
04 उत्पादिक जिन्सों की यथोचित संग्रहण व्यवस्था करना
05 बिचौलियों एवं व्यापारियों के भाोशण से कृषकों को बचाना

अध्ययन के उद्दे य :–

01 धान उपार्जन व्यवस्था का अध्ययन करना
02 छ0ग0 में मार्कफेड की भूमिका का अध्ययन करना
03 धान उपार्जन कार्य में मार्कफेड की भूमिका का अध्ययन करना
04 छ0ग0 में मार्कफेड की ऑनलाइन धान उपार्जन व्यवस्था का अध्ययन

समयावधि :–

अध्ययन हेतू छ0 ग0 राज्य सहकारी विपणन संघ के वार्षिक प्रतिवेदन से विगत् 5 वर्ष (वर्ष 2007–08 से वर्श 2011–12) तक के आकड़ों का प्रयोग द्वितीय समंक के रूप में किया गया है।

मुख्य भाब्द :–

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

मार्कफेड, प्राथमिक सहकारी समिति, न्यूनतम समर्थन मूल्य, धान उपार्जन

❖ प्राध्यापक भास0वि0या0ता0(स्व0)महा विद्यालय
➢ सहायक प्राध्यापक भा. रानी रि म देवी महाविद्यालय खैरागढ़
सहायक प्राध्यापक कल्याण स्ना. महाविद्यालय भिलाई

धान उपार्जन कार्य में हितधारक संस्थायें :—

01 प्राथमिक कृषि सहकारी समितियां (**PACS**) :—

विपणन संघ द्वारा राज्य में स्थित 1333 प्राथमिक सहकारी समितियों के माध्यम से धान उपार्जन का कार्य किया जा रहा है। कृषक इन समितियों के द्वारा संचालित धान उपार्जन केंन्द्र में अपना धान न्यूनतम समर्थन मूल्य योजना के अन्तर्गत बेचता है और मूल्य का भुगतान चेक के माध्यम से तुरंत प्राप्त करता है। यह समितियां वास्तव में धान उपार्जन व्यवस्था की रीढ़ की हड्डी है।

02 केन्द्रीय सहकारी बैंक :—

राज्य भर में फैले धान उपार्जन केन्द्रों के निरीक्षण, पर्यवेक्षण का कार्य केन्द्रीय सहकारी बैंको द्वारा किया जाता है। धान उपार्जन व्यवस्था सही रूप से संचालित हो रही है या नहीं कृषकों को चेक के माध्यम से भुगतान तुरंत प्राप्त हो रहा है या नहीं आदि के निरीक्षण का दायित्व इन बैंको पर ही रहता है।

03 छत्तीसगढ़ राज्य नागरिक आपूर्ति निगम (**CGSCSC**) **NAN** :—

NAN के द्वारा न्यूनतम समर्थन मूल्य के अन्तर्गत उपार्जित धान मिलरों से कस्टम मिलिंग कराकर चावल विकेन्द्रीकृत उपार्जन योजना के अर्न्तगत भासन द्वारा निर्धारित मापदण्ड के अनुसार चावल उपार्जन जिला कार्यालयों के माध्यम से भासन के दि ा निर्दे ों के अन्तर्गत किया जाता है।

04 खाद्य विभाग छ0ग0 भासन :—

धान उपार्जन व्यवस्था एवं उपार्जित धान के कस्टम मिलिंग हेतु आव यक दि ा निर्दे ा खाद्य विभाग द्वारा दिये जाते हैं। मिलों का पंजीकरण, मिलिंग के लिये अनुमति देना तथा धान उपार्जन संचालन का भौतिक सत्यापन का कार्य खाद्य विभाग द्वारा किया जाता है।

धान उपार्जन व्यवस्था :—

राज्य भासन द्वारा धान उपार्जन हेतु छ0ग0 राज्य की सहकारी विपणन संघ को नोडल एजेंसी बनाया गया है। छ0ग0 राज्य सहकारी विपणन संघ द्वारा राज्य को 1333 प्राथमिक सहकारी समितियों के 1888 धान उपार्जन केन्द्रों के माध्यम से धान उपार्जन किया जाता है जिसका भुगतान केन्द्रीय सहकारी बैंक के माध्यम से चेक द्वारा किया जाता है।

धान उपार्जन व्यवस्था का कम्प्यूटरीकरण :—

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

वर्ष 2007—08 से ही मार्कफेड द्वारा धान उपार्जन व्यवस्था का कम्प्यूटरीकरण प्रारंभ कर दिया गया था वर्तमान में धान उपार्जन की सम्पूर्ण व्यवस्था कम्प्यूटरीकृत है राज्य की 1333 प्राथमिक समितियां पूरी तरह से कम्प्यूटर के माध्यम से विपणन संघ से जुड़ी है। धान उपार्जन की इस कम्प्यूटरीकृत व्यवस्था को कर राश्ट्रीय पुरस्कार भी प्राप्त हो चुके हैं।

धान उपार्जन को कम्प्यूटरीकृत व्यवस्था के प्रमुख तत्व

01 कृषकों द्वारा सीधे विक्रय :—

कृषकों द्वारा अपने नजदीक की समिति में जिसका वह सदस्य है तथा जहां उसने अपना पंजीयन करवा लिया है सीधे समिति को अपना धान (MSP) न्युनतम समर्थन मूल्य पर विक्रय करता है और वहीं उसे धान का मूल्य चेक के माध्यम तुरंत प्राप्त हो जाता है। इससे सदस्यों को अपने घर के पास ही धान विक्रय की सुविधा प्राप्त हो जाती है। जिससे उसे कई लाभ प्राप्त होते हैं जैसे— बिचौलियों से मुक्ति, धान का उचित मूल्य प्राप्त होना, परिवहन लागत में कमी, भण्डारण से छूटकारा आदि।

02 समिति से सीधे मिलर्स को धान प्रदाय :—

समिति द्वारा धान क्रय करने के प चात साथ ही साथ धान को वहीं से सीधे मार्कफेड के निर्दे ानुसार कस्टम मिलर्स को मार्कफेड द्वारा जारी डिलवरी चालान के माध्यम से प्रेषित कर दिया जाता है ताकि दोहरे परिवहन व्यय से बचा जा सके।

03 संग्रहण केन्द्र में प्रेषित धान :—

मिलर्स को धान प्रेषित करने के बाद भोश बचे हुए धान को विपणन संघ के भण्डारण केन्द्र में प्रेषित किया जाता है ताकि धान का सुरक्षित भंडारण किया जा सके एवं भविश्य में उस धान को कस्टम मिलिंग हेतु मिलर्स के पास प्रेशित किया जा सके एवं समितियों में आगे और धान क्रय हेतु स्थान उपलब्ध होते रहता है।

04 समितियों को प्रदाय प्रासंगिक व्यय एवं कमी ान :—

प्राथमिक समितियां जो धान उपार्जन कार्य में कार्यरत है उन्हे न्युनतम समर्थन मूल्य योजना के अन्तर्गत खरीदे गये कुल धान उपार्जन के मूल्य पर 2.5% की दर से राज्य भाासन द्वारा कमी ान साथ ही धान उपार्जन कार्य के लिये प्र ाासनिक व प्रासंगिक व्ययों की पूर्ति हेतु 9रूपये प्रति क्विंटल की दर से व्यय क्षतिपूर्ति प्रदान की जाती है।

05 प्रि ाक्षण :—

धान उपार्जन व्यवस्था को सुचारू रूप से संचालित करने हेतु मार्कफेड द्वारा धान उपार्जन कार्य से पूर्व सहकारी समितियों को प्रि ाक्षण प्रदान किया जाता है ताकि उत्तम किस्म का धान सुव्यवस्थित प्रणाली के माध्यम से खरीदा जा सके।

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

06 धान उपार्जन हेतु बारदानों की व्यवस्था :–

धान उपार्जन व्यवस्था पुरे राज्य में सुचारू रूप से संचालित करने हेतु मार्कफेड द्वारा बारदानों की व्यवस्था प्रत्येक समिति में अग्रिम रूप से सुनि चत की जाती है ताकि धान उपार्जन कार्य में कोई व्यवधान उत्पन्न न हो। धान उपार्जन हेतु उच्च किस्म के बारदाने संबंधित कंपनी से क्रय करके जिला विपणन कार्यालयों में आव यकतानुसार उपलब्ध कराये जाते हैं। जिला विपणन कार्यालय इन बारदानों को धान खरीदी केन्द्रों तक पहुंचाने की व्यवस्था सुनि चत करते हैं। वर्तमान में जूट बोरी खरीदने का कार्य D.G.S &D कंपनी द्वारा किया जा रहा है।

विगत वर्शों में उपार्जित धान का न्यूनतम समर्थन मूल्य

वर्श	सामान्य धान	ग्रेड "A" धान	बोनस
2007–08	645.00	675.00	100.00
2008–09	850.00	880.00	50.00
2009–10	950.00	980.00	50.00
2010–11	1000.00	1030.00	50.00
2011–12	1080.00	1110.00	220.00

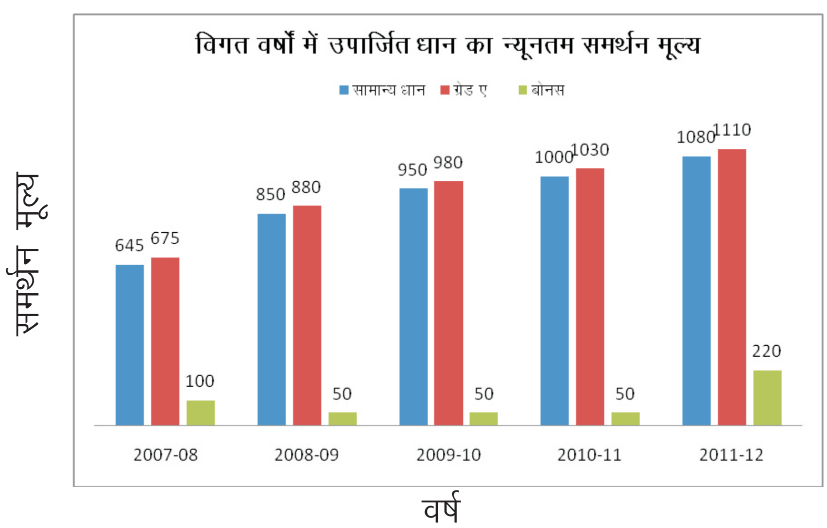

स्त्रोत – छ0ग0 राज्य सहकारी विपणन संघ मर्यादित रायपुर

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

विगत वर्षों में छ0ग0 राज्य विपणन संघ द्वारा उपार्जित धान की मात्रा

वर्श	धान का क्रय (मात्रा मेट्रिक टन में)	गतवर्श की तुलना में वृद्धि या कमी (मात्रा मेट्रिक टन में)	वृद्धि या कमी का प्रति ात
2007–08	31.51	–	–
2008–09	37.47	+5.96	+18.91:
2009–10	44.23	+6.76	+18.04:
2010–11	51.16	+6.93	+15.66:
2011–12	59.70	+8.54	+16.69:

स्त्रोत – छ0ग0 राज्य सहकारी विपणन संघ मर्यादित रायपुर वार्शिक प्रतिवेदन

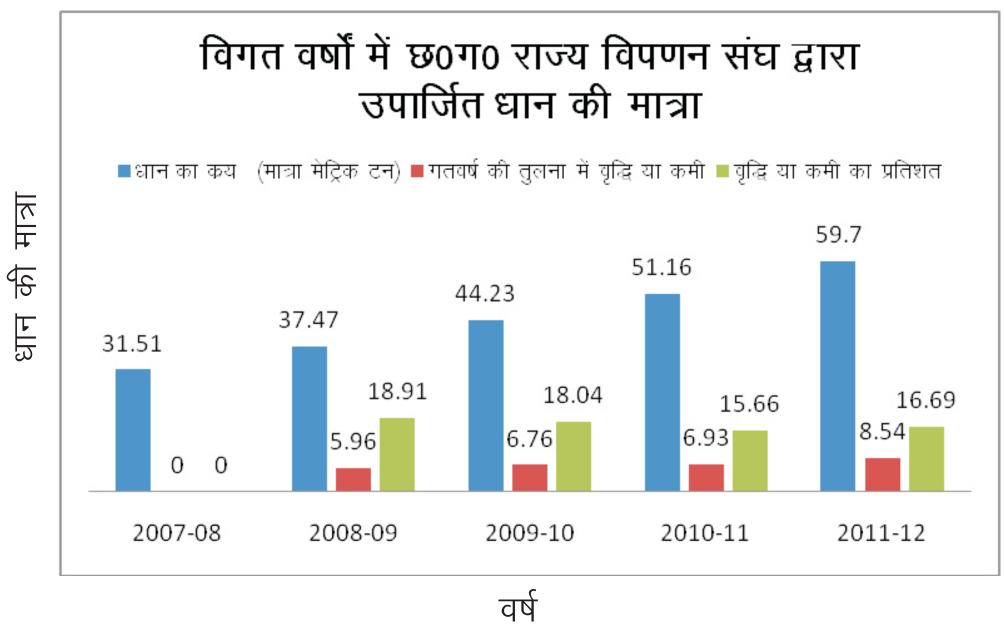

सारणी व ग्राफ के निरीक्षण से स्पष्ट है कि विपणन संघ का धान उपार्जन खरीफ वर्श 2007–08 में 31.51 मे0टन वर्ष 2008–09 में 37.47 मे0टन वर्ष 2009–10 में 44.23, 2010–11 में 51.16 तथा 2011–12 में 59.70 मे0टन है निरीक्षण से स्पष्ट है कि धान की उपार्जन मात्रा में निरंतर उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है। वर्ष 2008–09 में गत वर्ष 2007–08 की तुलना में 18.91 %

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

वर्ष 2009–10 में गत वर्ष 2008–09 की तुलना में 18.04 % इसी तरह वर्ष 2010–11 में 15.66 % तथा वर्ष 2011–12 में 16.69 % की वृद्धि दर्ज की गई वर्श 2008–09 में वृद्धि का प्रति ात सर्वाधिक 18.91 % रहा जबकि सबसे कम वृद्धि वर्ष 2010–11में 15.66 % प्रति ात दर्ज है।

विगत वर्शों में छ0ग0 राज्य विपणन संघ द्वारा उपार्जित धान की मात्रा धान खरीदी रूपयों में

वर्श	रा ि ा (रा ि ा करोड़ में)	गत वर्श की तुलना में वृद्धि (रा ि ा करोड़ में)	वृद्धि का प्रति ात
2007–08	2741.03	–	–
2008–09	3149.60	408.57	14.90:
2009–10	4396.22	1246.62	39.50:
2010–11	7301.32	2904.78	39.78:
2011–12	7809	508	6.95:

स्त्रोत – छ0ग0 राज्य सहकारी विपणन संघ मर्यादित रायपुर वार्शिक प्रतिवेदन रायपुर

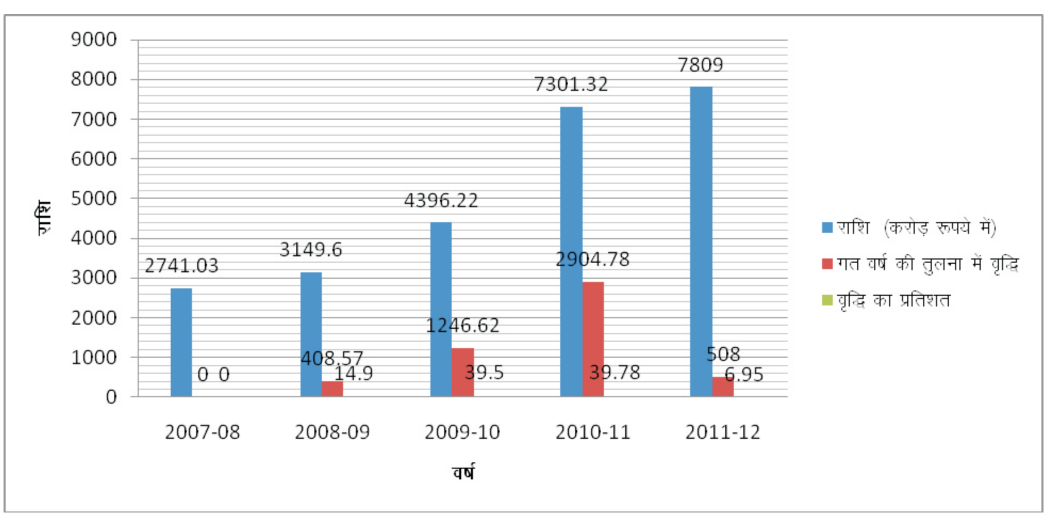

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

सारणी व ग्राफ के निरीक्षण से स्पश्ट है कि विपणन संघ द्वारा उपार्जित धान की राि ा में निरंतर वृद्धि हो रही है। वर्ष 2007.08 में उपार्जित धान की राि ा 2741.03 करोड़ रूपये वर्ष 2008.09 में 3149.60 करोड़ रूपये इसी तरह क्रम ाः वर्ष 2009.10, 2010–11 एवं 2011–12 में क्रम ाः 4396.22 करोड़, 7301.32 करोड़ एवं 7809 करोड़ रूपये मूल्य का धान उपार्जन किया गया वर्श 2008–09 में गत वर्ष 2007–08 की तुलना में 408.5 करोड़ रूपये इसी तरह वर्ष 2009–10 में 1246.62 करोड़ रूपये वर्ष 2010–11 में 2904.78 करोड़ रूपये तथा वर्ष 2011–12 में 2010–11 की तुलना में 508 करोड़ रूपये अधिक का व्यापार हुआ। सर्वाधिक वृद्धि वर्ष 2010–11 में दर्ज दि ात है। प्रति ात के आधार पर गत वर्श की तुलना में सर्वाधिक वृद्धि का प्रति ात 2010–11 में 39.78 तथा सबसे कम वृद्धि का प्रति ात वर्ष 2011–12 में 6.95 दि ात है।

मार्कफेड द्वारा धान उपार्जन का लक्ष्य व पूर्ति मात्रा (मेट्रिक टन)

वर्श	लक्ष्य (मात्रा टन में)	पूर्ति (उपार्जन मात्रा टन में)	पूर्ति का प्रति ात
2007–08	4400000	3158913	71.79:
2008–09	3500000	3747004	107.05:
2009–10	4000000	4427863	110.70:
2010–11	4500000	5113955	113.64:
2011–12	5000000	5970113	119.40:
	2140000	22417848	104.75:

स्त्रोत – छ0ग0 राज्य सहकारी विपणन संघ मर्यादित रायपुर वार्षिक प्रतिवेदन

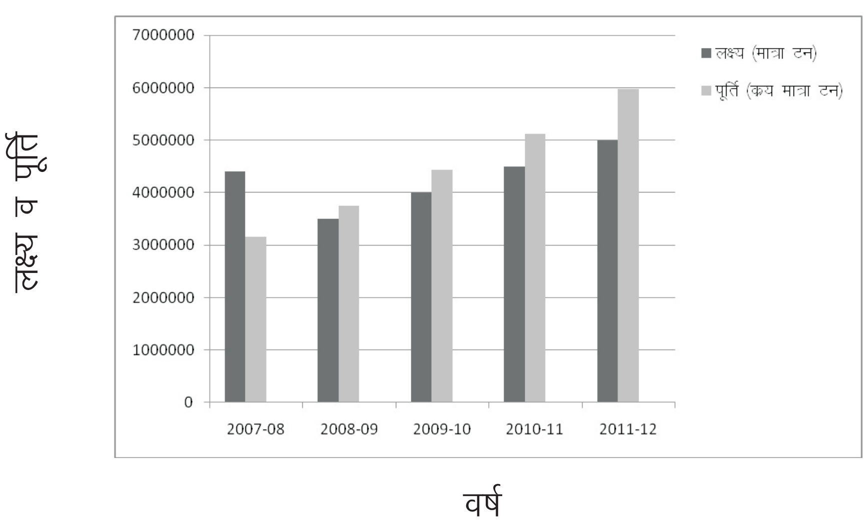

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

सारणी के निरीक्षण से स्पष्ट है कि विपणन संघ द्वारा धान क्रय मात्रा का लक्ष्य के प्रति पूर्ति प्रति ात वर्ष 2007–08 में 71.79% वर्ष 2008–09 में 107.05% ,वर्ष 2009–10 में 110. 70% ,वर्ष 2010–11 में 113.64% ,वर्श 2011–12 में 119.40% रहा। विपणन संघ प्रत्येक वर्ष केवल वर्ष 2007–08 को छोड़कर लक्ष्य से अधिक धान का उपार्जन किया है लक्ष्य के प्रति पूर्ति का सर्वाधिक प्रति ात वर्ष 2011–12 में 119.40% तथा सबसे कम वर्श 2007–08 में 71. 79%रहा।

निष्कर्ष :–

विपणन संघ द्वारा किये जा रहे धान उपार्जन के कार्य विगत पांच वर्षों के वि लेषण से स्पश्ट होता है कि न्यूनतम समर्थन मूल्य पर व्यवसाय केवल वर्ष 2007–08 में धान उपार्जन कार्य में निरंतर वृद्धि हो रही है संस्था अपने लक्ष्य की पूर्ति नहीं कर पायी। धान उपार्जन के लक्ष्य की पूर्ति पांच वर्षों में 102.36% रहा है। धान उपार्जन व्यवस्था में संघ का कार्य संतोषजनक कहा जा सकता है।

सुझाव :–

01 धान उपार्जन कार्य में मार्कफेड को और अधिक पर्यवेक्षण की व्यवस्था करनी चाहिए।

02 धान उपार्जन व्यवस्था में संलग्न विभिन्न संस्थाओं में आपसी तालमेल और समन्वय स्थापित किया जाना चाहिए ताकि धान उपार्जन व्यवस्था और अधिक सुचारू रूप से संचालित हो सके।

03 धान उपार्जन व्यवस्था में संलग्न कर्मचारियों को पर्याप्त मात्रा में प्रि ाक्षण प्रदत्त किया   जाना चाहिए ताकि व्यवस्था में गतिरोध उत्पन्न न हो।

04 उपार्जित किये धान को सुरक्षित रूप से भंडारण हेतु ताकि धान बारि ा के कारण नष्ट ना हो और अधिक गोदाम भंडारण व्यवस्था की जानी चाहिए।

05 धान उपार्जन व्यवस्था हेतु उत्तम एवं उचित मात्रा में बारदानों की व्यवस्था उपलब्ध कराना सुनि चत करना चाहिए।

सन्दर्भित ग्रन्थ :–

01 A Study on Co-Operative Marketing with Reference Of Markfad- Anil Kumar Soni and Dharmendra Singh

02 वार्शिक प्रतिवेदन छ0ग0 राज्य सहकारी विपणन संघ मर्या0 रायपुर वर्ष 2008–09 से 2012–13 तक

03 www.cgmarkfed.in

04 Computerization Of Paddy Procurement and Public Distribution System in Chhattisgarh- विवेक कुमार धांड, दिने ा कुमार श्रीवास्तव, सोम ोखर ए0के0 एवं राजीव जायसवाल

05 Dhan Kharidi Online – B.S. Ananth and Somshekhar.A.K.

07 A Case Study On Online Paddy Procurement System In Chhattisgarh- Anil Kumar Soni, Harjinder pal Singh Saluja.

■■■

DMV Journal
Annual Journal of Durga Mahavidyalaya, Raipur (C.G.)

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

परीक्षण–चिन्ता पर सम्मोहन चिकित्सा का प्रभाव

डॉ. संजय कुमार भारद्वाज
मनोवैज्ञानिक सलाहकार एवं सम्मोहन विशेषज्ञ,
आनंद नगर, रायपुर (छ.ग.)

सारांश

परीक्षण–चिन्ता से तात्पर्य ऐसी अवस्था से होता है जिसमें छात्र परीक्षा के दौरान चिन्ता अनुभव करता है। यह एक ऐसी मनोवैज्ञानिक स्थिति है जिसमें कोई व्यक्ति परीक्षा के पहले या बाद में एक तनाव सा महसूस करता है। इस दौरान मन में यह चिन्ता बनी रहती है कि परीक्षा के समय प्रश्न हल कर पाएगा या नहीं, परीक्षा के बाद अनुत्तीर्ण तो नहीं हो जाएगा ।

सम्मोहन नींद के समान एक शिथिलता की अवस्था होती है जिससे व्यक्ति अपने सामान्य पर्यावरणीय उद्दीपकों से सम्पर्क खो देता है। सम्मोहन के माध्यम से की जाने वाली उपचार पद्धति को सम्मोहन चिकित्सा कहते हैं।

प्रस्तुत शोध अध्ययन में एक मात्र समस्या यह अध्ययन करना है कि क्या सम्मोहन चिकित्सा से परीक्षण–चिन्ता स्तर में कोई कमी आती है ?

यह उपकल्पना की गई कि सम्मोहन चिकित्सा की सहायता से परीक्षण–चिन्ता स्तर में कमी आयेगी ।

सम्मोहन चिकित्सा के पूर्व छात्रों पर प्री–टेस्ट में परीक्षण–चिन्ता परीक्षण किया गया। इसके उपरांत उनमें से 40 छात्रों का चयन किया गया, इनको दो समूहों में बांटा गया – पहला 'नियंत्रित' समूह जिसमें 20 छात्रों को रखा गया तथा दूसरा 'प्रायोगिक' समूह जिसमें 20 छात्रों को रखा गया। दोनों समूहों में कुल 20–20 छात्रों को रखा गया। नियंत्रित समूह को बिना सम्मोहन चिकित्सा के तथा प्रायोगिक समूह को सम्मोहन चिकित्सा के साथ 21 सत्र तक रखा गया। इसके बाद दोनों समूहों पर पोस्ट–टेस्ट में परीक्षण–चिन्ता परीक्षण प्रशासित किया गया।

इस शोध अध्ययन में सम्मोहन चिकित्सा के पूर्व प्री–टेस्ट में परीक्षण–चिन्ता परीक्षण पर प्राप्त नियंत्रित समूह का मध्यमान 73.4 तथा प्रायोगिक समूह का मध्यमान 75.3 है जो दोनों समूह के उच्च परीक्षण–चिन्ता स्तर को दर्शाता है। प्रायोगिक समूह के सम्मोहन चिकित्सा के पश्चात किए गए पोस्ट–टेस्ट में परीक्षण–चिन्ता परीक्षण पर प्राप्त नियंत्रित समूह का मध्यमान 70.6 है जो उच्च परीक्षण चिन्ता स्तर को ही दर्शा रहा है तथा प्रायोगिक समूह का मध्यमान 64.65 है जो सामान्य परीक्षण–चिन्ता स्तर को दर्शाता है । दोनों समूहों के प्री.टेस्ट एवं पोस्ट टेस्ट परीक्षण प्राप्तांक को देखने से यह पता चलता है कि 'प्रायोगिक' समूह के छात्रों के

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

परीक्षण–चिन्ता स्तर में कमी आई है । इस तथ्य का प्रमाण दोनों समूहों का t मान 13.04 है जिसका सार्थकता स्तर .01 है।

कुंजी शब्द – परीक्षण–चिन्ता, सम्मोहन चिकित्सा

भूमिका

परीक्षण–चिन्ता से तात्पर्य ऐसी अवस्था से होता है जिसमें छात्र परीक्षा के दौरान चिन्ता अनुभव करता है। यह एक ऐसी मनोवैज्ञानिक स्थिति है जिसमें कोई व्यक्ति परीक्षा के पहले या बाद में एक तनाव सा महसूस करता है। इस दौरान मन में यह चिन्ता बनी रहती है कि परीक्षा के समय प्रश्न हल कर पाएगा या नहीं, परीक्षा के बाद अनुत्तीर्ण तो नहीं हो जाएगा ।

सम्मोहनावस्था कृत्रिम साधनों द्वारा उत्पन्न की गई नींद के समान एक अवस्था होती है जिसमें व्यक्ति अपने सामान्य पर्यावरणीय उद्दीपकों से सम्पर्क खो देता है। इस अवस्था में सम्मोहित पात्र सम्मोहनकर्त्ता के निर्देशों का पालन करने लगता है। सम्मोहन एक स्वाभाविक वैज्ञानिक क्रिया होती है ।

बेरोन (1992) के अनुसार

''सम्मोहन एक ऐसी अवस्था है जिसमें व्यक्ति दूसरों के सुझावों के प्रति अतिसंवेदनशील होता है और जिसमें वे कभी–कभी इस ढंग से व्यवहार करते हैं मानों वे स्तवधता में हो।''

सम्मोहन के माध्यम से किया जाने वाला उपचार पद्धति को सम्मोहन चिकित्सा कहते है।

समस्या

इस शोध अध्ययन में एक मात्र समस्या यह अध्ययन करना है कि क्या सम्मोहन चिकित्सा से परीक्षण–चिन्ता स्तर में कोई कमी आती है ?

उपकल्पना

यह उपकल्पना की गई कि सम्मोहन चिकित्सा की सहायता से परीक्षण–चिन्ता स्तर में कमी आयेगी ।

प्रतिदर्श

इस शोध अध्ययन में महाविद्यालय के बी.ए. प्रथम वर्ष के 40 छात्रों का चयन किया

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

गया जिनका परीक्षण–चिन्ता का स्तर उच्च था।

परीक्षण सामग्री

छात्रों के परीक्षा–चिन्ता स्तर के निर्धारण हेतु डॉ. वी.पी.शर्मा द्वारा निर्मित तथा मानकीकृत टेस्ट–एन्जॉयटी स्केल परीक्षण का प्रयोग किया गया।

प्रकिया

इस शोध अध्ययन में प्री–टेस्ट करने के पश्चात 40 परीक्षण–चिन्ता के छात्रों का चयन किया गया जिनको 20–20 की दो समूहों में विभाजित किया गया। पहला समूह नियंत्रित समूह तथा दूसरा प्रायोगिक समूह रखा गया । नियंत्रित समूह को बिना सम्मोहन चिकित्सा के तथा प्रायोगिक समूह को सम्मोहन चिकित्सा के साथ 21 सत्र तक रखा गया। इसमें सभी छात्रों को आरामदायक कुर्सी में बिठाकर पूरे शरीर को ढीला छोड़ने को कहा, फिर निर्देशों के माध्यम से क्रमशः नीचे से ऊपर प्रत्येक अंग को शिथिल करवाया, उसके बाद निर्देशों के माध्यम से सम्मोहन अवस्था में ले आया गया। उस अवस्था में उसे सकारात्मक निर्देश दिया गया। उसके बाद उन सभी छात्रों को सम्मोहन अवस्था से बाहर लाया गया। यह क्रिया 21 सत्र तक दोहरायी गयी। इसके बाद उन दोनों समूह पर पोस्ट–टेस्ट किया गया।

परिणाम एवं विवेचना

इस शोध अध्ययन में सम्मोहन चिकित्सा के पूर्व प्री–टेस्ट में परीक्षण–चिन्ता परीक्षण पर प्राप्त नियंत्रित समूह का मध्यमान 73.4 तथा प्रायोगिक समूह का मध्यमान 75.3 है जो दोनों समूह के उच्च परीक्षण–चिन्ता स्तर को दर्शाता है। प्रायोगिक समूह के सम्मोहन चिकित्सा के पश्चात किए गए पोस्ट–टेस्ट में परीक्षण–चिन्ता परीक्षण पर प्राप्त नियंत्रित समूह का मध्यमान 70.6 है जो उच्च परीक्षण चिन्ता स्तर को ही दर्शा रहा है तथा प्रायोगिक समूह का मध्यमान 64. 65 है जो सामान्य परीक्षा–चिन्ता स्तर को दर्शाता है । दोनों समूहों के प्री.टेस्ट एवं पोस्ट टेस्ट परीक्षण प्राप्तांक को देखने से यह पता चलता है कि प्रायोगिक समूह के छात्रों के परीक्षण–चिन्ता स्तर में कमी आई है । इस तथ्य का प्रमाण दोनों समूहों का t मान 13.04 है जिसका सार्थकता स्तर .01 है। प्रस्तुत अध्ययन में उपकल्पना की पुष्टि निम्न अध्ययनों से भी होती है Boutin et al.(1983), Sapp (1990), Ainsworth et al. (2010), Graham et al. (2010), Mathur and Khan (2011), Dundas et al. (2013).

सम्मोहन के माध्यम से व्यक्ति को गहन शिथिलता की अवस्था में ले जाया जाता है जिससे वह व्यक्ति तनाव मुक्त और गहन विश्रांति की अनुभूति करता है। अध्ययनों से यह ज्ञात होता है कि सम्मोहन अवचेतन मन को प्रभावित करता है। इसमें व्यक्ति के चेतन मन के माध्यम से अवचेतन मन को उभारा जाता है जिससे उसके अवचेतन मन में दमित भावनाएं,

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

भय, अन्तर्द्वन्द आदि बाहर निकल जाता है और व्यक्ति इस सन्दर्भ में दिये गये निर्देशों को अच्छी तरह से स्वीकार करता है तथा सम्मोहन अवस्था से बाहर आने के बाद भी उसका असर रहता है जो उसे उस समस्या से मुक्ति की ओर ले जाता है।

संदर्भ सूची

Ainsworth, H., Torgerson, D. J., Torgerson, C. J., Bene, J., Grant, C., Ford, S., & Watt, I. (2010). The effect of hypnotherapy on exam anxiety and exam performance: a pilot randomised controlled trial. Effective Education, 2(2), 143-154.

Baron. (1992). Psychology, 149.

Boutin, G. E. & Tosi, D. J.(1983). Modification of irrational ideas and test anxiety through rational stage directed hypnotherapy [RSDH]. Journal of Clinical Psychology 39 (3),382-391

Dundas, I., Hagtvet, K. A., Wormnes, B., & Hauge, H.(2013). Does self-hypnosis add to the effectiveness of a cognitive-behavioral intervention against test anxiety? Nordic Psychology. 65 (3), 224-241.

Graham, S., Vettraino, A., Seifeldin, R., Singal, B. (2010). A Trial of Vertial Hypnosis to Reduce Stress and Test Anxiety in Family Medicine Residents. Family Medicine. 42 (2), 85-86.

Mathur, S. and Khan, W. (2011) Impact of Hypnotherapy on Examination Anxiety and Scholastic Performance among School Age Children. Delhi Psychiatry Journal, 14(2), 337-342.

Sapp, M. (1990). Hypnotherapy and Test Anxiety: Two cognitive-behavioral constructs. The effects of hypnosis in reducing test anxiety and improving academic achievement in college students. Report. ERIC ID: ED328163

■■■

DMV Journal
Annual Journal of Durga Mahavidyalaya, Raipur (C.G.)

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

Environmental Pollution and natural calamities (with special reference to Phaillin Cyclone)

Dr. Abha Shukla*

Abstract :

Pollution is an undesirable changes in Physical. Chemical or biological characteristics of air, water and soil that may or will harmfully affect human, animal and plant life, Industrial progress, living conditions and cultural assets. Due to Pollution Global Warming problems seen in environment. The earth temperature has been increasing year after year and consequently drastic change like occurrence of tsunami, heavy rainfall in Mumbai, Kedarnath Sailab, Phillin Cyclone and Hailan storm have taken places. Disaster can cause losses both human and property. We cannot prevent disaster but from proper disaster management we can minimize losses.

Introduction :

Pollution is the unfavourable alteration of our environment, largely because of human activities. The word pollution is derived from the latin word “Pollutionem” means to “defile of make dirty”.

Pollution is caused by the addition of waste products of human activities to the environment when the waste products are not assimilated, decomposed or otherwise removed by the natural biological or physical processes of the biosphere, adverse effect may result as the pollutants which accumulate or get converted in to more toxic substance.

Pollutant is a physical or biotic component which adversely alters the environment some times natural events becomes so destructive and extreme that they turn to be hazardous. These events are known as natural calamities or disaster these

* Assistant Professor, Department of Commerce, Vivekanand Mahavidyalaya, Raipur (C.G.)

events are almost the resultant of the pollution, overexploitation of natural resources, Global Warming etc.

Flood, Famine, Earthquakes, Cyclones, landslides etc. are the disaster occurring naturally. And the preparation before the above events happened, to face the disaster, without less losses is disaster management.

Research Methodology :

(a) Purpose of study :-

(i) To find out the impact of pollution on Environment.

(ii) To find out the impact of the Phaillin storm on India Economy.

(iii) To assess the role of Disaster Management.

(b) Collection of data :-

The study is based on secondary data.

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

(c) Sources of data :-

Sources of data were the various journals, magazines, Books, Newspaper and related website.

Impact of pollution on environment :

The pollution is caused by the addition of waste products of human activities to the environment when the waste products are not assimilated, decomposed or otherwise removed by the natural, biological or physical processes of the biosphere, adverse effects may result as the pollutants which accumulate or get converted in to more toxic substance. Pollutants is harmful solid, liquid or gaseous substance present in such concentration in the environment which tends to be injurious for the whole living biota. Examples of pollutants which affect environments are :-

* Solid waste :- Garbage, rubbish, Ashes dead animals, demolition waste, mining waste etc.
* Liquid waste :- Sewage (human waste e.g. faecal matters, urines etc.) kitchen waste, soil wastes.
* Gaseous waste :- Smog gases (carbon monoxide SO2, NO2) Ozone, Hydrogen sulphides.
* Radio active wastes :- Argon 41, Cobalt 60, Krypton -85, Strontium -90 etc.
* Photo chemical oxidants :- Photo chemical smog, ozone, PB_2N etc.

There are so many factors responsible for environmental pollution and global warming but man is the biggest of them. The biggest problem we are facing today is the problem of pollution and consequently problem of natural calamities. Which can be over come by the joint efforts of people.

Natural Calamities and impact of Phaillin storm in Indian Economy :

Natural calamities or Disaster is a sudden adverse or unfortunate extreme event, which causes great damage to human beings as well as plant and animals. They are the results or responses of environmental hazards and are always viewed in terms of human beings.

Severe Cyclonic storm Phaillin struck the eastern coast of India on Oct. 2013 with all its fury, hitting remote villages, snapping power lines, felling trees and blowing away mud huts. Approximately Rs. 2400 crore paddy crops has destroyed and 5 lakhs tonne food grains ready for distribution affected by Cyclone. Industries were also disrupted because power and communication facilities totally disturbed Railway cancelled over 180 trains hitting transport of coal, iron-ore, Petroleum product and raw materials. All types of business and trades are affected by Phaillin in Odisha and Andhra Pradesh.

Role of Disaster Management :

Disaster and natural calamities can cause losses both human and property we can not prevent and stop disaster but we can minimize losses. The preparation before the above events happened, to face the disaster, without less losses is Disaster Management. Disaster comes in many forms. So the control plan should be as technical and complex as necessary to meet virtually an eventuality. The main target to disaster control plan is to ensure survival.

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

Findings and Results :

According to the report, the toll on the economy of the calamities that occurred in Asia in 2012 exceeded 10 billions U.S. dollars and that future disasters may represent a serious threat to the regions. A total of 83 disasters hit Asia from January to November of this year, leaving some 3103 people killed and some 15.1 billion US dollars in damages. About 64.5 million people were affected by these disasters across the region.

Conclusion :

Protection of environment is very essential for each and every one. To protect our environment we should also have environmental education. Every human being has the right to live in a quality environment and his fundamental duty is to protect the environment and its surroundings.

REFERENCE :

1. an.wikipedia.org/wiki/cyclone-phaillin
2. www.youtube.com
3. www.naiduniya.com
4. Navbharat Daily Newspaper
5. www.ehitavada.com.
6. Times news network
7. The Times of India, Raipur
8. Hindustantimes.com
9. Dainik Bhasker daily newspaper, raipur
10. Environmental Pollution – By Dr. Pradeep Kumar
11. “Impact of global warming – By Dipti Rani

■■■

DMV Journal
Annual Journal of Durga Mahavidyalaya, Raipur (C.G.)
185
ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

Status of Women and Children in Indian Society

Dr. Anita Rajpuria
Professor of Sociology
Govt. B.C.S. College, Dhamtari (CG)

The Indian woman has not yet won back the proud position she held in the early times of Indian history . She is still largely dependent on her men folk and legal and formal equality can become meaningful only when backed by everyday social equality. To achieve this status is an uphill task. Women continue to remain the greatest untapped resource of India. Their legal equality is counter balanced with social prejudice, due to their own lack of effective opportunity for employment. The husband is God to his wife. He is her Lord. The wife's position relative to that of her husband is lower in the family. The position of the husband is so superior that, however badly he behaves, he cannot be dethroned form his position. The early marriage of girls is performed to ensure their virginity.

Society does not criticize parents for not marrying off their sons, but is very critical of Parents who do not marry off their daughters. The parents are expected to give more education to their sons than to their daughters because the son is being prepared for earning a livelihood and the daughter for getting married. There is blatant discrimination against the female sex. For example, the wife should give her husband better food than she has herself. It is not proper for the wife to marry a second time after the death of her husband. Men are more intelligent then women. These are findings of a study conducted by Amar Kumar Singh. His stratified random sample of 1150 school students was drawn in Ranchi district of Bihar. The strata were based on religion, caste ethnicity, grade / age and sex. Likert type attitude scales were administered to measure religion. Despite the heterogeneity of the sample sub groups, there was a definite dimension of prejudice in his order. Caste , sex and class prejudices. This is corroborated by Gourmet Dhillon in her study of 'Changing Role of Rural Women, that improved economic status of a family may not necessarily result either in improved status of working of a family may not necessary result either in improved status of working conditions of a house wife.

Since the early days of the freedom struggle, Gandhiji emphasized that for the realization of the objectives of Swaraj, women must be given equal status with men. His call for women's emancipation drew a group of dedicated women with discipline and high ideals. In spite of this a vast number of women in Indian society continue to suffer from fear and anxiety, slavery, insecurity and loneliness. It is believed that the role of a women, with her delicate frame and nimble fingers is created for special jobs within her home. Since the job of child bearing and childrearing in her reserved, she is never intended to go out of her kitchen only to contribute to the family kitty. Until recent years, members of the upper strata of society had been following the shastric diction that woman was never free and independent She was dependent either on her father or son who provided her physical protection and social security, and she in turn, provided them with comfort at home. She was, therefore, never considered capable of economic benefit to the family which depended on the mate bread winners. Her world was confined to the four walls of the house in which she found herself daughter, wife or mother.

The participation of women in national affairs and other democratic institutions is not only minimal but pathetic. They constitute 48 percent of the electorate in the country. But their representation in the Parliament has never increased above 3 to 4 percent. In the legislative assemblies and other institutions their representation varies from 6 to 10 percent. This peaks volumes for our society in which

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

48 percent of its citizens have minimal or no say in the formulation of policies, in development and implementation of programmes.

The plight of the large number of children in India is miserable. The children continue to be neglect, deprived and suffer at the hands of the adult world. Countries prefer to spend a large sum of money on armaments rather than in developing the future generation. This is despite the fact that children are considered supreme assets of any nation. The terrifying and dehumanizing poverty make it extremely difficult for parents living below the poverty line to adequately feed, clothe and provided reasonable shelter to their children. The poverty of their families compels them to work to support their families as well as fend for themselves. The questions which may be asked in such situation are. Should the parents produce children whom they cannot support? What should the role of government and voluntary agencies be to elevate the families from their misery?

There are about 50 percent of families below the poverty line. No woman can remain a helpless witness to the mounting difficulties of her family. Most women therefore work for economic resons and require a full salary. In some cases women take up jobs to augment the family income,. In a few cases, jobs are taken up for leading a life of independence, of self actualization or of escaping boredom. Some women have to take up jobs to help save enough for their dowry. Even if a working woman can not bring dowry, her employment is considered enough compensation in certain cases where such women are preferred for marriages. The employers prefer woman because they have to pay less wages to hem and they are easy to discipline.

Child labour is essentially a problem of poor and destitute families, where parents cannot afford education of their children. It is not uncommon to find, especially in urban areas that families below the poverty line depend on the earning of their children. Moreover , in the majority of cased, their is no liability on the part of the employer to give any service benefit such as provident fund, gratuity, leave, promotion annual increment.

The recent economic survey shows that the total l number of persons employed in the public and the private sector taken together rose from 19.7 million to 22.9 million during the 7 year period 1975 to 1981. The annual average growth in employment in the organized sector thus workouts at less than 0.5 million per year or about 2.3 percent compared to the total population of 700 million, the present rate of growth in employment cannot but be considered a drop in the ocean. The number of job seekers registered with the employment exchanges in he country stood at an astronomical level of 19 million in August 1982 as against 17.22 million a year ago. This shows an increase of 1.8 million in the short span of a single year. The average monthly placements actually fell from 41,800 during the 9 month period, January - September, 1981 to 38,700 during the same period in 1982.

This situation can be transformed with massive political will and organized power of the people. Women of the developing world fight these battles despited many personal risks to maintain their families. In many cases they become not only the supplementers of family income but main providers. But in return they are other beaten and battered by their husbands. Menfolk look to their women working with suspicion. They subject then to all kinds of enquire so know the reasons for their coming late from the work place. The climate at the work place is not congenial either. Many men are eager to take advantage of women on the slightest available opportunity. The young girls are made to lose their virginity and married women their chastity, In all cultures these are the most prized possession of woman. They are fired if they refuse the

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

advances of heir employers. They are paid much less wages than men. They have no security of jobs and no facilities like creaches at their work place to take care of children. They are required to leave tham at home to be taken care of by the older children, Working women are required to work at both fronts: work and home. There are very few Indian husbands who extend a helping hand to their wives in domestic or household chores.

The children of working men and women are entrusted with the roles and responsibilities of the adults. They do not get adequate opportunities to develop their potentialities. This is equally true of the children who have to become earning members. In both these cases the children become more mature than children of the same age group.

This earlier maturity may be manifest as an unusual ability to understand adult perspectives and to relate to adults, or as a sense of reliance more appropriate to an older child, or as an unusual responsibleness . The average number of children in a family in the lower castes is 5-6 . The working parents have to share the responsibility with the older children to maintain the functioning of the household . In such cases the girls are very rarely sent to the schools. Those who are studying are immediately withdrawn from the school to look after the younger ones. The number of employed children increases in the age of the children, but in Bombay it was found that the 10 year in the life of a slum child represented a water shed, signifying a qualitative change from a non working to a working life. The children found their followed by work in production units. There is a definite correlation between poverty and child labour, between the school drop out rate and the increase in number of children employed. The employers with impunity violate laws meant to protect children from various hazardous jobs. The children are neither paid adequate wages nor provided healthy working conditions.

The goal to abolish child labour will remain a distant goal till we are able to provide adequate employment to adults. The children and working women till that time must be provided with working conditions conductive to their capacities, equal wages and protected form exploitation. There is an instituionalised preference for boys' in all the countries of the world. The women are party to this preference to the neglect of girls.

The patrilineal system, the inheritance of property and performance of rituals make it obligatory to have a boy in Hindu society. Women have to fight great battles to make attitudinal and institutional changes to revolutionalize the percent preferential system. The autocratic and military governments are no exception to this rule In china, women of a small village in central China, in defiance of strict population control policies have publicly declared that they would rather die than give up their chance to have a baby. These women said that as mothers of girls they lacked status and were targets of maltreatment by husband, in laws and their own parents. We will never give up trying to have a boy and why we would rather die then be content with a girl. The situation in India is not much different. The loan giving authorities have not recognised the right of women to own buffaloes despite the fact that buffaloes are generally cared for by the women.

A majority of women and children are employed in the unorganised sector. Their earnings are so inadequate that they are not able to meet their needs to feed the members of their families. The question of providing a nutritive diet for themselves continues to elude them. Education becomes the first casualty for these children. They are unable to exercise any choice in selecting a vocation or a career for themselves. They have to accept whatever is available to them. The rate wage is generally dictated by the employers as cheap and unskilled labour is available in plenty.

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

The role of agencies working with this group is primarily to understand the problem in its entire perspective and evolve appropriate methods and strategies to help the people to overcome it. The supportive role of these agencies should develop necessary strength and power to enable the people to fight the battles on all the fronts. However, the role these agencies play should only be that of a catalyst. They should not assume the role of saviours or charity to the people and make them dependent. They must switch their role from that of relief to development. They should play very effectively their educative and organizational role.

The women and children should be protected from exploitation and from the conditions of work which would endanger their physical and mental development. They should be ensured of safety and health in their work place. They should be kept out from night work and should not be allowed to carry heavy loads. They should be ensured of limited working hours and sufficient weekly rest periods and holidays and their physical conditions and fitness for the job should be cared for. This would mean adequate provision in national legislation, Children should also have access to educational opportunities to a least get the basic education and hopefully, the basic vocational education which would help their potentially to develop and make them into capable workers and responsible citizens. Where there are schools the working hours should be so regulated that the children are able to attend classes. Where there are no schools, provision for informal education should be made.

It would be essential and necessary to bring about a proper recognition of the needs of children among parents and the general public. Parents should be educated to restrict the number of children to a manageable size. The problem of working women and children cannot be eradicated merely through legislation. Along with it, the conditions which often complex this group to take to work must be eliminated. Despite a number of laws safeguarding the interests of children, a conservative recent estimate in Delhi reveals this at there are no less than 60,006 children who are employed in small cating houses. The laws are often violated by unscrupulous employers. Most of the employers do not even pay minimum wages to the children as prescribed by the law Even raids failed to bring the erring employers to book. On the other hand, those who suffer are child employees who are summarily dismissed . The ultimate aim of all agencies government and non government should be to elevate the working women and children from the poverty line and to help them have a decent standard living.

The fraud played in the name of poverty on the women and the children should not be allowed to continue any more. Policies, programmes and priorities should be made to meet the needs of this special group . The role of women should not be considered inferior and girls should not be neglected at any cost. Their involvement in decision making is extemely necessary. Several instances can be cited where women are not involved in any decision making process of village development. It was claimed that in one village there was total participation of all the adults in the village development . But on enquiry it was found that women were now here. It is a pity that half of the village population has not voice in the development of the village.

He introduction and adoption of any innovation or new practice will require the following five stages (i) idea, (ii) awareness, (iii) trial and error, (iv) evaluation, (v) adoption or acceptance. These stages will depend on the following nine factors. (i) credibility of the organization of the worker, (ii) content of programme of message; (iii) channel or administrative structure, (iv) participation of politicians and bureaucrats in development, (v) understanding and involvement of peer groups, (vi) ultimate decision to

ISSN - 0976 - 3007
Volume - 6
Number - 1
December - 2013

plan and implement rests on the people (vii) awareness of resources, (viii) accessibility and availability of resources; and (ix) adoption or acceptance. The stages and the factors may not follow the sequential order given above The dynamism of the community and of the worker will decide the procedure to be followed to reach the ultimate goal.

The fundamental role of voluntary organisations is to fight against the triad of conspiracy of problems responsible for pushing women and children to this degrading situation. They should work to (a) raise the status of women (b) to increase the intake of food by women, and (c) to remove the phenomenal illiteracy amongst the women. This would automatically lead to the improvement of the lot of children.

REFERENCES

1. Third world sociology, edited Vani Prabhakar, Vol-2, Dominant Publications and Distributors, New Delhi, 3001.
2. Department of Social Welfare, 1975, India Govt. Eduction and Social Welfare Ministry Committee on the Status of Women in India (171), Towards Equality, Government of India.
3. Desai, A.R. 1976. Social Background of Indian Nationalism, Bombay: Popular Prakashan.
4. Desai Neera, 1957, Women in Modern India, Bombay, Vora and Co.
5. De Souza, Alfred (ed.) 1975, Women in Contemporary India: Tradutional Images and Change Roles, New Delhi, Manohar.
6. Gupta Giri Raj, 1976, Family and Social Change in Modern Indian , New Delhi, Vilkas.
7. Hate Chandrakala, 1930." The Socio -Economic Condition of Educated Women in Bombay City," Study Prepared in the University School of Economics and Sociology Bombay. 1946. The Social Position of Hindu Women, Unpublished Ph.D. Thesis, University School of Economics and Sociology.